रचनाकारों से विशेष निवेदन

कृपया प्रकाशनार्थ पांडुलिपि तैयार करते समय संपादन की सुविधा के लिए निम्नलिखित निर्देशों का पालन करें :

1) (क) विभिक्तियों को शब्दों से अलग लिखा जाये - उदाहरण - 'राम ने', 'मेज पर', 'लड़कों को' (ख) सर्वनामों की सभी विभक्तियों को मिलाकर लिखा जाये -

उदाहरण - 'उसने'. 'मैंने', 'उनका', 'हमसे

(ग) जिन सर्वनामों के अंत में 'ही' अथवा 'ई' लगा हो उनकी विभक्तियों को अलग लिखा जाये -

2) पूर्वकालिक क्रियाओं के 'कर' को अलग लिखा जाये - **उदाहरण** - ' जा कर', 'आ कर', अन्यथा 'कर' मिलाकर लिखें।

3) संयुक्त क्रियाओं में दोनों अंशों को अलग-अलग लिखा जाये -

उदाहरण - 'आ गया', 'चल पड़ा', 'हो सका'

4) जिन भूतकालिक कृदंत क्रियाओं अथवा विशेषणों का अंत 'या' से होता है, उनके स्त्रीलिंग और बहुवचन रूपों में 'य' का ही प्रयोग किया जाये - उदाहरण - 'गया, गयी, गये', 'नया, नयी, नये', 'आया, आयी, आये','लाया, लायी, लाये', 'पाया, पायी, पाये', 'खाया, खायी, खाये', 'किया, किये' आदि।

5) 'हुआ' जैसी जिन क्रियाओं के अंत में 'आ' है उनके स्त्रीलिंग 'हुई' व बहुवचन 'हुए' के अनुसार होना चाहिए।

6) 'लिये/लिए' : लिये को लिया का बहुवचन रूप मानें और 'लिए' को विभिक्ति चिन्ह। 'चाहिये/चाहिए' : 'चाहिए' ही लिखा जाये।

7) एसा/ऐसा'' : 'ऐसा' लिखा जाये । 'दिखाई/दिखायी' : 'दिखाई' संज्ञा रूप मानें और 'दिखायी' भूतकालिक क्रिया (स्त्रीलिंग) । उदाहरण - ' सांप दिखाई पड़ा', 'मैंने उसे पुस्तक दिखायी' इसी प्रकार 'पढ़ाई' और 'पढ़ायी' में भी अंतर करें।

8) आदरार्थ आज्ञा रूपों में संभावनार्थक क्रियाओं में 'ए' ही लिखा जाये -

उदाहरण - 'आइए', 'खाइए', 'जाइए', 'समझिए, 'कीजिए' 'रखिए' आदि।

9) अनुस्वार और आनुनासिक ध्वनियां : 'संयुक्त व्यंजन' की अनुनासिक ध्वनि को 'अनुस्वार' के द्वारा दर्शाया जाना चाहिए -

वर्ग का प्रत्येक पंचम वर्ण यथा, ङ.('क' वर्ग), ञ ('च' वर्ग), ण ('ट' वर्ग), म ('प' वर्ग) तथा न ('त' वर्ग) अनुनासिक ध्वनियां हैं।

अनुस्वार स्थापन का नियम इस प्रकार है : जिस किसी अक्षर के आगे यदि उसी वर्ग की अनुनासिक ध्वनि है तो उसे अनुस्वार (बिंदी) से बदला जा सकता है :

उदाहरण - कंगन, अंक, व्यंजन, रंजन, ठंडा, डंडा, पंडित, कंपन, पंप, बंद, परंतु, किंतु, मृगांक, दंडित, संबंध, अंत आदि।

इस नियम का प्रयोग ध्यानपूर्वक करना चाहिए, अन्यथा अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है। जन्म, मान्य, समन्वय, सम्मति आदि शब्द वैसे ही रहेंगे।

10) एकवचन से बहुवचन - 'या' से 'ये', 'ए' नहीं। जैसे, रुपया - रुपये, हंसिया-हंसिये (हंसिए आदारार्थ आज्ञा रूप होगा)

11) संस्कृत के जो शब्द हिंदी में तत्सम रूप से प्रचलित हैं, उनमें 'य' का व्यवहार उचित हैं. जैसे, अस्थायी, बाजपेयी,उत्तरदायी आदि। इन्हें अस्थाई, बाजपेई , उत्तरदाई लिखना न तो व्याकरण सम्मत है और न व्यावहारिक।

12)चंद्र-बिंदु का प्रयोग - छपाई की सुविधा के लिए चंद्र-बिंदु की जगह अनुस्वार का प्रयोग किया जाये। जैसे अंधा, आंख, अंगना, चांद, मां, पहुंचना, हां आदि।

13) संख्या को अरैबिक (अंग्रेजी) में लिखा जाये - **1, 2,3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10**

◆ 'वैज्ञानिक' में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है. ◆ 'वैज्ञानिक' में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं.वि.सा.परिषद के पास सुरक्षित हैं. ◆ 'वैज्ञानिक' एवं हिं.वि.सा.परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा. ◆ 'वैज्ञानिक' में प्रकाशित सामग्री का आप बिना अनुमति लिए उपयोग कर सकते हैं. परंतु इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य होगा कि अमुक सामग्री *'वैज्ञानिक' से साभार.*

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, भा.प.अ.केंद्र, ट्रांबे, मुंबई-85 के लिए **डॉ.जगदीश चंद्र व्यास,** द्वारा संपादित एवं **श्री विपुल सेन** द्वारा निर्भय पथिक प्रकाशन (फोन : 24153784, 32201260) में मुद्रित व प्रकाशित ।

जनवरी-दिसंबर 2013 वर्ष-45 अंक-1-4

मूल्य ₹20

वैज्ञानिक

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

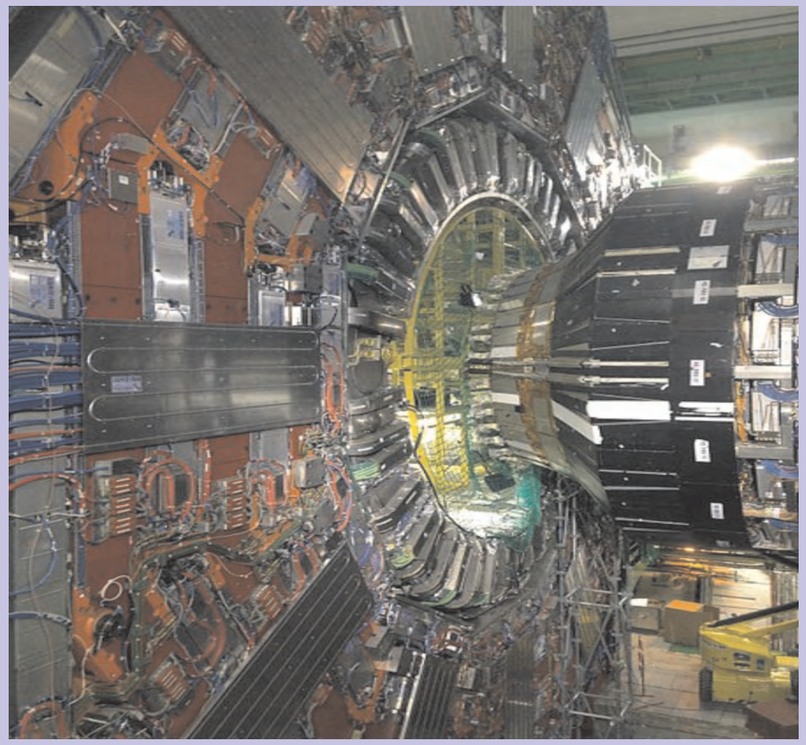

दुनिया का सबसे बड़ी सुपर कंडक्टर - म्यूओनपरिनालिका (CMS)

वैज्ञानिक

वर्ष - 45 अंक - 1–4

जनवरी- दिसंबर 2013

♦ संपादन मंडल ♦

डॉ. जगदीश चंद्र व्यास

(संयोजक)

श्री जयप्रकाश त्रिपाठी

श्री कुलवंत सिंह

श्री कवींद्र पाठक

श्री प्रवीण दुबे

♦ व्यवस्थापन मंडल ♦

श्री विपुल सेन

(संयोजक)

श्री पी.एम.गांधी

श्री डी.एन.सिंह

श्री संजय गोस्वामी

श्री राजेश कुमार मिश्र

श्री राजेश कुमार

सदस्यता शुल्क

आजीवन

व्यक्तिगत	संस्थागत
400 रु.	1000 रू.

वार्षिक

व्यक्तिगत	संस्थागत
50 रु.	100 रू.

कार्यालय

'वैज्ञानिक', हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेंट्रल कांप्लेक्स,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
मुंबई-400 085

सभी पद अवैतनिक हैं

अनुक्रमणिका

संपादकीय -4

लेख

1. ...मिल ही गया (आवरण पृष्ठ के चित्र से संबंधित आलेख)
   डॉ विनीता सिंघल - 6
2. पर्यावरण प्रदूषण के संदर्भ में क्रोमियम
   डॉ.दिनेश मणि - 16
3. चुंबकीय अनुनाद चित्रण : कार्यप्रणाली एवं चिकित्सा में उपयोगिता
   डॉ.यशवंत नाईक - 19
4. स्टेम सैल थेरेपी
   डॉ (श्रीमती) प्रेम भार्गव - 30
5. पिघलती बर्फ
   डॉ.अचिन्त्य - 35
6. संतुलित भोजन से करें कैंसर बचाव
   डॉ. हेमलता पन्त - 38
7. प्राकृतिक प्रकोप एवं मानवीय त्रुटियों की देन - केदारनाथ त्रासदी
   डॉ. अखिलेश्वर कुमार द्विवेदी, अभिषेक गोयल एवं डॉ. गणेश कुमार पाठक - 44
8. आर्यभट्ट : भारत के महान गणितज्ञ,खगोलशास्त्री और मौलिक विचारक
   डॉ.जगदीश चन्द्र व्यास - 51

विज्ञान प्रश्न मालिका - 2 - 60

विज्ञान समाचार

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र से : - 61

1. एकीकृत पर्यावरणीय विकिरण मापन तथा स्वचालित मौसम केंद्र (ERM-AWS) का विकास
2. द्रव प्रहस्तन रोबोट का विकास - **एस.के.पाठक**

टिप्पणियां

1. वर्ष 2013 के नोबेल पुरस्कार - **डॉ.विनीता सिंघल** - 64
2. चल दूरभाष - **डॉ.(श्रीमती) प्रेम भार्गव** - 67
3. उत्तम स्वास्थ्य की अचूक दवा है संपूर्ण निद्रा - **अनिल कुमार** - 70
4. बदल रहा है प्लूटो का रंग-ढंग - **शूभम देशमुख** - 71
5. बदलते दौर में हमारी कृषि नीति - **हेमलता पन्त** - 71
6. तंत्रिका विकृति (न्यूरोपैथी) - **बालकृष्ण काबरा** - 73
7. ग्लोबल वार्मिंग का कुप्रभाव - **दीनानाथ सिंह** - 74
8. मानसिक तनाव कारण और निवारण -**डॉ.देवेश कुमार गुप्ता** - 75

अन्य विज्ञान समाचार - 80

1. पृथ्वी जैसे एक ग्रह की मौजूदगी
2. मंगल ग्रह पर परीक्षण
3. पृथ्वी से परे जीवन की तलाश
4. चांद के पार पहुंचा भारत का मंगलयान
5. तारों और आकाशगंगाओं पर विवरणिका

(संकलन - संजय गोस्वामी)

बुद्धि कौशल्य (3) के प्रश्नों के समाधान -82

बुद्धि कौशल्य (4) - 84

मनोगत - 85

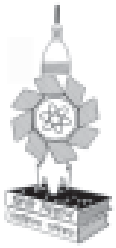

संपादकीय

वैज्ञानिक प्रगति और प्रौद्योगिक स्वावलंबन

विज्ञान और प्रौद्योगिकी में आयी प्रगति से सर्वसामान्य मानव जीवन बड़ी मात्रा में लाभान्वित हुआ है. वर्तमान समय के मानव का औसत जीवन स्तर जिन ऊंचाइयों तक पहुंचा है, उसमें वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक अनुसंधान एवं इनकी सहायता से विकसित होकर निर्मित तत्संबन्धित प्रायुक्तियों का महत्वपूर्ण स्थान है. यों शांतिपूर्ण कार्यों के लिये उपरोक्त विधाएं हर समय में महत्वपूर्ण रही हैं और समयानुसार इनकी गति अन्यान्य क्षेत्रों की प्रगति के मुकाबले औसत मान से ऊपर ही बनी रही है. यहां तक तो ठीक किन्तु कभी-कभी वैज्ञानिक / तकनीकी अन्वेषणों में आयी तेजी के प्रमुख कारणों में शत्रु-भय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध की विभीषिका भी रही है. ऐसे समय में भी विशेष बात यह रही कि युध्दादि ध्वंसक प्रकार के विशिष्ठ क्षेत्रों के अन्वेषण भी आगे जाकर मानव मात्र के लिए लाभदायक ही सिद्ध हुए हैं. उदाहरण के तौर पर नाभिकीय ऊर्जा के क्षेत्र में किये गये पिछली शताब्दी के प्रयोगों को ले सकते हैं.

जब यह आभास होने लगा कि नाभिकीय क्रियाओं से उत्पन्न ऊर्जा समान संहति (मात्रा) के रासायनिक विस्फोटकों से उत्पन्न ऊर्जा से लाखों गुणा अधिक होती है, और इस प्रकार की क्रियाओं का प्रयोग नाभिकीय प्रायुक्तियों (नाभिकीय बम, इत्यादि) को बनाने में हो सकता है (जो किसी भी युद्ध के परिणाम की दिशा को निर्णायक रूप से बदल सकती है), तो तत्कालीन द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अमेरिका में (और उसके तुरंत बाद या लगभग साथ-साथ ही अन्य देशों जर्मनी, तत्कालीन सोवियत संघ, ब्रिटेन, फ्रांस आदि में) इस विधा पर तेजी से कार्य प्रारंभ हो गए. इस अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धा में अमेरिका ने बाजी मारी और नाभिकीय प्रायुक्तियां बनाकर उनका सफल परीक्षण भी किया. यह बात अलग है कि पहले पहल बनी इस प्रकार की नाभिकीय प्रायुक्तियों की फलश्रुति हिरोशिमा और नागासाकी के महा नर-संहार के रूप में हुई, जिसने जापान समेत सभी देशों को युद्ध की विभीषिका के भयंकर परिणामों के आधार पर तत्काल युद्ध बंद करने के लिए विवश कर दिया. किन्तु बाद में इन्हीं प्रयोगों के समानान्तर आधारों पर विकसित अन्यान्य प्रक्रियाओं, प्रायुक्तियों एवं परिणामों को आधार बनाकर शांतिपूर्ण कार्यों में भी उनके तेजी से अनुप्रयोग प्रारंभ हुए. जिसके परिणाम स्वरुप रेडियो समस्थानिकों के निर्माण एवं पृथक्करण की विधियों से उपलब्ध पदार्थों का उपयोग सीधे विद्युत ऊर्जा निर्माणन (रिएक्टर प्रचालन विधि द्वारा) शुरु हुआ. इसके अलावा नाभिकीय रिएक्टरों द्वारा उत्पादित रेडियो सक्रिय समस्थानिकों की सहायता से कृषि के लिए उन्नत बीजों का विकास, चिकित्सा क्षेत्र में रोग परीक्षण एवं निदान (कैंसर आदि), उद्योगों में ठोस प्रायुक्तियों के आंतरिक दोषों के परीक्षण एवं चित्रण, औषध निर्माण तथा संसूचक इत्यादि अनेक क्षेत्रों में इनके उपयोग प्रारंभ हुए, और इस प्रकार से इन नवीन उपलब्धियों का लाभ तत्कालीन योग्य मार्गदर्शकों यथा डा.भाभा आदि के कारण भारत सहित अनेक देशों को प्राप्त हुआ.

इसी प्रकार का दूसरा उदाहरण राकेटों और उनसे संबंधित अन्य प्रायुक्तियों यथा प्रक्षेपण नियंत्रण, प्रक्षेपास्त्र इत्यादि का है, जिनका विकास पूरानी परंपरागत किस्मों के आधार पर प्रथम व द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान तेजी से हुआ. स्वाभाविक ही इनकी शुरुआत तो मारक शस्त्रों या प्रायुक्तियों को निर्दिष्ट स्थान तक पहुंचाने वाले वाहकों की तरह की ही

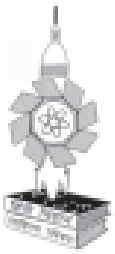

थी. किन्तु आगे जाकर इन्हीं राकेटों के शक्तिशाली संस्करणों के शांतिपूर्ण प्रयोगों ने न केवल पृथ्वी के आसपास के अंतरिक्ष में मानव निर्मित कृत्रिम उपग्रहों को स्थापित किया, बल्कि पहले तो चंद्रमा के तल पर मानव निर्मित यंत्रों को और बाद में स्वयं मानव के पद चिन्हों को चंद्र तल पर उतार देने के प्रशंसनीय उद्देश्य को भी सफल कर दिखाया. इन मानव निर्मित उपग्रहों के अनेकानेक उपयोगों में सुदूर अंतरिक्षीय खोज (यथा हबल तथा चंद्रा दूरदर्शी) के अलावा पृथ्वी पर भूमंडलीय सूचना संप्रेषण एवं संचारण, भू अन्वेषण इत्यादि महत्वपूर्ण कार्य भी हो रहे हैं, जिनसे हमें मोबाईल दूरभाष, टीवी या मौसम संबंधित जानकारी के अलावा पर्यावरण, भू सर्वेक्षण, भू संपदा और अन्यान्य उपयोगी जानकारी लगातार उपलब्ध हो रही है. हम स्वयं इस अन्तरिक्ष अभियान में सम्मिलित विश्व के अन्यान्य देशों में से एक है, जिनके अपने-अपने उपग्रह पृथ्वी या अन्य ग्रहों अथवा उपग्रहों की कक्षाओं में सुदूर तक स्थापित है. भारत में ही निर्मित आर्यभट्ट, भास्कर इत्यादि अनेक उपग्रहों के सफल अंतरिक्षीय कक्षागत स्थापन के बाद भारतीय वैज्ञानिकों ने स्वदेश में निर्मित योग्य प्रक्षेपकों की सहायता से चन्द्रयान द्वारा अपने भारतीय प्रतीक चिन्ह चन्द्रमा पर उतार दिये है, और कुछ समय पूर्व प्रक्षेपित भारत का मंगलयान इसी कड़ी का नवीनतम उदाहरण है जो इस समय मंगल ग्रह की ओर लगातार बढ़ता चला जा रहा है. लगभग इसी प्रकार रडार एवं संबंधित प्रायुक्तियों के विकास की कहानी भी है. संक्षेप में कहे तों विज्ञान के अनुसंधानों ने प्रौद्योगिकी को वर्तमान समय में इस स्तर पर ला खड़ा किया है, जहां एक मशीन (कंप्यूटर) के द्वारा अन्य मशीनी कार्यों या क्रिया-कलापों का योग्य संसूचकों के आधार पर नियंत्रण और संचालन संभव हो गया है और मनुष्य का कार्य दिशा निदेशक की तरह का रह गया है. यह बात सही है कि भारत जैसे देश में चल रही सभी प्रौद्योगिक इकाईयों तक उपरोक्त स्थिति आ जाने में कुछ समय तो लगेगा, किन्तु लगभग हर क्षेत्र में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने अनेक असाध्य समझे जानेवाले कार्यों को जिस प्रकार पूरा कर दिखाया है, वह निश्चित ही स्तुत्य कहा जा सकता है.

किन्तु, इसी प्रगति की दौड़ का एक दूसरा पक्ष भी है, जो इतना ही महत्वपूर्ण है, और जिसे ***ठीक प्रकार से समझना और आवश्यकता अनुसार स्वगति बढ़ाकर आत्मसात करना हर समय की आवश्यकता है. यह पक्ष है वैज्ञानिक विषयों और तत्सम्बन्धित प्रौद्योगिक प्रायुक्तियों की समझ को निरंतर बढ़ाते जाकर उन्हें आवश्यक गति से बिना रूके लगातार आत्मसात करते जाना. साथ ही साथ इस अर्जित ज्ञान-विज्ञान और तकनीकि विकास से योग्य प्रौद्योगिक उत्पादों का स्वदेश में व्यावसायिक निर्माण एवं व्यावहारिक रूप में वितरित करने की योग्यता को भी अर्जित करना, जो हमारे देश और समाज को स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर बनाए रखने के लिए अति-आवश्यक कदम है.*** *अन्यथा कुछ लोग, कुछ कंपनियां, या कुछ देश, ज्ञान विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रायुक्तियों पर एकाधिकार स्थापित कर, पृथ्वी के अन्य लोगों (जिसमें हम और हमारा देश भी शामिल है) को अपने अधीन करने या उनके अपने नियंत्रण में बनाये रखने की मंशा को साकार करने में फिर से प्रयत्नशील हो सकते हैं. जिसके परिणाम अत्यंत गंभीर हो सकते हैं. भारत जैसे देश के लोगों को तो यह तुरंत ही समझ में आ जाना चाहिए, क्योंकि कोई चारसौ वर्ष पूर्व एक ईस्ट इंडिया कंपनी (प्रवेश 1612 सूरत से) जो व्यापार के उद्देश्य से भारत में आयी थी, और उसके बाद इस कंपनी ने यहां आकर क्या-क्या नहीं किया. व्यापार की आड़ में घुसकर धीरे-धीरे स्वयं की फौज बनाकर 1757 के बाद से स्थानीय लोगों और राज्यों पर इस कंपनी ने अपना अधिकार जमाया, और पूरे भारत को धीरे-धीरे गुलामी की जंजीरों में जकड़ लिया. परिणाम स्वरूप हम 1947 तक ब्रिटिश गुलामी को झेलते रहे. यहां इस पूरे इतिहास को रखने की आवश्यकता नहीं है, पर इस महत्वपूर्ण पक्ष का ध्यान रखते हुए हमें समयानुकुल उपलब्ध वैज्ञानिक चेतना को हर व्यक्ति तक (उसकी योग्यता के अनुसार) पहुंचाने का कार्य तेजी से करना है. स्थानीय भाषा हिंदी या सहोदर भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही यह कार्य तेजी से किया जा सकता है, क्योंकि सर्वसामान्य व्यक्ति किसी भी नई बात को अपनी बोलचाल की भाषा में ही आसानी से समझ पाता है. स्मरण रहे, विज्ञान की समझ को बढ़ाते जाना हर समय की आवश्यकता है और यह स्थिति आगे भी बनी रहेगी. किन्तु, यह कार्य हम जितनी तेजी से करेंगे, उतनी ही तेजी से हम मुक्त एवं स्वतंत्र भारत के नागरिकों के उज्ज्वल भविष्य को फिर से साकार करने में समर्थ हो सकेंगे.*

-डॉ. जगदीश चंद्र व्यास

...मिल ही गया

डॉ विनीता सिंघल
सहसंपादक, निस्केयर, डॉ के एस कृष्णन मार्ग, पूसा कैम्पस, नई दिल्ली 110012

4 जुलाई 2012 को सारी दुनिया की निगाहें स्विट्जरलैंड स्थित यूरोपियन सेंटर फॉर न्यूक्लियर रिसर्च पर टिकी थीं. स्विट्जरलैंड और फ्रांस की सीमा पर स्थित 27 किलोमीटर लंबी एक भूमिगत सुरंग में हजारों वैज्ञानिकों की टीम वर्ष 2009 से दिन रात जिस पार्टिकल (हिग्स बोसोन) की खोज के लिए एक महाप्रयोग में जुटी थी, उसी के परिणामों की घोषणा होने वाली थी. हिग्स बोसोन वह कण है जिसे ब्रह्मांड में संहति की उत्पत्ति का सूत्र माना जा रहा है.

ब्रह्मांड की उत्पत्ति का प्रश्न आज से नहीं बल्कि आदि काल से ही मानव के मस्तिष्क में घूम रहा है. वैदिक काल में ऋषि मुनियों का यह मानना था कि इस प्रश्न का उत्तर तो शायद भगवान के पास भी नहीं है. ऋग्वेद के एक मंत्र में कुछ ऐसा ही उल्लेख किया गया है जिसमें यह जानने की जिज्ञासा प्रकट की गई है कि 'ब्रह्मांड की उत्पत्ति कैसे हुई? किसने की? लेकिन क्या इन प्रश्नों के उत्तर किसी के पास हैं? किसी ने कहा कौन जानता है या कौन कह सकता है कि यह ब्रह्मांड कहां से आया और कैसे बना?' विज्ञान के इतनी उन्नति कर लेने के बाद भी अभी तक इस विषय में हमारा ज्ञान बहुत ही सीमित है और बहुत से ऐसे रहस्य हैं जिनके बारे में हमारी जानकारी अधूरी है. अनेक खोजों के बाद भी विश्वासपूर्वक हम यह नहीं कह सकते कि ब्रह्मांड की उत्पत्ति से संबंधित सभी प्रश्न अब हल हो चुके हैं.

सितंबर 2008 से लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर पर काम कर रहे वैज्ञानिकों ने ब्रह्मांड की रहस्यमयी गुत्थियां सुलझाने, हिग्स बोसोन की उपस्थिति का पता लगाने, डार्क मैटर और श्याम विवर को समझने तथा अतिरिक्त आयामों का पता लगाने के प्रयास किए थे (कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि ब्रह्मांड के चार से भी अधिक आयाम हैं).

माना जा रहा है कि इस कण के मिलने से ब्रह्मांड के बनने और चलने की कहानी समझ में आने लगेगी और कई अनसुलझी गुत्थियां सुलझ जाएंगी.

कणों का विज्ञान और स्टैंडर्ड मॉडल

उन्नीसवीं शताब्दी में देखा गया कि हाइड्रोजन से लेकर लेड, यूरेनियम तक ढेर सारे तत्व हैं, जिनसे मिलकर हमारे चारों ओर की दुनिया बनी है. उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में जॉन डाल्टन का परमाणु सिद्धांत सामने आया. जिसके अनुसार सभी तत्व परमाणुओं से मिलकर बनते हैं और उनके गुणधर्म परमाणुओं पर ही निर्भर करते हैं. इस परमाणु को किसी भी पदार्थ का सूक्ष्मतम कण मान लिया गया. इसे ऐसे समझ सकते हैं कि मान लीजिए पदार्थ का एक टुकड़ा है. उसे तोड़ते जाएं, तोड़ते जाएं तो एक समय ऐसा आएगा जब उसे तोड़ना संभव नहीं होगा और आगे न टूट सकने वाले ये कण ही परमाणु हैं. 20 वीं सदी में पता चला कि परमाणु अविभाज्य नहीं हैं और परमाणु, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन तथा इलेक्ट्रॉन नामक कणों से मिल कर बने होते हैं. अब हम जानते हैं कि इस ब्रह्मांड में पाए जाने वाले पदार्थ की रचना कुछ खास मूल कणों से होती है और इनके बीच बलों का संप्रेषण भी कुछ विशिष्ट कणों के माध्यम से होता है. लेकिन ये मूलभूत कण हैं क्या?

प्रोटॉन एवं न्यूट्रॉन और भी छोटे कणों से बने होते हैं

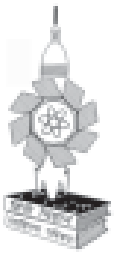

जिन्हें क्वार्क और ग्लुऑन कहते हैं. क्वार्क को मूल कण माना जाता है और इनकी कोई उपसंरचना नहीं होती. इलेक्ट्रॉन एवं न्यूट्रीनों भी मूल कण माने जाते हैं. इन्हें 'एलिमेंटरी या मूलभूत' कणों का दर्जा दिया गया. सैध्दांतिक क्वांटम भौतिकी के अनुसार कुल 18 प्रकार के मूल कण (ग्रेविटोन सहित) होते हैं जिनमें से 16 को प्रायोगिक रूप से सत्यापित किया जा चुका है.

पदार्थ की रचना करने वाले सभी मूल कणों को 'फर्मिऑन' कहते हैं तथा जिन अन्य कणों के माध्यम से इन फर्मिऑनों के बीच बलों का संप्रेषण होता हैं, उन्हें बोसोन कहते हैं. फर्मिऑनों तथा बोसोनों का वर्णन करने वाले गणितीय मॉडल को स्टैंडर्ड मॉडल कहते हैं. यह मॉडल कण भौतिकी का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है जिसके संरूपण में अनेक भौतिकविदों ने कई दशकों तक अपना योगदान दिया.

अभी तक प्राप्त जानकारी के अनुसार स्टैंडर्ड मॉडल में 6 फर्मिऑन हैं जैसे कि क्वार्क जिनसे नाभिकों में न्यूट्रॉन एवं प्रोटॉन संरचित होते हैं, तथा 6 लेप्टॉन या हल्के कण होते हैं जैसे कि इलेक्ट्रॉन जो इन नाभिकों के चारों ओर घूमते हैं. क्वार्क और इलेक्ट्रॉन वे कण हैं जिनसे द्रव्य की रचना होती है. इसके अलावा चार कणों को 'गेज बोसोन' कहा जाता हैं. ये वे कण हैं जो बलों को संचरित करते हैं और इस प्रकार फर्मिऑनों में अन्योन्य क्रिया कराते हैं. हिग्स बोसोन गेज बोसोन नहीं हैं. इसकी आवश्यकता बलों के संचरण के लिए नहीं होती. बल्कि अन्य कणों को द्रव्यमान प्रदान करने के लिए होती है. परंतु इससे पहले यह जानना जरूरी है कि स्टैंडर्ड मॉडल भौतिकविदों से लेकर प्रत्येक व्यक्ति और प्रकृति में जो कुछ भी मौजूद है, उन सबके लिए महत्वपूर्ण क्यों है.

स्टैंडर्ड मॉडल, द्रव्य के संचरक घटक कहे जाने वाले अवपरमाणुक (परमाणु के घटक) कणों के बीच की तीन मूल अन्योन्य क्रियाओं-विद्युत चुंबकीय, प्रबल नाभिकीय एवं क्षीण नाभिकीय बलों से संबंधित सिद्धांत है. लेकिन इसमें गुरुत्व बल शामिल नहीं है. स्टैंडर्ड मॉडल कभी तो नई प्रायोगिक खोजों और कभी सैद्धांतिक प्रगति के माध्यम से आगे बढ़ा है. इसके वर्तमान स्वरूप की रूपरेखा पिछली शताब्दी के सातवें दशक के बीच रची गई, जबकि क्वार्क के अस्तित्व की प्रायोगिक रूप से पुष्टि हो गई थी. उसके बाद ही बॉटम क्वार्क (1977), टॉप क्वार्क (1995), तथा टाउ न्यूट्रिनो (2000) की खोज ने स्टैंडर्ड मॉडल को और अधिक मान्य बना दिया.

सुपरसिमिट्री (विशिष्ठ-सममिति)

ब्रह्मांड में पाए जाने वाले सभी कणों को दो प्रकार के कणों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः बोसोन और फर्मिऑन. स्ट्रिंग सिद्धांत बताता है कि इन दोनों प्रकार के कणों के बीच एक प्रकार का संबंध होता हैं. जिसे सुपरसिमिट्री कहते हैं. सुपरसिमिट्री के अनुसार, प्रत्येक प्रकार के बोसोन के लिए एक फर्मिऑन होता है और प्रत्येक फर्मिऑन के लिए एक बोसोन. हालांकि अभी प्रायोगिक रूप से इन अतिरिक्त कणों को देखा नहीं जा सका है. क्योंकि ये सब कण इतने संहत या भारी हैं कि इन्हें किसी भी पुराने कण त्वरक में उत्पन्न करना संभव नहीं है.

सुपरसिमिट्री भौतिकीय समीकरणों के विशिष्ट घटकों के बीच एक विशिष्ट गणितीय संबंध है. यद्यपि इसकी खोज स्ट्रिंग सिद्धांत से अलग हुई थी लेकिन स्ट्रिंग सिद्धांत में इसको मिला देने से, स्ट्रिंग सिद्धांत 1970 के दशक के मध्य में सुपरसिमिट्रिक स्ट्रिंग सिद्धांत में बदल गया. यह अभी तक मात्र एक सैद्धांतिक धारणा है.

संभवतः प्रारंभिक ब्रह्मांड में सभी मूल कण मौजूद थे, लेकिन जैसे जैसे ब्रह्मांड ठंडा होता गया और महाविस्फोट के बाद काफी मात्रा में ऊर्जा निकली, तब ये कण भी क्रमशः निम्न ऊर्जा वाले स्तरों में गिरते चले गए जैसे कि हम आज देख रहे हैं. वैज्ञानिकों को आशा है कि सर्न में स्थापित लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर (एलएचसी) जैसे कण त्वरकों की सहायता से इनमें से कुछ उच्च ऊर्जा सुपरसिमिट्रिक कणों को देख पाना संभव होगा, जिससे स्ट्रिंग सिद्धांत के पूर्वानुमान को बल मिलेगा.

कैसे परिकल्पित हुआ हिग्स बोसोन

प्रो. हिग्स ने लगभग 40 वर्ष पहले एक नए कण होने की प्रस्तावना की थी. तब वे एडिनबरा विश्वविद्यालय में युवा सैद्धांतिक भौतिकविद थे. उन्होंने सुझाव दिया कि असल में संपूर्ण अंतरिक्ष (स्पेस) में एक क्षेत्र व्याप्त है जो हमसे अदृश्य है लेकिन सृष्टि, ब्रह्मांड की रचना तथा समय के अंत को समझने में अति महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर दे सकता है. और जो भी कण इसमें से गुजरते है, वे द्रव्यमान प्राप्त कर लेते हैं. क्वांटम भौतिकी के तरंग कण के नियम के अनुसार ऐसा किसी कण के कारण होना चाहिए. इसी क्षेत्र को हिग्स क्षेत्र तथा इस कण को हिग्स बोसोन का नाम दिया गया. इस कण की सहायता से यह स्पष्ट हो सकेगा कि वस्तुओं में द्रव्यमान क्यों होता है और स्वयं प्रकाश में द्रव्यमान क्यों नहीं होता. मूल कणों (फर्मियान) में द्रव्यमान इसलिए होता है क्योंकि वे एक अदृश्य फील्ड (हिग्स फील्ड) के साथ अंतरक्रिया करते हैं. भारी कण अधिक बल से अंतरक्रिया करते है, जबकि फोटोन (प्रकाश कण) बिल्कुल भी क्रिया

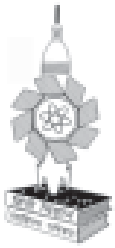

नहीं करते. हिग्स फील्ड के बिना हर कण या पिण्ड - प्रोटोन से लेकर ग्रह तक - ऐसा ही रहेगा, जैसे प्रकाश पुंज. जब हिग्स ने सर्वप्रथम अपना विचार रखा था, तब भौतिकविदों ने उन पर विश्वास नहीं किया, और कहा गया कि हिग्स केवल अपने अंदाज से इस बोसोन कण की बात कर रहे हैं. बल्कि उनके साथियों ने उन्हें बेवकूफ तक कहा था.

वास्तव में कण भौतिकी के क्षेत्र में एक बड़ा मोड़ तब आया जब 1960 और 1970 के दशक में यह अनुभव किया गया कि चार मौलिक बलों में से विद्युतचुंबकीय बल नाभिकीय प्रबल तथा नाभिकीय क्षीण बलों को एक ही सिद्धांत द्वारा बताया जा सकता है. जो क्वांटम क्रोमो गतिकी (एक प्रबल बल सिद्धांत) के साथ स्टैंडर्ड मॉडल का आधार बनाता है. किन्तु अव-परमाणुक भौतिकी की व्याख्या करने में सफल रहने के बावजूद, स्टैंडर्ड मॉडल यह नहीं बताता कि मूल कणों को द्रव्यमान कैसे मिलता है. और गुरूत्व जनित बल किस प्रकार अन्य तीन मूलभूत बलों से संबंधित है. द्रव्यमानों के उद्भव को समझने के क्रम में स्कॉटिश भौतिक विज्ञानी पीटर हिग्स ने इस मॉडल में एक सैद्धांतिक क्वांटम क्षेत्र जोड़ा जिसे हिग्स फील्ड कहा गया.

प्रो. हिग्स ने अपने दो शोध-पत्र फिजिकल रिव्यू लेटर्स पत्रिका को भेजे, जिसने इन्हें तुरंत स्वीकार कर लिया. हिग्स ने कहा कि अगर इस (हिग्स) क्षेत्र को सागर में तरंग की तरह ऊर्जित कर दिया जाए तो इससे एक नया सूक्ष्म कण प्राप्त होगा. हिग्स फील्ड से कोई कण जितना ही अधिक संपर्क करेगा, वह उतना ही अधिक द्रव्यमान प्राप्त करेगा.

माना जाता है कि यह हिग्स फील्ड सर्वत्र मौजूद है, यहां तक कि निर्वात में भी. स्टैंडर्ड मॉडल यह स्पष्ट करता है कि द्रव्य की संरचना क्या है. यह गणितीय प्रणाली से सभी मूलभूत कणों का संयोजन करता है और ये कण है इलेक्ट्रॉन, क्वार्क, फोटोन आदि. अब तक इसमें जिन ज्ञात मूलभूत बलों को शामिल किया गया है, वे हैं - इलेक्ट्रोमैग्नेटिक, शक्तिशाली तथा कमजोर नाभिकीय बल, जो परमाणु नाभिकों की संरचना करते हैं. इस मॉडल में गणित का काफी इस्तेमाल किया गया है.

स्टैंडर्ड मॉडल में हिग्स प्रक्रम का एकीकरण करने से वैज्ञानिक विभिन्न राशियों के बारे में पूर्वानुमान लगा पाए, जिनमें सबसे भारी ज्ञात मूलकण, टॉप क्वार्क का द्रव्यमान भी शामिल है. हिग्स क्रियाविधि एक ऐसे माध्यम की भांति कार्य करती है जो दिक्काल (space time) में हर जगह विद्यमान है. कण इस माध्यम से अन्योन्य क्रिया करके द्रव्यमान ग्रहण करते हैं. हिग्स बोसोन, अपना द्रव्यमान हिग्स क्षेत्र के साथ अंतःक्रिया द्वारा प्राप्त करता है जो महा विस्फोट के समय विद्यमान हिग्स क्षेत्र की किसी सार्वत्रिक सममिति की तात्क्षणिक सममिति भंजन नामक क्रियाविधि द्वारा उत्पन्न होता है. हिग्स क्षेत्र, हिग्स बोसोन का अर्थात स्वयं का द्रव्यमान नहीं बताता, बल्कि द्रव्यमानों की एक परास बताता है. इसलिए वैज्ञानिकों के लिए यह जानना संभव होगा कि उन्हें क्या देखना है और डिटेक्टर में जो वे देखेंगे, उसके आधार पर वे इस कण का द्रव्यमान परिकल्पित कर सकेंगे.

सर्न - विशालकाय अद्भुत प्रयोगशाला

हिग्स बोसोन के अस्तित्व की भविष्यवाणी और स्टैंडर्ड मॉडल की प्रस्तुति के बाद से ही भौतिकविद इस कण को प्रयोगशाला में प्राप्त करने के प्रयास कर रहे थे. परंतु वैज्ञानिकों को 1990 के दशक तक प्रतीक्षा करनी पड़ी जब तक उच्च ऊर्जा त्वरक नहीं उपलब्ध हो गए. इसकी शुरूआत 1954 में कॉन्सिल यूरोनियन पोर ला रिसेर्चे न्यूक्लिएर अर्थात यूरोपियन आर्गेनाइजेशन फॉर न्यूक्लिअर रिसर्च या सर्न की स्थापना जेनेवा में हुई. यह कण भौतिकी की एक यूरोपीय प्रयोगशाला है. इसका उद्देश्य पदार्थ के मूल संघटकों और उनके बीच के बलों की प्रकृति से संबंधित अनुसंधान को क्रियान्वित करना है. सर्न ने अपने जीवन काल में न केवल अद्भुत त्वरक विकसित किए हैं, बल्कि उनसे संबंधित अनेक उन्नत तकनीकों को भी जन्म दिया है. जैसे कि कण डिटेक्टर और कंप्युटिंग एवं सूचना प्रौद्योगिकी आदि.

प्रायोगिक कण भौतिकी का आरंभ प्रकृति की मूल निर्माण इकाईयों से संबंधित सवालों के जवाब देने के लिए कण पूंजों (बीमों) को लगभग प्रकाश की गति से चलाकर, एक दूसरे के विरूद्ध लार्ज इलेक्ट्रान-पॉजिट्रॉन यानी लेप (LEP) कोलाइडर में टकराने को बाध्य किया जाता है. लेप ने इलेक्ट्रॉन एवं पाजीट्रॉन किरण पुंजों में प्रत्येक को 100 गीगा इलेक्ट्रॉन वोल्ट (जीईवी) तक त्वरित किया और फिर उनमें सीधा संघट्य कराया. इससे 200 गीगा इलेक्ट्रॉन वोल्ट संघट्य ऊर्जा प्राप्त हुई.

लेप में किए गए प्रयोगों ने 114.4 जीईवी से कम द्रव्यमान के हिग्स कणों के अस्तित्व की संभावना को समाप्त कर दिया. इसे वर्ष 2000 में बंद कर विघटित कर दिया गया जिससे कि लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर का निर्माण किया जा सके. बाद में हिग्स कण अनुसंधान फर्मीलैब के टेवाट्रॉन में शुरू हुआ. टेवाट्रॉन, प्रोटॉन और एंटीप्रोटॉन की ऊर्जा एक ट्रिलियन (10^{12}) इलेक्ट्रॉन वोल्ट तक त्वरित कर सकता था यानी 2 टेरा इलेक्ट्रॉन वोल्ट संघट्य ऊर्जा. लेकिन टेवाट्रॉन

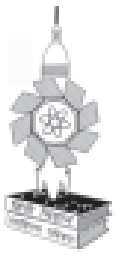

को भी 2011 में बंद कर दिया गया.

वैज्ञानिक दृष्टि से सर्न प्रयोगशाला ने उस समय नाम कमाना शुरू किया जब (80 के दशक में) कार्लो रूबिया और साइमन मीर ने नोबेल पुरस्कार जीता. उन्होंने यहीं पर प्रोटोनों और प्रति-प्रोटोनों की टक्कर से डब्ल्यू तथा जैड बोसोन कणों की खोज की थी. ये कण तथाकथित शिथिल परमाणु बल के लिए उत्तरदायी होते हैं और इन्हीं के कारण रेडियोसक्रियता का गुण अर्थात नाभिकों में स्वप्रेरित क्षरण होता है.

हिग्स-बोसोन कण की खोज का काम मार्च 2010 से सर्न में लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर (एलएचसी) में शुरू हुआ.

यह अब तक की मानव निर्मित सबसे जटिल मशीन है जिसे बनाने और चलाने में दर्जन भर देशों के हजारों भौतिक वैज्ञानिक एक दशक से लगे हुए हैं. एलएचसी अब तक का मानव निर्मित सबसे बड़ा उपकरण है जिसे एक लंबी सुरंग में, प्रोटॉनों की दो धाराओं को विपरीत दिशाओं में त्वरित करने और टकराने के लिए स्थापित किया गया है. किसी बड़ी इमारत के बराबर आकार के दो डिटेक्टर कणों को मापने के लिए लगे हैं और तीन हजार से भी ज्यादा कंप्यूटर इन घटनाओं को वास्तविक समय में विश्लेषित करेंगे. इसके सिंक्रोट्रॉन को किन्हीं भी प्रोटॉनों की विपरीत कण बीमों का 7 टेराइलेक्ट्रॉन वोल्ट (7 TeV या 1.12 माइक्रोजूल्स प्रति न्यूक्लिऑन) पर संघट्टन कराने के लिए अभिकल्पित किया गया है. लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर का निर्माण स्टैंडर्ड मॉडल की आगे की यात्रा के लिए हुआ है.

हेड्रॉन का अर्थ होता है क्वार्कों से बने ऐसे संयुक्त कण (यथा प्रोटॉन) जो परस्पर प्रबल बल से जुड़े होते हैं. कोलाइडर, मूलभूत कणों की निर्देशित बीमों वाला एक प्रकार का कण त्वरक होता हैं. जो कणों को अत्यंत उच्च गतिज ऊर्जा तक त्वरित करते हैं और उन्हें अन्य कणों को प्रभावित करने के लिए छोड़ देते हैं.

एल एच सी अति उच्च वेग और ऊर्जा पर कणों की टक्कर से उन परिस्थितियों को पुनः उत्पन्न करने की क्षमता रखती है, जो बिग बैंग के तुरन्त बाद से अस्तित्व में नहीं रहीं. यह एक प्रकार से सृष्टि की आरंभिक रचना प्रदर्शित करने वाली मशीन है, जिसे एक सैद्धांतिक भौतिकविद् प्रो. मिशिओ काकू ने 'जेनेसिस मशीन' कहा है. उनका कहना है कि यह मशीन ब्रह्मांड के उद्भव के रहस्य खोलने में हमारी सहायता करेगी. यह विशाल वैज्ञानिक उपकरण स्विट्जरलैंड और फ्रांस की सीमा के बीच के विस्तार में फैला हुआ है. और लगभग 4.33 किलोमीटर त्रिज्या की परिधि में बनी 27 किलोमीटर लंबी गोलाकार सुरंग में स्थापित किया गया है. एलएचसी से संबंधित उपकरण जैसे कि कम्प्रेसर, वेन्टीलेशन उपकरण, नियंत्रक इलैक्ट्रॉनिक उपकरण और रेफ्रीजरेशन संयंत्र आदि पृथ्वी की सतह पर स्थित इमारतों में लगाए गए हैं.

इस महत्वाकांक्षी प्रयोग के लिए अंतिम कार्य मार्च 2007 में किया गया, जब 100 टन का विशाल व्हील गहरी सुरंग में सफलतापूर्वक उतारा गया. यह चार विशाल डिटेक्टरों में से अंतिम था, जिसे सबसे शक्तिशाली कण एक्सिलरेटर मशीन से जोड़ा गया. लार्ज हेड्रॉन कोलॉइडर बनाने पर लगभग 4.75 अरब अमेरिकी डॉलर का खर्च आया है. इस विशालकाय उपकरण को चलाने के लिए कंप्यूटिंग पावर और बिजली का खर्च ही लगभग 28.6 करोड़ अमेरिकी डॉलर और 23.5 करोड़ डॉलर क्रमशः है. हर साल सर्न में होने वाले प्रयोगों पर लगभग 55 लाख अमेरिकी डॉलर खर्च होते हैं जो इन प्रयोगों पर होने वाले कुल खर्च का मात्र 20 प्रतिशत है.

स्विट्जरलैंड और फ्रांस की सीमा पर बनी इस भूमिगत प्रयोगशाला में इस कण की खोज के लिए वैज्ञानिकों की दो अलग अलग टीमें अनुसंधान कर रही हैं, जिनमें से एक टीम उनके कण डिटेक्टर के नाम पर 'एटलस' और दूसरी टीम 'कॉम्पैक्ट म्युऑन सॉलेनाइड' अर्थात सीएमएस कहलाती है. एटलस टीम में फेबिओला गियानोटी के नेतृत्व में दुनिया भर के 38 विभिन्न देशों के 176 संस्थानों के तीन हजार भौतिक विज्ञानी और हजारों शोध छात्र तथा सीएमएस में जो इंकेनडेला के नेतृत्व में 2100 वैज्ञानिक इस कण पर शोध कर रहे हैं. किस प्रकार इतने सारे लोग एक प्रयोग को सफलतापूर्वक अंजाम देने के लिए आपस में सामंजस्य स्थापित कर रहे हैं, यह अपने आप में एक बड़ा कदम है. सर्न से प्रकाशित होने वाले शोध पत्रों में लेखकों की कई पृष्ठों की एक लंबी सूची होती है. जिसे वर्णमाला के क्रम अनुसार व्यवस्थित किया जाता है. इस प्रकार सर्न एक उदाहरण है कि किस प्रकार विभिन्न स्तरों पर जटिल वैज्ञानिक समस्याओं के हल ढूंढने के लिए प्रयासों को संगठित किया जा सकता है. यह बड़े वैज्ञानिक उद्यमों के लिए ही नहीं, बल्कि अन्य क्षेत्रों में समन्वित प्रयासों के लिए एक मॉडल है.

विशाल सुरंग में ही परमशून्य के निकट के ताप 1.7 केल्विन पर अति चालक बेलनाकार चुंबकों से निर्देशित कर विपरीत दिशा में प्रकाश के वेग के 99.99 प्रतिशत तक त्वरित कर प्रोटानों की, प्रोटानों से टक्कर करायी गई. इन कणों की ऊर्जा हर चक्र में बढ़ती जाती है और ऊर्जा का स्तर इतना अधिक बढ़ा कि संघट्य में बंद हिग्स बोसोन कण छिटक कर बाहर आ जाए. यही कारण था कि एलएचसी में प्रयोग सफल हुआ जबकि टेवाट्रॉन में यह सफलता नहीं

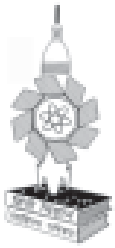

मिल पाई. अमेरिका स्थित प्रोजेक्ट का संचालन करने वाले अंतर्राष्ट्रीय भौतिकविद् दल का विश्वास है कि यह मशीन निश्चित रूप से खोजों का एक ऐसा पिटारा खोलेगी जिससे अवपरमाणु भौतिकी का अनंत किन्तु लघु कणों का संसार आलोकित हो जाएगा.

एलएचसी निर्माण कार्य में विश्व के 10 हजार वैज्ञानिकों का योगदान है, जिनमें भारत के वैज्ञानिक भी शामिल है.

... आखिर मिल ही गया

सर्न की तरफ से नए सूक्ष्म कण को खोजने की घोषणा करने से पहले वैज्ञानिकों की दोनों टीमों एटलस और सीएमएस ने अपनी प्रारंभिक रिपोर्ट के परिणामों को सबके सामने रखा. हालांकि उन्होंने यह स्पष्ट तौर पर नहीं कहा कि नया सूक्ष्म कण हिग्स बोसान ही है या नहीं. लेकिन सर्न ने इस खोज को सिग्मा 5 श्रेणी में स्थान दिया है. सीएमएस के प्रवक्ता जो इनकेंडेला तथा एटलस की प्रवक्ता फेबियोला जियानॉटी ने बताया कि दोनों ही प्रयोगों में एक नया कण 125-126 गीगाइलैक्ट्रॉन वोल्ट के द्रव्यमान क्षेत्र में 5 सिग्मा स्तरों की यथार्थता के साथ देखा गया. हालांकि दोनों प्रयोग पूरी तरह एक दूसरे से अलग अलग किए गए. इसके अतिरिक्त दोनों प्रयोगों के परिणाम प्रायोगिक सीमा के अंदर परस्पर सुसंगत हैं. हाल ही में प्रकाशित सीएमएस प्रकाशन ने 5 सिग्मा सूचित किया. जबकि एटलस टीम के प्रकाशन में 5.9 सिग्मा परिणाम अभिलिखित किया गया.

5 सिग्मा परिणाम एक वर्गीकरण है. 3 सिग्मा परिणाम, जिसे कण भौतिकी में एक प्रबल प्रमाण समझा जाता है, सामान्य घटना वितरण वक्र का 99.73 प्रतिशत बनाता है. 5 सिग्मा परिणाम, जो नए कण की खोज के लिए मानक है, सामान्य घटना व्याप्ति वक्र का 99.99994 प्रतिशत बनाता है.

हालांकि वैज्ञानिक अभी पूरी तरह इन आंकड़ों के प्रति आश्वस्त नहीं हैं और यह सुनिश्चित करने के लिए और अधिक आंकड़ों की आवश्यकता है, जिससे यह सिद्ध हो सके कि इस नए कण के सभी गुण स्टैंडर्ड मॉडल के हिग्स बोसोन के गुणों से मिलते हैं या फिर कुछ गुण इससे नहीं मिलते और स्टैंडर्ड मॉडल के भीतर ही नए सिद्धांत खोजने की जरूरत है.

इस खोज को वैज्ञानिकों ने चांद पर मानव के कदम रखने जैसा अभूतपूर्व कदम बताया है. विश्व के सबसे बड़े परमाणु शोध केंद्र के दलों में से एक सीएमएस के प्रमुख जो इनकेंडेला ने वैज्ञानिकों से भरे सर्न केंद्र में कहा कि उपलब्ध आंकड़े इस खोज के लिए जरूरी निश्चितता के स्तर तक पहुंच गए हैं. वहीं एटलस से जुड़ी भौतिकविज्ञानी फेबिओला ने भी कहा कि उनकी टीम भी इसी नतीजे पर पहुंची है.

सर्न की ओर से जारी बयान में कहा गया कि नया सूक्ष्म कण शोध संयंत्र लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर के 125 और 126 जीईवी क्षेत्र में स्थित है. यह एक अद्‌भुत क्षण था जब अब तक मिले सभी बोसोन कणों में से सबसे भारी बोसोन को खोज निकाला गया. सर्न के शोध निदेशक सेर्गियो बर्तालुकी ने हिग्स बोसोन के अस्तित्व की दिशा में प्रबल संकेत मिलने पर गहरी खुशी जाहिर करते हुए कहा कि यह काफी चुनौती भरा काम था.

निश्चित रूप से, हिग्स बोसोन का सीधा संसूचन कर पाना संभव नहीं है क्योंकि इसका अस्तित्व काल अत्यंत अल्प, केवल 10^{-22} सेकेंड, होता है. यह बोसॉन बहुत जल्दी विभिन्न प्रक्रमों द्वारा अन्य अवपरमाणुक कणों में क्षयित हो जाता है. जैसे कि हिग्स बोसोन, $H \rightarrow$ दो फोटॉनों, दो टाउ लेप्टॉनों, $H \rightarrow ZZ$ या अन्य कणों में क्षयित हो सकता है, किन्तु इन क्षय प्रक्रमों के अध्ययन द्वारा ही हिग्स बोसोन की पहचान की जा सकती है.

हिग्स कण का संकेत एक विशाल पृष्ठभूमि में घटनाओं की अतिरिक्त संख्या के रूप में दिखाई पड़ता है. इस प्रकार की अतिरिक्त संख्या को चिन्हित किया जाता है, जो सांख्यिकी की दृष्टि से सार्थक होती है. सांख्यिकीय सार्थकता को मानक (सिग्मा) के पदों में मापा जाता है. परिणामी संकेतों को पृष्ठभूमि से 5 सिग्मा स्तर से ऊपर होना चाहिए.

एटलस टीम ने अपने प्रयास एक दूसरे के पूरक दो रास्तों पर केंद्रित किएः हिग्स कण या तो दो फोटॉनों में या चार लेप्टॉनों में क्षयित हो सकते हैं. इन दोनों ही मार्गों से शानदार द्रव्यमान विभेदन (रिजोल्यूशन) परिणाम प्राप्त होते हैं. दोनों ही विधियों में लगभग उसी स्थान पर सांख्यिकी रूप से सार्थक सांकेतिक अधिकता देखी गई जिसमें कण का द्रव्यमान लगभग 126 गीगाइलैक्ट्रॉन वोल्ट था. इन (और अन्य विधियों के सांख्यिकीय संयोजनों से प्राप्त) सिग्नलों की सार्थकता 5 सिग्मा पाई गई.

सीएमएस टीम में हिग्स बोसोन के पांच प्रमुख क्षय पथों का अध्ययन किया गया. तीन पथों से बोसोन कण युग्म (g g,Z Z, अथवा WW) प्राप्त होते हैं, और दो पथों से फर्मीऑन कण युग्म (b b g g, Z Z, अथवा WW) प्राप्त होते हैं. जहां γ फोटॉन को निरूपित करता है, Z एवं WW क्षीण अन्योन्य क्रियाओं के वाहक बल को सूचित करते हैं, b एक बॉटम क्वार्क तथा t एक टॉउ लेप्टॉन को संकेत चिन्ह है. gg, ZZ, एवं WW पथ लगभग 125 गीगाइलैक्ट्रान वोल्ट के हिग्स बोसोन की तलाश के प्रति सुग्राही है और ये सभी bb एवं tt पथों की तुलना में अधिक सुग्राही हैं.

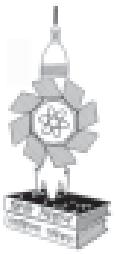

सीएमएस के आंकड़ों में लगभग 125 गीगाइलैक्ट्रॉन वोल्ट द्रव्यमान के लिए, 5 सिग्मा सांख्यिकीय सार्थकता के साथ घटनाओं का अतिरेक देखने में आया. दो अंतिम अवस्थाओं में सर्वोत्तम द्रव्यमान विभेदन के साथ सबसे अधिक पक्का प्रमाण मिला हैः पहला दो फोटॉनों की अंतिम अवस्था के लिए और दूसरा आवेशित लेप्टॉन (इलेक्ट्रॉन एवं म्युऑन) युग्मों की अंतिम अवस्था के लिए. इसकी व्याख्या एक ऐसे कण के उत्पन्न होने के रूप में की गई जो पहले कभी नहीं देखा गया था और जिसका द्रव्यमान लगभग 125 गीगाइलैक्ट्रॉन वोल्ट था. सांख्यिकीय और प्रयोगगत अनिश्चितताओं की सीमा में विभिन्न अनुसंधान पथों से प्राप्त परिणाम स्टैंडर्ड मॉडल के हिग्स बोसोन के लिए अपेक्षित परिणामों से मिलते हैं.

यह सच है कि हिग्स बोसोन को इन प्रयोगों में देखा जाना एक बहुत कठिन एवं जटिल प्रक्रिया है, क्योंकि हिग्स बोसोन सिर्फ 10^{-22} सेकेंड तक ही अपने मूल रूप में रहता है और तुरंत ही अन्य घटक कणों में विलीन हो जाता है. स्टैंडर्ड मॉडल के अनुसार हिग्स बोसोन का क्षय होना उसके द्रव्यमान पर निर्भर करता है. चूंकि यह स्टैंडर्ड मॉडल में वर्णित सभी भारी मूल कणों के साथ अन्योन्य क्रिया कर विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा क्षयित हो सकता है. एक तरीका यह है कि यह कण फर्मिऑन-प्रति फर्मिऑन युग्म में टूट सकता है. सामान्य नियम के अनुसार हिग्स बोसोन हल्के फर्मियोन के स्थान पर भारी फर्मिऑन में क्षयित होता है क्योंकि फर्मिऑन का द्रव्यमान, हिग्स के साथ इसकी अन्योन्य क्रिया की शक्ति के समानुपाती होता है. एक दूसरी संभावना यह है कि यह भारी गेज बोसोन में टूट जाए. वहीं द्रव्यमानरहित गेज बोसोन में टूटने की संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता.

सीएमएस प्रयोगों में प्रोटॉन-प्रोटॉन (हेड्रॉन-हेड्रॉन) के टकराव से उत्पन्न हिग्स बोसोन एवं इसके क्षय होने की प्रक्रिया एवं इसकी विश्वसनीयता पर कण भौतिकी के वैज्ञानिकों के बीच एक नई बहस का दौर शुरू होने की भी पूर्ण संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता. वैसे सर्न के वैज्ञानिकों को अगले कुछ महीनों में यह भी देखना होगा कि वे जिसे हिग्स-बोसोन मान रहे हैं, वे वास्तव में वही कण है या नहीं. यदि ऐसा नहीं हुआ तो वैज्ञानिकों को अपनी व्याख्या के लिए कोई नया मॉडल गढ़ना होगा. इसके लिए स्टैंडर्ड मॉडल यह भी कहता है कि हमें ज्ञात पदार्थ के परमाणु जिन मूल कणों के बने हैं, उन सब के ठीक विपरीत विद्युत आवेश वाले प्रतिमूलकण भी ब्रह्मांड में होने चाहिए. अब हिग्स-बोसोन का प्रतिमूल कण कौन है, कौन जाने. वैसे प्रयोगशाला में अन्य कणों के मूल कण तो ज्ञात किये जा चुके हैं. लेकिन हिग्स बोसोन का प्रतिमूलकण क्या होगा अभी इस पर खोज होनी बाकी हैं.

भारत द्वारा दिया गया तकनीकी सहयोग

उपकरण	संख्या
50 हजार लीटर तरल नाइट्रोजन टैंक	2
सुपरकंडक्टिंग करेक्टर चुंबक सेक्टपोल, एमसीएस	1146
डिकापोल एंड ऑक्टोपोल एमसीडीओ	616
प्रीसिशन मैग्नेट पोजीशनिंग सिस्टम जैक्स	7080
क्वेंच हीटर प्रोटेक्शन सिस्टम	5500
इंटीग्रेशन ऑफ क्यूएचपीएस	6200
इलैक्ट्रॉनिक्स फॉर सर्किट ब्रेकर ऑफ एनर्जी	70
एक्सट्रैक्शन सिस्टम लोकल प्रोटैक्शन यूनिट्स	1435

महाप्रयोग में शामिल भारतीय संस्थान और विश्वविद्यालय

राजा रमन्ना सेंटर फॉर एडवांस टेक्नोलॉजी,	इंदौर
परिवर्तित ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र,	कोलकाता
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,	मुंबई
इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र,	कलपक्कम
भौतिक संस्थान,	भुवनेश्वर
साहा परमाणु भौतिक संस्थान,	कोलकाता
बोस संस्थान,	कोलकाता
दिल्ली विश्वविद्यालय,	दिल्ली
राजस्थान विश्वविद्यालय,	जयपुर
पंजाब विश्वविद्यालय,	चंडीगढ़
जम्मू विश्वविद्यालय,	जम्मू
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,	अलीगढ़
गुवाहाटी विश्वविद्यालय,	गुवाहाटी
विश्व भारती विश्वविद्यालय	
आई.आई.टी.	मुंबई
परमाणु ऊर्जा विभाग,	भारत सरकार
इलेक्ट्रॉनिक्स कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लि.	

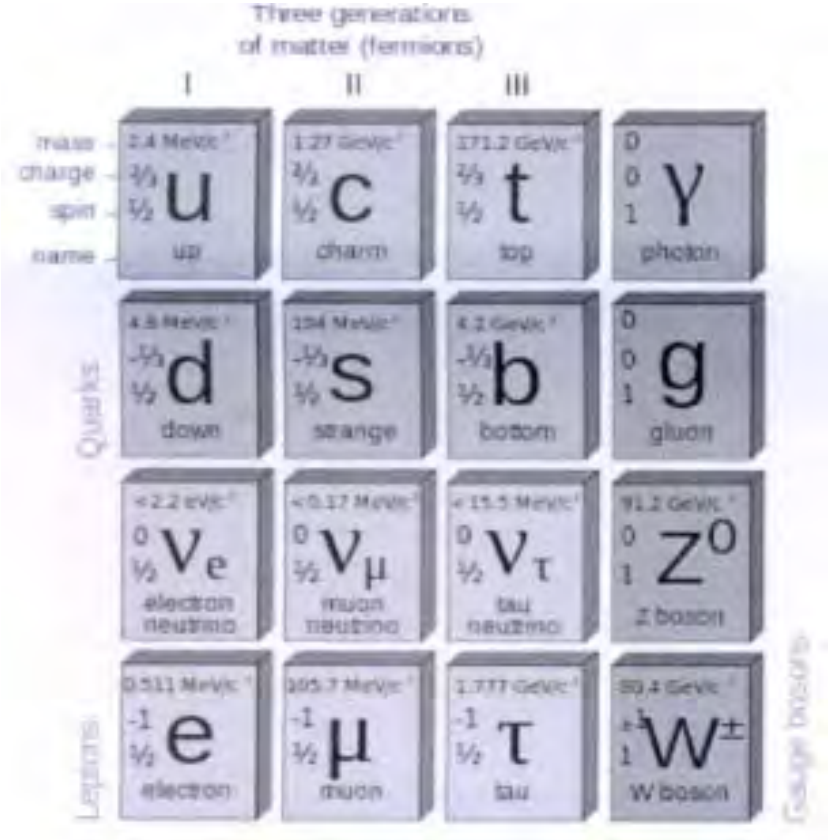

स्टैंडर्ड मॉडल के कणों का विवरण

एटलस टीम द्वारा 2012 में रिकॉर्ड किया गया चार इलेक्ट्रानों में हिग्स क्षय

पीटर हिग्स और सत्येंद्रनाथ बोस : हिग्स बोसोन जिनकी देन है

इस वृत्ताकार सुरंग में एलएचसी स्थापित है जो 27 किलोमीटर लंबी है

एलएचसी का मार्ग दर्शाता स्विस-फ्रेंच सीमा का एक हवाई दृश्य

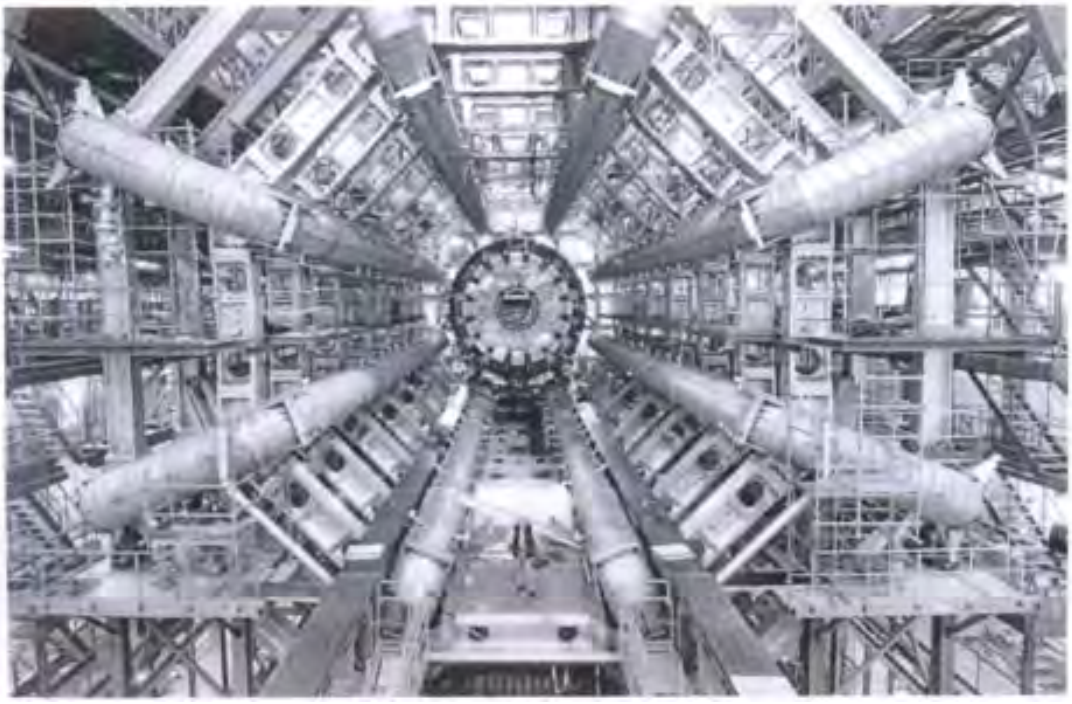

लार्ज हेड्रॉन कोलाइडर का भीतरी भाग

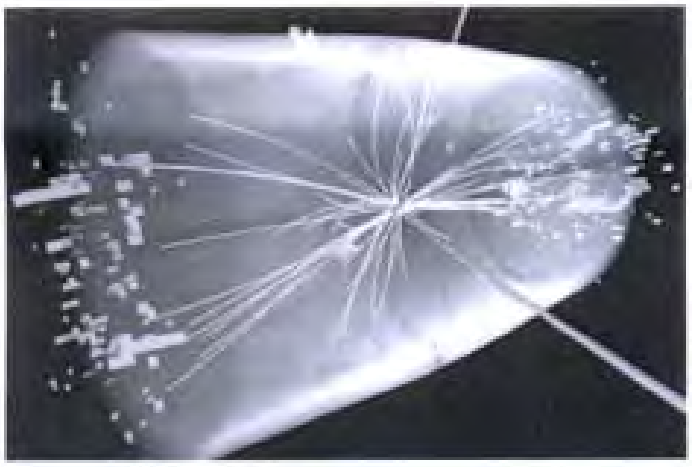

सीएमएस डिटेक्टर पर रिकॉर्ड की गई घटना जिसमें हिग्स-बोसोन, अन्य बोसोन में क्षयित हुये

2012 में 8 सीएमएस से रिकॉर्ड की गई घटना जो स्टैंडर्ड मॉडल हिग्स बोसोन के फोटॉनों के एक युग्म में क्षय से अपेक्षित लक्षणों को दिखाती है.

हिग्स बोसोन कण की खोज के समय सर्न में प्रोटॉन-प्रोटॉन के बीच संघट्य का चित्र

पर्यावरण प्रदूषण के संदर्भ में क्रोमियम

डॉ.दिनेश मणि
पूर्व संपादक, 'विज्ञान' मासिक, 35/3, जवाहर लाल नेहरू रोड, जार्ज टाउन, इलाहाबाद-2

पर्यावरण प्रदूषण के संदर्भ में अनेक भारी धातुएं चर्चा का विषय बनी हुई हैं. इनमें से एक है क्रोमियम. क्रोमियम अनेक ऑक्सीकृत अवस्थाओं में पाया जाता है किन्तु Cr(III) एवं Cr(VI) पर्यावरण में भी पाया जाता है. पर्यावरण में क्रोमियम का व्यवहार इसकी ऑक्सीकरण अवस्था के कारण है.Cr(VI) अवस्था यौगिक मृदा/जल में चलायमान हैं तथा विभिन्न प्रकार के जीवों के लिए विषैला हैं.Cr(VI) यौगिक अत्यधिक ऑक्सीकारक तथा अत्यधिक घुलनशील हैं, जबकि त्रिसंयोजी क्रोमियम उदासीन पीएच पर अक्रिय अवक्षेप बनाते हैं. त्रिसंयोजी क्रोमियम मृदा/जल में स्थिर रूप में साम्यावस्था में पाए जाते हैं.

क्रोमियम की खोज वैक्वेलिन तथा क्लेप्राथ ने की. इसका मुख्य खनिज क्रोमाइट ($FeCr_2O_4$(VI)) है और इसी से लगभग सब आवश्यक क्रोमियम प्राप्त होता है. अन्य अधिक दुर्लभ खनिज क्रोकाआइट (Chrocoite, $PbCrO_4$) मेलानोक्रोआईट Melano chroite क्रोम-ओकर (Chrome-Ochre) इत्यादि हैं. यह बहुमूल्य पत्थरों (जो इसके कारण रंगीन होते हैं) उल्का पिण्डों (Meteorites) तथा जीवों की राख में भी अल्प मात्रा में मिलता है.

इस धातु को प्राप्त करने की विधियों में क्रोमियम के ऑक्साइड का उपयोग होता है इसके ऑक्साइड को 1500^{0}C पर गर्म कर शुद्ध की हुई सूखी हाइड्रोजन गैस प्रवाहित करने से इसका अवकरण होता है. ऐल्युमीनियम धातु के चूर्ण के उपयोग से धातु प्राप्त करने की गोल्डश्मिट (Goldschmidt) की थर्माइट विधि अति उत्तम है. क्रोमिक ऑक्साइड और ऐल्युमीनियम चूर्ण का मिश्रण, बेरियम परॉक्साइड तथा ऐल्युमीनियम अथवा मैग्नीशियम के फ्यूज से प्रज्वलित करने पर ऊष्माक्षेपी (exothermic) क्रिया होती है, जिसमें क्रोमियम धातु पिघली हुई अवस्था में प्राप्त होती है.

व्यावसायिक मात्रा में क्रोमियम इसी थर्माइट विधि द्वारा अथवा विद्युतभट्टी में सिलिकन द्वारा, ऑक्साइड के अवकरण से प्राप्त होता है. क्रोमियम के लवण के विद्युतविश्लेषण से प्राप्त अमलगम को गरम करने पर शुद्ध क्रोमियम मिलता है. क्रोमियम तथा लोहे की एक उपयोगी मिश्र धातु फेरोक्रोम सीधे क्रोम आयरनस्टोन को कार्बन के साथ विद्युतभट्टी में गरम कर बनाई जाती है, जो अधिकतर क्रोमइस्पात बनाने में प्रयुक्त होती है.

क्रोमियम नीली आभायुक्त चमकदार सफेद रंग की कठोर धातु है. इस पर अत्यन्त चमकदार पालिश होती है. इस धातु का आपेक्षित घनत्व 7.1 है. इसका द्रवणांक 1900 ^{0}C तथा क्वथनॉक 2200 ^{0}C है. शुद्ध क्रोमियम धातु प्राप्त करने की कठिनाई के कारण वैज्ञानिकों को अनेक विभिन्न प्रयोगों में इसके भिन्न भिन्न भौतिक मान (Physical values) प्राप्त हुए हैं. इस धातु में सामान्यतया हाइड्रोजन की बड़ी मात्रा शोषित रहती है. गरम करने पर अनीम केंद्रित धन जाल (face-centred cubic lattice) संरचनावाला क्रोमियम प्राप्त होता है.

विशुद्ध क्रोमियम रासायनिक वस्तुओं के प्रति साधारणतया निष्क्रिय है. इसी कारण इस धातु की बनी अथवा पालिश की हुई वस्तुओं में चमक बनी रहती हैं. उच्च ताप पर नमक के अम्ल, गंधक तथा हाइड्रोजन सल्फाइड के वाष्प से क्रिया होती है. हाइड्रोक्लोरिक, अथवा गंधक के अम्ल में यह घुल जाता है. यह क्रिया गरम करने, अथवा धातु में अशुद्धियां रहने से तीव्र होती है. ऑक्सि-हाइड्रोजन

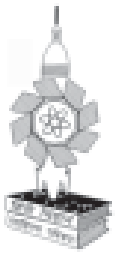

के लौ में गरम करने पर चिनगारी निकलने के साथ यह धातु जलती है तथा क्रोमियम का ऑक्साइड बनता है. क्लोरीन अथवा ब्रोमीन, नाइट्रिक, क्रोमिक या क्लोरिक अम्ल, पोटैशियम परमैंगनेट, फेरिक क्लोराइड के घोल अथवा ऑक्सीजन में यह निश्चेष्ट (passive) हो जाता है. गरम करने अथवा ध्रुवण (Cathodic polarisation) द्वारा यह धातु कुछ अम्लों के प्रति पुनः सक्रिय (activc) किया जा सकता है. सतह को खरोचने पर अनावृत्त सतह पर क्रिया पुनः संभव होती है.

बहुत सी धातुओं से मिलाने पर क्रोमियम की कई मिश्रित धातुएं बनती है. जस्ता, ऐल्युमिनियम तथा ऐन्टिमनी से प्राप्त मिश्र धातुएं भंगुर (brittle) होती हैं. निकेल, कोबाल्ट, प्लैटिनम, लोहा और कार्बन से मिश्रित क्रोमियम की धातुओं में लोह-क्रोमियम श्रेणी की अनेक प्रकार की धातुएं, विशेष गुण होने के कारण, विविध कार्यों में अधिक उपयोगी होती हैं. क्रोमियम की उपस्थिति से लोहे तथा इस्पात में अधिक कठोरता, तनाव, प्रत्यास्थता (elastieity) तथा उत्कृष्ट विन्यास (fine texture) प्राप्त होता है. क्रोमियम तथा उच्च कार्बन के ऐसे ही इस्पात से बियरिंग के छर्रे (balls) शंकु (cones) बेलन बियरिंग (roller bearing) तथा दलने और पेरनेवाली (Crushing) मशीनें बनाई जाती हैं. अन्य प्रकार के इस्पात में भी क्रोमियम मिलाने से दृढ़ता (toughness) तथा कठोरता बढ़ जाती है. क्रोम स्टील से विशेष प्रकार की रेती बनती है. 11-14 फीसदी क्रोमियम तथा 0.3-0.4 कार्बन से बने स्टेनलेस स्टील (Stainless Steel) छुरी कांटे (Cutlery) बनाने में प्रयुक्त होते हैं. रासायनिक उपकरणों के लिए प्रयुक्त स्टेनलेस स्टील में 8-18 प्रतिशत क्रोमियम, 8 प्रतिशत निकेल अथवा 4 प्रतिशत मॅगनीज रहता है. अम्ल तथा कास्टिक क्षार की क्रिया के प्रति यह अवरोधक है. निकेल तथा क्रोमियम से निर्मित विद्युत अवरोधक तार साधारण विद्युत चूल्हों में प्रयुक्त होता है.

क्रोम्स तथा क्रोमिक ऑक्साइड (CrO) क्षारीय हैं और अम्ल से लवण बनाते हैं. इनमें क्रोमियम की संयोजकता क्रमशः दो तथा तीन रहती है. क्रोमिक ऑक्साइड तथा क्रोमिक एनहाइड्राइड क्षारों से क्रमशः क्रोमाइट तथा क्रोमेट एवं डाइक्रोमेट लवण बनते हैं. इनके अतिरिक्त क्रोमियम डाइऑक्साइड (CrO_2) भी है. क्रोमियम अमलगम पर शोरे के तनु अम्ल की क्रिया से काला क्रोम्स ऑक्साइड प्राप्त होता है. सीधे धातु के ऑक्सीकरण से अथवा क्रोमिक हाइड्रॉक्साइड या कुछ क्रोमेट के उष्मा-विघटन से क्रोमिक ऑक्साइड बनता है. चीनी मिट्टी के बर्तन, अथवा दूसरी वस्तुएं रंगने और चित्रकला तथा रंग-लेपन में प्रयुक्त होने वाले तरह तरह से स्थायी हरे रंग बनाने में यह काम आता है. विभिन्न प्रकार के उद्योगों यथा इलेक्ट्रोप्लेटिंग, चर्म उद्योगों, स्टेनलेस स्टील तथा रंजक उद्योगों से निकले अपशिष्ट पदार्थ के रूप में क्रोमियम मृदा जल में पहुंचकर उसे प्रदूषित करता है और दीर्घकाल तक स्थायी रूप से विद्यमान रहता है. पौधों एवं जीवों के द्वारा यह उदगृहीत किया जाता है.

पर्यावरणीय दृष्टि से षष्ठ संयोजी Cr (VI) ही महत्वपूर्ण प्रदूषक है. अकार्बनिक इलेक्ट्रॉन प्रदाता यथा-आयरन (Fr^{2+}) सल्फर (S^{2-}) तथा जैव उपचारों यथा कार्बनिक पदार्थ के प्रयोग से Cr(VI) का अवकरण Cr(III) में हो जाता है. Cr(III) ऑक्साइड तथा हाइड्रॉक्साइड के रूप में अवच्छेदित हो जाता है और अनेक सम्मिश्र (कॉम्पलेक्स) बनाता है. Cr(VI) का Cr(III) में अवकरण के परिणामस्वरूप अभिक्रियात्मक मध्य उत्पाद (reactive intermediate) बनते हैं. Cr(VI) युक्त यौगिकों की कोशिका विषाक्तता, जीन विषाक्तता तथा कैंसरकारकता में योगदान करते हैं. क्रोमियम के मनुष्यों में पहुंचने के गैर व्यावसायिक स्रोतों में मुख्य रुप से खाद्य पदार्थ यथा सब्जियाँ तथा मछलियां इत्यादि सम्मिलित हैं.

किन्तु ठीक इसके विपरीत कुछ क्रोमियम लवण यथा-क्रोमियम पॉलीनिकोटिनेक्ट, क्रोमियम क्लोराइड तथा क्रोमियम पिकोलिनेट (Picolinate) सूक्ष्ममात्रिक पोषक तत्व तथा पोषकतत्व पूरक के रूप में मनुष्यों तथा पशुओं में अनेक स्वास्थ्य लाभों हेतु प्रदर्शित हुए हैं.

क्रॉम्स लवण धातु तथा अम्ल की क्रिया अथवा क्रोमिक लवण के अवकरण से प्राप्त होते हैं. एनहाइड्राइड्स क्रोम्स लवणों का रंग अम्ल व जलीय घोल में नीला होता है. सामान्यतया इनका सरलता से ऑक्सीकरण होने के कारण ये शक्तिशाली अवकारक यौगिक हैं. कुछ कार्बनिक यौगिकों के अवकरण के लिए भी क्रोम्स क्लोराइड का उपयोग होता है. क्लोरीन लवण अधिक स्थायी होते हैं. गरम की हुई धातु, अथवा क्रोमिक ऑक्साइड और कार्बन के मिश्रण पर क़्लोरीन प्रवाहित करने से क्रोमिक क्लोराइड बनता है. ब्रोमाइड और आयोडाइड भी गरम क्रोमियम पर इन हेलोजनों की क्रिया से प्राप्त होते हैं. ये पानी से मिलकर हाइड्रेट बनाते हैं.

क्रोमेट तथा डाइक्रोमेट व्यावसायिक महत्व के होने के कारण अधिक मात्रा में बनाये जाते हैं. इनके बनाने में क्रोमाइड के ऑक्सीकरण की क्रिया का उपयोग होता है. इस कार्य के लिए पहले पोटैशियम नाइट्रेट का उपयोग होता था. हवा की ऑक्सीजन के उपयोग की विधि द्वारा क्रोमाइट, सोडा ऐश तथा चूने के मिश्रण को प्रतिक्षेपी (reverberatory) भट्ठी में गरम करने से सोडियम क्रोमेट बनता है. अन्य

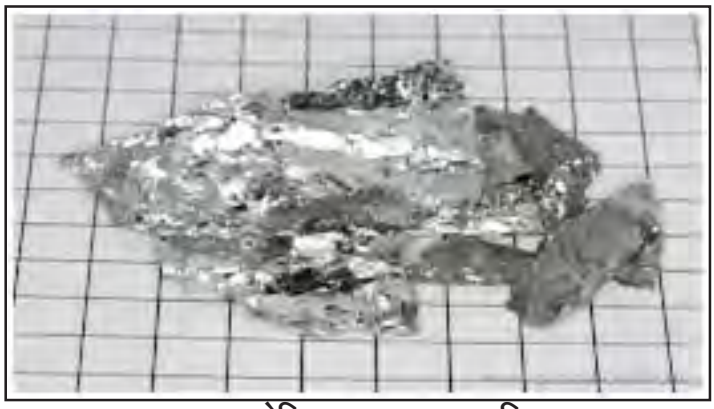

शुद्ध क्रोमियम धातु का एक चित्र.

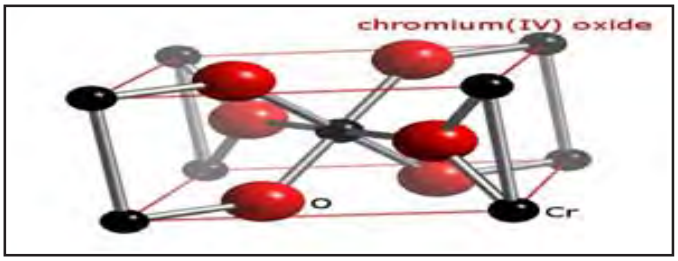

क्रोम ऑक्साइड की आण्विक संरचना का मॉडल

घुलनशील क्रोमेट, जैसे चांदी, सीसा इत्यादि के क्रोमेट धातु के लवण तथा पोटेशियम डाइक्रोमेट के घोल से द्वि-विच्छेदन (Double decomposition) द्वारा सरलता से प्राप्त होते हैं. साधारण क्रोमेट को गंधक के अम्ल के साथ संयुक्त घोल बनाकर पोटैशियम डाइक्रोमेट बनता है. यह चमक-दमक नारंगी रंग का रवेदार लवण, क्रोमियम के बहुत से यौगिक बनाने, साधारण ऑक्सीकरक वस्तु के समान तथा रासायनिक मात्रात्मक विश्लेषण में उपयोगी होता है. कपड़े की रंगीन छपाई आदि में, चमड़े व उद्योग में तथा लेड, बिस्मथ, जस्ता और बेरियम क्रोमेट से चमकीले रंग बनाने में भी इसका उपयोग होता है. डाइक्रोमेट तथा गंधक के सान्द्र अम्ल से अति ऑक्सीकारक क्रोमिक अम्ल के एनहाइड्राइड का घोल मिलता है.

क्रोमियम फेफड़ों, गेस्ट्रो टेस्टाइनल ट्रेक्ट तथा कुछ सीमा तक त्वचा के द्वारा शरीर में प्रवेश करता है. व्यावसायिक लोगों में श्वसन के द्वारा यह शरीर में पहुंचता है तथा गैर व्यावसायिक लोगों में यह भोजन तथा जल के माध्यम से शरीर में पहुंचता है. Cr(III) की अपेक्षा Cr(VI) आसानी से अवशोषित होता है.Cr(VI) का अवशोषण मौखिक रूप से अत्यंत कम होता है. अधिकांश क्रोमियम शरीर में पहुंचने पर फेफड़ों, यकृत, गुर्दों, आर.बी.सी., प्लाज्मा प्लीहा (स्प्लीन) अस्थि मज्जा में वितरित हो जाता है. रक्त में पहुंचने के पूर्व संपूर्ण Cr(VI), Cr (III) में अपचयित हो जाता है. क्रोमियम का शरीर से उत्सर्जन मुख्य रूप से गुर्दों, मूत्र तथा पित्त मल द्वारा होता है.

Cr(III) कोशिका में प्रवेश नहीं कर पाता है जबकि Cr(VI) ऋणात्मक ट्रांस्पोर्ट विधि द्वारा प्रवेश करता है. अन्तकोशिकीय Cr(VI) चयापचयी रूप Cr(III) में अपचयित हो जाता है. Cr(VI) मेक्रोमॉलीक्यूल्स यथा डी.एन.ए., आर.एन.ए., प्रोटीन तथा लिपिड के साथ अभिक्रिया नहीं करता है. Cr(III) तथा अपचयनशील माध्यमिक Cr(V) मेक्रोमोलीक्यूल्स के साथ सहसंयोजी अन्योन्य क्रियाओं हेतु सक्षम है. क्रोमियम ग्लूकोज तथा कोलस्ट्रॉल मेटाबोलिज्म में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और इस प्रकार सूक्ष्म मात्रा में यह मनुष्यों तथा जीवों के लिए आवश्यक भी है.

इंसूलिन की क्रियाशीलता बढ़ाने हेतु मानव शरीर द्वारा क्रोमियम एक आवश्यक पोषकतत्व है जिसके द्वारा शर्करा, प्रोटीन तथा वसा के उपापचय में सहायता मिलती है. यह रक्त शर्करा को नियंत्रित करता है.

Cr(VI) त्वचा तथा श्वसन नलिका हेतु अत्यधिक विषाक्त है तथा फेफड़े के कैंसर, नासिका इरीटेशन, नासिका अल्सर, हाइपरसेंसिटिविटी, डर्मेटाइटिस के लिए उत्तरदायी है. लेकिन Cr(VI) से होने वाली कोशिका विषाक्तता की क्रियाविधि अभी तक ठीक प्रकार से ज्ञात नहीं है.

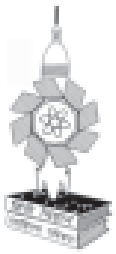

चुंबकीय अनुनाद चित्रण : कार्यप्रणाली एवं चिकित्सा में उपयोगिता

डॉ.यशवंत नाईक
उत्पाद विकास प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई-400 085

चुंबकीय अनुनाद वर्णक्रमदर्शी अणुओं के संरचनात्मक अध्ययन में अत्यंत महत्वपूर्ण उपकरण है, क्योंकि इस विधि के उपयोग से विभिन्न परमाणु व उनके बीच संयोजन तथा अणुओं की संरचना है. चुंबकीय अनुनाद प्राविधि मुख्यतः कार्बनिक पदार्थों के अध्ययन में ज्यादा प्रयुक्त होती है, जिनमें हाइड्रोजन अधिक होती है. चुंकि शरीर के विभिन्न अवयव मुख्यतः कार्बनिक पदार्थों से बने होते हैं, अतः यह विधि चिकित्सा पद्धति में, क्ष-किरण चित्रण के समान उपयोगी सिद्ध हो रही है. यहां तक की इस विधि के उपयोग से आज शरीर के विभिन्न ऊतकों तथा मस्तिष्क जैसे जटिल अंगों की कार्यप्रणाली के अध्ययन के साथ ही इनके भीतर उत्पन्न ट्युमर का अत्यंत स्पष्ट चित्र प्राप्त किया जा सकता है, जो कि क्ष-किरणों के उपयोग से अब तक संभव नहीं था.

चुंबकीय अनुनाद चित्रण (MRI) विधि का उपयोग सामान्यतः औषध विज्ञान में शरीर के आंतरिक अवयवों के उच्च गुणवत्तायुक्त चित्रण के लिए किया जाता है. इस विधि में नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद स्पेक्ट्रोस्कोपी के सिद्धांतों का उपयोग किया जाता है. नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद स्पेक्ट्रोस्कोपी का उपयोग पिछले कुछ समय से वैज्ञानिक विभिन्न अणुओं के भौतिक व रासायनिक गुणधर्मों के अध्ययन में कर रहे थे. इस विधि को नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि कहना उचित था. किंतु, सत्तर के दशक में नाभिकीय शब्द से लोग डरते थे. इसलिए इस भय को दूर करने के लिए नाभिकीय शब्द हटाकर इसे चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि कहा गया. जो एक नाभिकीय ट्रामोग्राफिक चित्रण विधि के रूप में उभरी, किंतु कम समय में ही यह विधि अत्यंत लोकप्रिय हो गयी. क्योंकि, इस विधि में चित्रण के लिए (एकक फोटान (SPECT) या पोजीट्रान उत्सर्जन टामोग्राफी (PET) के समान) किसी आंतरिक रेडियोधर्मी पदार्थ का उपयोग नहीं किया जाता है. याद रहे (SPECT) या (PET) इन दोनों विधियों में शरीर के अंदर रेडियोधर्मी पदार्थ के विसरण का मापन कर चित्र प्राप्त किया जाता है.

चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि में हमारे शरीर में विद्यमान उन परमाणुओं के (बाह्य चुंबकीय बल लगाने पर) चुंबकत्व (ससेप्टिबिलिटी) में होनेवाले परिवर्तनों के मापन से प्राप्त सूचनाओं के द्वारा ऊतक या अवयव का चित्रण होता है. हम सभी जानते हैं कि हमारे शरीर में विद्यमान सभी जैव रसायनों में हाइड्रोजन भरपूर मात्रा में पाई जाती है. हाइड्रोजन परमाणु के नाभिक की चक्रण (spin) क्वांटम संख्या (प्रचक्रण) 1/2 होती है. यह परमाणु नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद चित्रण के लिए अत्यंत उपयोगी होता है. चुंबकीय अनुनाद चित्रण में हम उन परमाणुओं के आधार पर चित्रण नहीं कर सकते जिनमें न्युट्रान तथा प्रोटान कुल संख्या समांकी हो, यानि जिनकी चक्रण क्वांटम संख्या शुन्य के

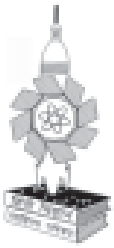

बराबर हो. पहले इस तकनीक का उपयोग उन ऊतकों के चित्रण में किया गया जिनका चित्रण क्ष-किरणों के उपयोग से संभव नहीं था. जैसे मुलायम ऊतक जिनकी औसत परमाणु संख्या कम होती है. आज इस विधि के उपयोग से कई महत्वपूर्ण चित्रण किए जा रहे हैं. जैसे शरीर में हो रही विभिन्न जैव रासायनिक क्रियाओं की गति तथा परिचलन का अध्ययन.

इस विधि के उपयोग से मस्तिष्क के भीतर हो रही विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन अथवा सामान्य तथा कर्क रोग से ग्रसित ऊतकों की अवस्था का अध्ययन व उनमें अंतर स्पष्ट करना इत्यादि, आसान हो गया है.

इस विधि में बाह्य चुंबकीय बल के प्रभाव से प्रोटोन के चुंबकत्व में आनेवाले बदलाव के आधार पर एक संसूचना उत्पन्न होती है. जिसे बाह्य संसूचक के उपयोग से टंकित कर ट्रामोग्राफिक चित्र प्राप्त किया जाता है. इस विधि में संसूचना की तीव्रता के आधार पर एक स्पेक्ट्रल वितरण का पुनर्निमाणन कलर संगणकीय प्रोग्राम की सहायता से किया जाता है, जिससे ऊतकों में टंकित किये गए हाइड्रोजन परमाणु के आसपास के रासायनिक वातावरण का संपूर्ण चित्र सामने आ जाता है. जिसके उपयोग से रोगों की जांच पड़ताल तथा निवारण का अत्यंत जटिल कार्य आसान हो जाता है.

चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि का इतिहास

चुंबकीय अनुनाद की खोज सर्वप्रथम दो वैज्ञानिकों फेलिक्स ब्लोच तथा एडवर्ड पर्सेल ने सन 1946 में की थी, और इसके लिए उन्हें सन 1952 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया. इसके बाद इस विधि का उपयोग अणुओं के भौतिक व रासायनिक गुणधर्मों के अध्ययन में किया जाने लगा. सन 1971 में डॉ. रेमण्ड दामाडियन ने यह देखा कि चुंबकीय अनुनाद चित्रण में प्रयुक्त नाभिक का चुंबकीय काल सामान्य तथा कर्करोग ग्रसित ऊतकों के लिए भिन्न होता है, जिससे इस बात को बल मिला कि नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद के सिद्धांतों का उपयोग रोगों की जांच पड़ताल के लिए भी किया जा सकता है. लगभग इसी समय में सन् 1973 में क्ष-किरणों व संगणकों की मदद से ट्रामोग्राफिक चित्रण विधि की खोज होंसफील्ड ने की. चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि के विकास के लिए यह महत्वपूर्ण खोज थी. क्ष-किरणों के उपयोग से कम घनत्व वाले इन ऊतकों का चित्रण (जोकि कम परमाणु संख्या वाले तत्व जैसे हाइड्रोजन, कार्बन, ऑक्सीजन इत्यादि के बने होते हैं) संभव न था. साथ ही इस विधि के उपयोग से मस्तिष्क के अंदर का चित्रण संभव न था. एक परखनली में रखे ऊतक का चुंबकीय अनुनाद को आधार बनाकर तथा संगणकीय ट्रामोग्राफी के उपयोग से सर्वप्रथम चित्र पौल लाउटरबर ने लिया और यह सिद्ध कर दिया कि नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद का उपयोग ऊतकों के चित्रण के लिए भी किया जा सकता है. 1971 में रिचर्ड अर्न्स्ट ने यह जाना कि चुंबकीय अनुनाद का कला तथा आवृत्ति संकेतीकरण (फलन) का फोरियर रुपांतरण कर के ऊतकों के उन्नत किस्म के चित्र लिए जा सकते हैं. इसी जानकारी के बाद यह विधि अत्यंत लोकप्रिय होती गई. शरीर के अवयवों का चित्रण इस विधि के उपयोग से सर्वप्रथम सन् 1980 में एडलस्टाईन ने किया. उस दौरान एक चित्र प्राप्त करने में लगा समय लगभग 5 मिनट का था जोकि बाद में सन् 1986 तक घटकर कुछ सेकण्ड का हो गया. इसी काल के आसपास कुछ वैज्ञानिक नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद सूक्ष्मदर्शी के विकास में भी लगे थे. जिससे इस विधि की विभेदन (कर पाने की) क्षमता 10 माइक्रोमीटर (10μm) तक पहूंच गयी. सन 1987 में प्रतिध्वनि चित्रण विधि के उपयोग से कार्यरत हृदय का चलचित्र भी लिया गया. कुछ समय बाद चार्ल्सडोमालीन ने चुंबकीय अनुनाद एंजियोग्राफी विधि का विकास कर लिया, जिससे धमनियों में बहते रक्त का चित्रण (बिना किसी बाह्य विपर्यास घटक के) भी संभव हो गया. सन् 1991 में रीचर्ड अर्न्स्ट को नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद विधि में उनके योगदान को देखते हुए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया. सन् 1992 में प्रकार्यात्मक चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि का भी विकास हो गया जिसकी सहायता से मस्तिष्क में अंदर के विभिन्न अवयवों की कार्यप्रणाली का चित्रण संभव हो गया. यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण खोज थी. हाल ही में सन् 2003 में पौल लाउटरबर तथा पीटर मेन्सफील्ड को नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद विधि को औषध विज्ञान के क्षेत्र में नये आयाम देने के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है. इस प्रकार यह तकनीक निरंतर विकसित होती जा रही है व इसका जन सामान्य को भी भरपूर लाभ मिल रहा है.

चुंबकीय अनुनाद के लिए सुग्राही परमाणु

नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद चित्रण में हम उन परमाणुओं के आधार पर चित्रण नहीं कर सकते जिनमें न्यूट्रान तथा प्रोटानों की कुल संख्या समांकी हो. किन्तु हाइड्रोजन परमाणु की प्रचक्रण क्वांटम संख्या 1/2 होती है, तथा यह हमारे शरीर में विद्यमान लगभग सभी जैव रसायनों का अभिन्न अंग भी है, अतः यह तत्व नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद चित्रण के लिए अत्यंत उपयोगी है. इसके साथ ही अन्य कई नाभिक हैं जो इस विधि में महत्व रखते हैं, जिनके गुणधर्मों की जानकारी तालिका-1 में दी गई है.

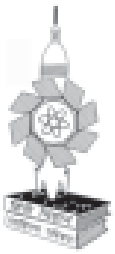

चुंबकीय अनुनाद का सिद्धांत

हम यह जानते हैं कि नाभिक अपनी धुरी पर तीव्र गति से घुमता रहता है. जिसके कारण नाभिक का कोणीय संवेग रहता है. इस कोणीय संवेग की मात्रा $(h/2\pi)$ $(I\ (I+1))^{1/2}$ होती है और यहां I नाभिक की चक्रण क्वांटम संख्या है. I की मात्रा शुन्य अथवा पूर्ण या अर्धसंख्या होती है. जिन नाभिकों के लिए I की मात्रा शुन्य होती है वे चुंबकीय अनुनाद के प्रति सुग्राही नहीं होते हैं. अतः इन नाभिकों का उपयोग चुंबकीय अनुनाद चित्रण में नहीं किया जा सकता है. प्रोट्रोन के लिए यह संख्या (1/2) के बराबर होती है. चुंकि अधिकतर जीवाणु कार्बन तथा हाईड्रोजन के बने होते हैं अतः प्रोट्रोन नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद स्पेट्रोस्कोपी के साथ ही, जैविक अनुसंधान में भी अत्यंत महत्व रखता है.

प्रोट्रोन नाभिक चुंबकीय अनुनाद को आसानी से समझा जा सकता है. अगर प्रोट्रोन, बाह्य चुंबकीय बल के प्रभाव में हो तो प्रोट्रोन का चुंबकीय संवेग या तो बाह्य चुंबकीय बल की दिशा में अथवा उसके विपरीत दिशा में झुकेगा. अगर प्रोट्रोन का चुंबकीय संवेग μ_H हो तो H तीवृता के बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में प्रोटान की ऊर्जा $\mu_H * H$ के बराबर होगी. अतः स्थिर ऊर्जा के चुंबकीय क्षेत्र में प्रोटान की इन दोनों अवस्थाओं के बीच ऊर्जांतर $2\ \mu_H H$ होगा. बाह्य विद्युत चुंबकीय विकिरण फोटान की ऊर्जा $2\ \mu_H H$ के बराबर होने पर उसका अवशोषण होगा यानि इस अवस्था में,

$$2\ \mu_H H = h\ \nu \text{---(1)}$$

और प्रोटान अपनी उत्तेजित अवस्था को प्राप्त करेंगे. जैसा कि चित्र-1 में दर्शाया गया है. अगर H स्थिर रखा जाए तथा विद्युत चुंबकीय विकिरण की आवृत्ति को धीरे-धीरे बढ़ाया जाए तो उपरोक्त समीकरण के अनुकूल आवृत्ति होने पर फोटान का अवशोषण होगा जोकि अणु के इस विशिष्ट प्रोट्रोन का संसूचक होगा. इस स्थिति की सूचना को बाह्य संसूचक की सहायता से आसानी से टंकित किया जा सकता है.

उपरोक्त समीकरण (1) में दर्शायी आवृत्ति ν को लार्मर आवृत्ति कहते हैं. जोकि प्रोट्रोन की, बाह्य चुंबकीय बल के अक्ष पर प्रचक्रण की परंपरागत आवृत्ति होती है. चित्र 1 में दी गई प्रोट्रोन की इन दो अवस्थाओं के बीच की ऊर्जा का अंतर लगभग 1 T (टेसला) के समकक्ष होता है. लार्मर आवृत्ति का M पर निर्भर होना चुंबकीय अनुनाद चित्रण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है.

हम जानते हैं, शरीर के किसी भी ऊतक में असंख्य प्रोटान होते हैं. किसी निश्चित तापमान पर चुंबकीय प्रभाव में आने के बाद चित्र-1 में दर्शाई गयी उपरोक्त दो अवस्थाओं में संतुलन के दौरान प्रोट्रोनों का वितरण बोल्ट्झमेन गुणांक $n/n_0 = \exp(-\Delta E/kT)$ के अनुसार होता है. संतुलन अवस्था में इसका एक स्थिर चुंबकत्व नियतांक M होता है जिसका परिमाण चुंबकीय संवेग प्रति इकाई आयतन के बराबर चुंबकीय बल की दिशा में होता है. वितरण का यह संतुलन स्थिर चुंबकीय बल की उपस्थिति में निश्चित समय में प्राप्त होता है, इस काल को प्रचक्रण विश्रांति काल कहते हैं. बाह्य चुंबकीय बल की अनुपस्थिति में ΔE शून्य के बराबर होगा तथा दोनों अवस्थाओं के तरंग फलन अतिव्याप्त हो जाते हैं. किंतु चुंबकीय बल के बढ़ने पर यह प्रचक्रण विश्राति काल गुजरने के बाद पुनः तापीय संतुलन की स्थिति प्राप्त कर

चित्र-1 : बाह्य चंबकीय क्षेत्र में प्रोटोन की दो अवस्थाओं के ऊर्जा स्तर व उनके बीच ऊर्जांतर.

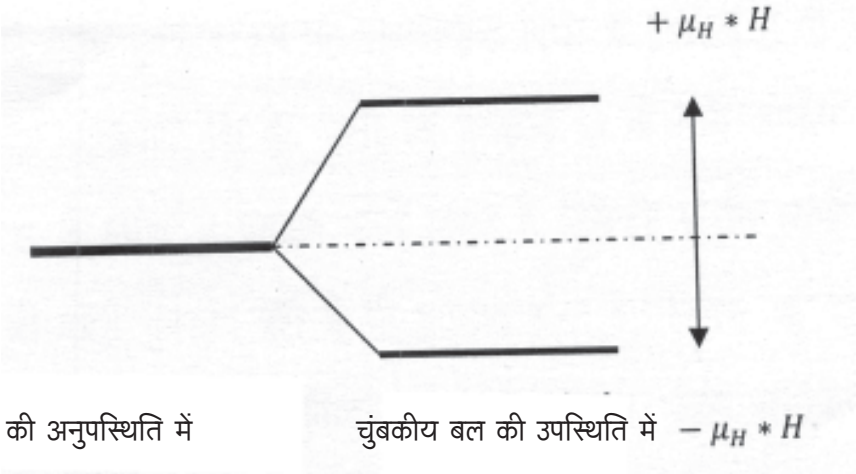

लेते हैं. ध्यान रहे यह प्रचक्रण विश्रांति काल अत्यंत सूक्ष्म होता है लगभग 1ms या ज्यादा से ज्यादा 1s. हम समझ सकते हैं कि इस संतुलन की अवस्था में जब प्रोटान के चुंबकीय संवेग M की दिशा, बाह्य चुंबकीय बल H की दिशा के समानांतर हो तो कोई संसूचना प्राप्त नहीं होती है. किंतु जब M का कोई घटक चुंबकीय बल की लंबकोणिक दिशा के समतल में हो तो यह सूचना संकेतक के रूप में प्रयुक्त होगा (चित्र-2). माना कि चुंबकत्व M के साथ कोणीय संवेग जुड़ा है. यह H के अक्ष पर आघूर्ण M x B के प्रभाव से प्रचक्रण करने लगता है जिसकी आवृत्ति लार्मर आवृत्ति के बराबर होती है. चक्रण की गति के साथ ही बाह्य चुंबकीय बल में भी बदलाव होता है, जो बाह्य परिपथ कुंडली के विद्युत चुंबकीय बल में बदलाव करता है, और यह बाह्य परिपथ कुंडली में विद्युत चुंबकीय बल उत्पन्न करता है. जो कि चुंबकीय अनुनाद का सूचक होता है. जिसे संसूचित कर लेते है. बाह्य चुंबकीय बल H के सापेक्ष में प्रोटान के चुंबकत्व की लार्मर आवृत्ति में आवश्यकतानुसार बदलाव किये जा सकते हैं. H को समय के साथ निरंतर बढ़ाकर M को एक निश्चित कोणीय गति प्रदान की जा सकती है.

माना कि M अपनी संतुलित अवस्था में है तथा यह z दिशा में स्थिर चुंबकीय बल H के प्रभाव में हैं. एक विद्युत चुंबकीय बल (rf की सहायता से) H_{ex} लगाते है जो H के लंबकोणिक दिशा में लगाया जाता है. अंतः M पर कार्यरत चुंबकीय बल दो निरंतर बदलते बलों का परिणामी बल होगा, जिसका परिमाण इन दोनो समान बलों का आधा यांनि $H_{ex}/2$ के बराबर होता है. ये चुंबकीय बल एक दुसरे के विपरीत दिशा में लार्मर आवृत्ति से घुमते हैं. अतः जब M, H के चारों ओर घुर्णन करता है तो उसका एक घटक तथा H एक ही कला में होते हैं. जिससे M पर एक स्थिर तीवृता का आघूर्ण बल लगता है और यह अपनी धुरी पर भी प्रचक्रण करने लगता है, जिसकी दिशा बाह्य चुंबकीय बल H के लंबकोणिक दिशा में होती है. यानि H की दिशा में बदलाव के साथ ही M भी एक अन्य अक्ष पर लार्मर आवृत्ति v के साथ घुमने लगता है.

यह गति जटिल है, किंतु अगर हम इसे एक ऐसे संदर्भ (फ्रेम) से देखें जो कि स्वयं लार्मर आवृत्ति के साथ घूम रही हो, जैसा कि चित्र-3 में दर्शाया गया है, तो हम पाते हैं कि M, x' अक्ष पर एक ऐसी कोणीय गति के साथ प्रचक्रण करने लगता है जो कि H_{ex} के समानुपात में होती है, तथा इसका घुर्णन कोण θ, H_{ex} एवं बाह्य चुंबकीय बल H में गुजरे समय पर निर्भर करता है, जैसा कि चित्र-3 में स्पष्ट किया गया है. सामान्यतः इस कोण को 90^0 या 180^0 पर स्थिर रख कर बाह्य rf आवृत्ति को इस प्रकार बदला जाता है कि यह M की लार्मर आवृत्ति के बराबर हो जाए. यह अवस्था चुंबकीय अनुनाद के लिए आवश्यक होती है.

ऊतक में चुने हुए क्षेत्र में प्रोटानों के चुंबकीय अनुनाद उत्तेजन (प्रेरण) की विधि : इस कार्य के लिए हम ऊतक को बाह्य चुंबकीय बल H के प्रभाव में रखते है, जो कि z की दिशा में कार्यरत है. जिसके प्रभाव से अत्यंत सूक्ष्म परिमाण

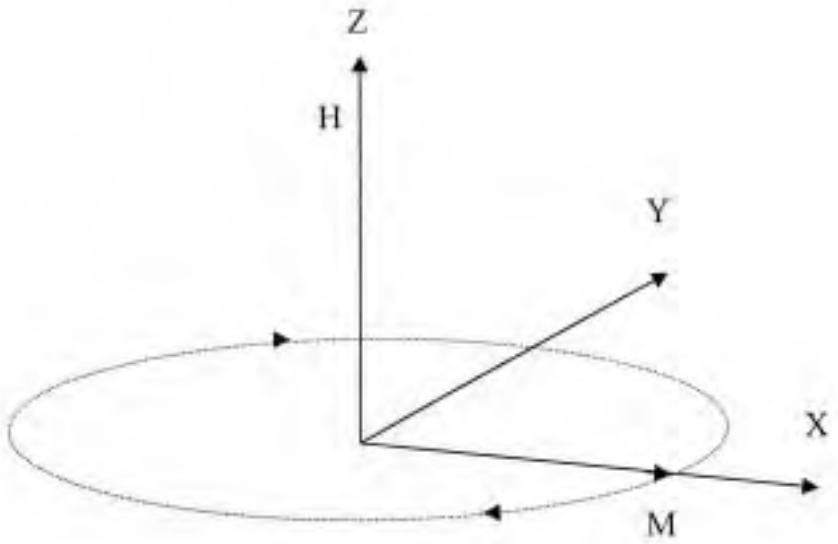

चित्र - 2 प्रोट्रोन के चुंबकत्व M का z दिशा में बाह्य चुंबकीय आघुर्ण बल के प्रभाव से xy समतल में पुरस्सरण. इस प्रकार M, लार्मर आवृत्ति के साथ प्रचक्रण करते हुए विद्युत चुंबकीय ऊर्जा का अवशोषण करता है.

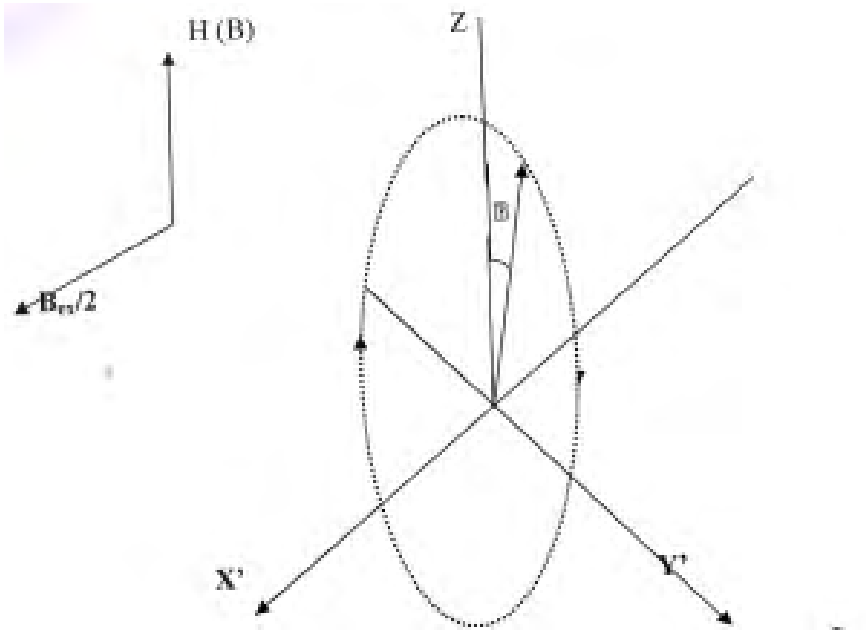

चित्र - 3 : लार्मर आवृत्ति के साथ घूम रही संदर्भ फ्रेम से M का x' अक्ष पर कोणीय प्रचक्रण का चित्रण.

का एक दुसरा चुंबकीय बल H_{ex} प्रोटान के अपने चुंबकत्व के कारण उत्पन्न होता है जो कि H के समानांतर कार्य करता है. ध्यान रहे इसकी लार्मर आवृत्ति H के साथ अपनी दिशा भी बदलती रहती है. अतः इस अवस्था में जब बाह्य रेडियो आवृत्ति बल H_{ex} अत्यंत सूक्ष्म आवृत्ति सीमा v_{ex} में लगाने से केवल वे प्रोट्रोन ही उत्तेजित होंगे जिनकी लार्मर आवृत्ति इस संकरी आवृत्ति सीमा dz में हो. चित्र-4 में इसी सिद्धांत को स्पष्ट किया गया है.

चित्र-4 में यह बताया गया है कि चुंबकीय अनुनाद के लिए बाह्य चुंबकीय बल H_{ex} तब तक लगाया जाता है जब तक कि इसके प्रभाव में आकर चुने हुए क्षेत्र के सारे प्रोटानों का चुंबकत्व 90^0 या 180^0 से न घुम जाए. संतुलन की अवस्था आने के बाद दोनों बाह्य बलों को H_{ex} तथा B_{ex} को स्थिर किया जाता है.

संसूचना का टंकन तथा उसके उपयोग से चुंबकीय अनुनाद चित्रण : चुंबकीय अनुनाद के द्वारा ग्रंथी की चुनी हुई पट्टिका के संपूर्ण चुंबकत्व M(x,y) की संसूचनाओं के आधार पर इस संपूर्ण क्षेत्र का चित्रण करने के लिए हमें प्राप्त संसूचनाओं का विस्तार से आकलन कर उस बिंदु को तलाशना होता है जहां पर अनुनाद उत्पन्न करने वाला प्रोट्रान स्थित होता है. यहां पर एक सरल उदाहरण से इसे समझाने का प्रयत्न किया गया है. इसका उपयोग आजकल संगणकीय ट्रामोग्राफी चित्रण में किया जाता है, इस विधि में प्राप्त संसूचना को कूटबद्ध करने के लिए एक स्थिर चुंबकीय बल Hz¢ चुने गये क्षेत्र में लगाते है. यह बल H के समानांतर कार्य करता है, जिसकी तीव्रता चुंबकीय बल की दिशा के साथ रेखीय अनुपात में बढ़ती है. इससे प्रोट्रानों के पुरस्सरण आवृत्ति की दिशा भी उसी अनुपात में बदलती है, जैसा कि चित्र-5 में दर्शाया गया है.

प्राप्त संसूचनाएं विभिन्न पुरस्सरण आवृत्ति की होती हैं. चित्र-5 से यह स्पष्ट होता है कि इस लार्मर आवृत्ति का एक घटक प्राप्त संसूचना का संपूर्ण समाकलन होता है, तथा यह चुंबकत्व M (x,y) की आवृत्ति की दिशा में कार्यरत होता है. अतः संपूर्ण आवृत्ति का स्पेट्रम प्राप्त करके उसका आकलन किया जाता है. इस विश्लेषण से हमें यह पता चल जाता है कि प्राप्त संसूचनाएं कई छोटे-छोटे चुंबकत्व बिंदुओं M (x,y) का रेखीय समाकलन होता है, जिनका प्रभाव चुनी हुई पट्टिका की दिशा ¢ के लंबकोणिक दिशा में होता है. अतः ¢ को निरंतर बदलकर पट्टिका के संपूर्ण प्रोट्रानों का चुंबकत्व M (x,y) प्राप्त कर लिया जाता है, जिससे संपूर्ण पट्टिका का अनुनाद चित्रण संभव हो जाता है, और ऊतक का चुंबकीय अनुनाद चित्र, संगणक की सहायता से तैयार कर लिया जाता है.

चुंबकीय अनुनाद संसूचना की तीव्रता का समय के साथ बदलाव : अगर हम मानें कि H की तीव्रता स्थिर है तथा यह उत्तेजित क्षेत्र के प्रत्येक भाग में समान रुप से असरकारक है जैसा कि चित्र-6 में दर्शाया गया है, तो यह आसानी से समझ में आता है कि इस क्षेत्र के सभी प्रोट्रान

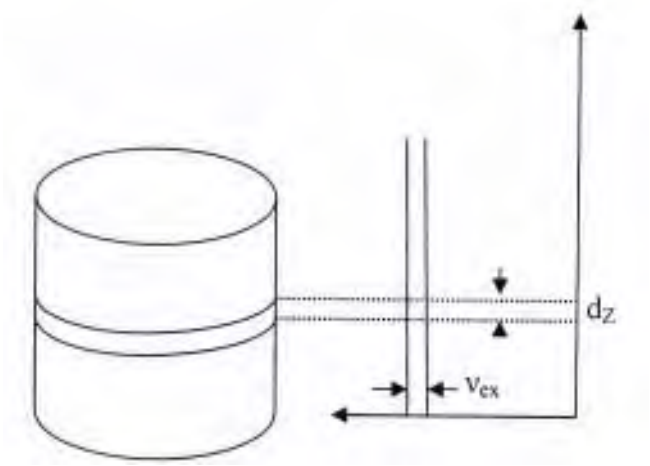

चित्र -4 : ऊतक की किसी चुनी हुई परत के प्रोट्रानों के चुंबकीय अनुनाद उत्तेजन H तथा H_{ex} के प्रभाव से उत्पन्न आघुर्ण बल H की दिशा z पर निर्भर करता है. लार्मर आवृत्ति v भी z पर निर्भर करती है, जैसा कि चित्र में दायीं ओर दर्शाया गया है. अतः वे ही प्रोट्रान जो इस संकरी सीमा dz में हों, लार्मर आवृत्ति v_{ex} की सीमा में चुंबकीय अनुनाद की स्थिति में होते हैं.

एक समान आवृत्ति के साथ पुरस्सरण करेंगे तथा उनका आघुर्ण एक दुसरे से समान कला में होगा. किंतु प्रचक्रण लेटिस श्रांति की प्रक्रिया के साथ ही यह उन्हें पुनः संतुलन की अवस्था में ले आती है, जिससे उनके चुंबकत्व की दिशा H के समानांतर हो जाती है. उत्सर्जित चुंबकीय अनुनाद संसूचना की तीव्रता समय के साथ T_1 के समानुपात में घटती अथवा बढ़ती है. किंतु ध्यान रहे कि इस दौरान प्रोट्रानों पर कार्यरत बाह्य चुंबकीय बल की तीव्रता स्थिर न होकर कुछ घटती बढ़ती रहती है. यह बदलाव मुख्यतः समय के सापेक्ष में गिरने लगता है. क्योंकि प्रोट्रान स्वयं अपनी कला की संसक्तता खोने लगते हैं, जैसा कि चित्र-6 में स्पष्ट किया गया है. इस चित्र से यह भी स्पष्ट होता है कि इस अवस्था में प्रोट्रान का x,y समतल में आघुर्ण किस प्रकार प्रभावित होता है. इस चित्रण के लिए संदर्भ फ्रेम की दिशा, H के अक्ष पर औसत आवृत्ति के साथ आघुर्ण की दिशा है (जैसा कि चित्र-3 में दर्शाया गया है). अतः इन सभी चुंबकीय बलों के औसत प्रभाव से $M_\perp$ अपने अभिलक्षणात्मक क्षय काल के साथ घटने लगता है व अंततः शुन्य हो जाता है.

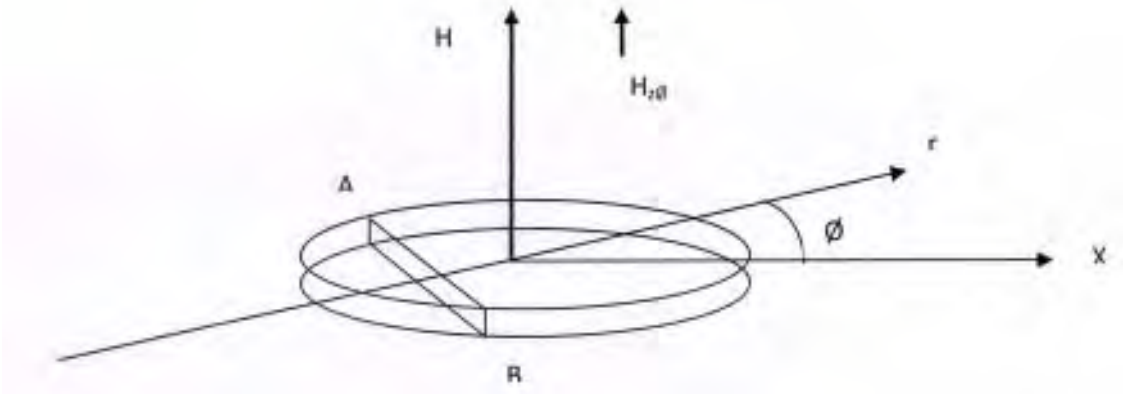

चित्र-5 : प्रोटानों के पुरस्सरण आवृत्ति की दिशा बदल तथा चुंबकीय बल Hzø लगाकर चुने गए क्षेत्र के सभी प्रोटानों का चुंबकीय अनुनाद संसूचनाओं को प्राप्त करने की क्रिया.

आंतरिक चुंबकीय बल के कारण होता है, जो कि प्रोट्रान के आस-पास के संरचनात्मक बदलाव के कारण नाभिकीय तथा परमाणु के चुंबकीय क्षेत्र को प्रभावित करता है. इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ये प्रोटान भिन्न-भिन्न आवृत्ति के साथ प्रचक्रण करते हैं, जिसके प्रभाव से $M_\perp$ का परिमाण जिसे आसानी से नापा जा सकता है. इस गुजरे समय को प्रचक्रण-प्रचक्रण अथवा अनुप्रस्थ श्रांति काल से जाना जाता है. यह T_1 की तुलना में अत्यंत कम होता है जो कि लगभग एक मिलीसेकंड हो सकता है. अतः उत्तेजन के लिए प्रयुक्त H_{ex} को इस प्रकार चुना जाय कि यह प्रोटानों को H के

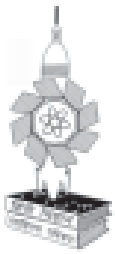

लंबकोणिक दिशा में स्थिर कर सके. ऐसा होने पर प्राप्त संसूचना का परिमाण भी अपने अभिलक्षणात्मक क्षय काल T_2 के साथ गिरने लगता है, जिसे आसानी से नापा जा सकता है.

यदि $T_2 << T_1$ हो तो यह M के प्रचक्रण-लेटिस श्रांति के कारण हुए बदलाव को z - की दिशा में पुनर्स्थापित करने में सक्षम होता है. अतः T_1 तथा T_2 का मापन महत्वपूर्ण है. अगर हम एक निश्चित समय के बाद बाह्य चुंबकीय बल H_{ex} पुनः लगाएं जिसकी तीव्रता सभी पुरस्सरण कर रहे प्रोटानों के चुंबकीय संवेग को अपने अक्ष से 180^0 से घुमाने के लिए पर्याप्त हो, तो इस संवेग की H_{ex} के अक्ष आवृत्ति में थोड़ी कमी आती है तथा कुछ समय बाद ये दोनों एक समान कला में आ जाते हैं. जैसा कि चित्र-7 में दर्शाया गया है.

प्रचक्रण गूंज का सिद्धांत. i) तीन पुरस्सरण करते प्रोट्रान (जिनका चुंबकीय संवेग एक कला में हो तथा जो एक दुसरे के विपरीत दिशा में घुर्णन कर रहे हों) का ऐसी संदर्भ फ्रेम से चित्रण जो कि H की दिशा पर लार्मर आवृत्ति के साथ प्रचक्रण कर रही हो. उत्तेजन के लिए चुंबकीय बल $H_{ex,}$ को X' की समानांतर दिशा में लगाया जाता है जोकि सभी प्रोट्रान को 180^0 कोण से घुमा सके. ii) H_{ex} को बंद कर देने पर संवेग का पुरस्सरण कुछ समय चलता है, किंतु अब वे एक दुसरे की कला में आते हैं.

अतः इसके द्वारा प्राप्त संसूचना का परिमाण बढ़ने लगता है तथा 2τ काल गुजरने के बाद इसका परिमाण शिखर पर होता है. इस काल को प्रचक्रण प्रतिध्वनि गूंज कहते हैं. इस समय के बाद यह पुनः अपने अभिलक्षणात्मक समय T_2 के साथ घटने लगता है. इस प्रकार उत्तेजन तथा इसके संसूचित करने के चक्र को निश्चित समय से निरंतर दोहराकर इस प्रकार संपूर्ण ऊतक से प्राप्त प्रोट्रानों के चुंबकीय अनुनाद क प्रचक्रण प्रतिध्वनि गूंज संसूचनाओं की तीव्रता को टंकित कर लिया जाता है. जैसा कि चित्र-8 में दर्शाया गया है, समय के साथ इसका परिमाण कम होता है. किंतु ऊर्जा हस्तांतरण भी कम होने लगता है, जिसके चलते यह पुनः अपनी संतुलन की अवस्था में आ जाते हैं, तथा इनके पुरस्सरण की गति लेटिस श्रांति काल नियतांक पर निर्भर करती है.

अतः प्राप्त संसूचना के द्वारा केवल चुंबकत्व M ही नहीं, उसके साथ श्रांति काल T_1 तथा T_2 का मापन भी संभव होता है जिनका परिमाण चित्रित किए गये ऊतक के विभिन्न पृष्ठों में भिन्न होता है. अतः इन संसूचनाओं के आधार पर चित्रण संभव है, तथा ये तीनों ऊतक के बारे में अलग-अलग सूचनाएं प्रदान करते हैं. उदाहरण के लिए कर्क रोग ग्रसित ऊतक की तुलना में सामान्य ऊतक में श्रांति काल अलग होता है जिसके आधार पर इस प्रकार के चित्रण से कर्क रोग ग्रसित ऊतक को श्रांतिकाल में हुए बदलाव के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है. ऊतकों में इस प्रकार कई अन्य बदलावों के आधार पर भी चुंबकीय अनुनाद चित्रण संभव होता है. विभिन्न संसूचनाओं व चित्रण के लिए कई प्रकार के रासायनिक यौगिक उपलब्ध हैं जोकि चुंबकीय अनुनाद चित्रण में सहायक होते हैं तथा उनका उपयोग करके

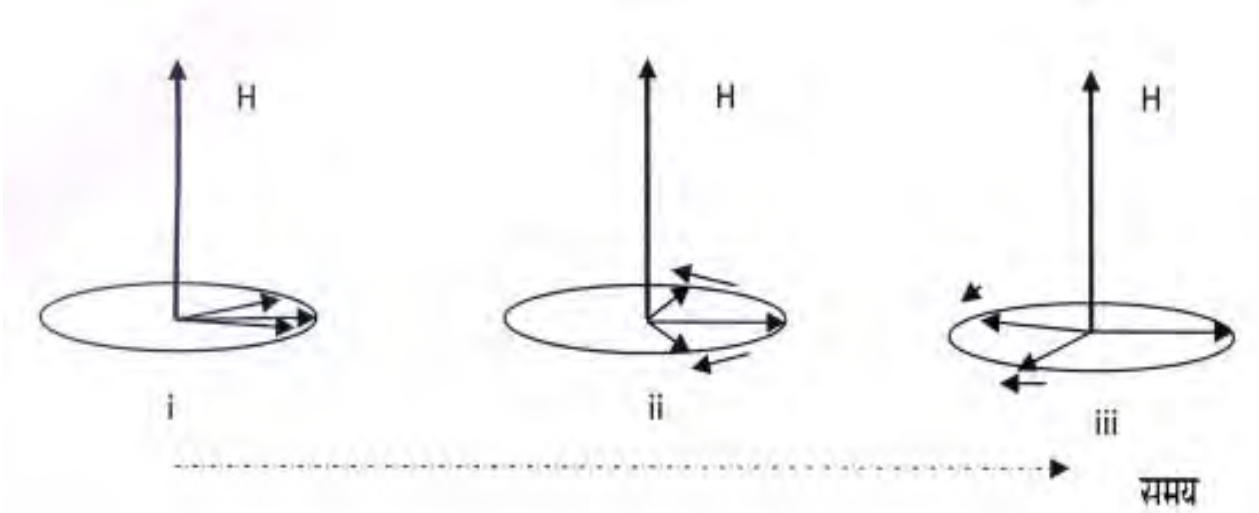

चित्र-6 : ऐसे संदर्भ फ्रेम जो कि H के अक्ष पर औसत लार्मर आवृत्ति से आघुर्ण कर रही हो. प्रोट्रानों का वैयक्तिक चुंबकत्व यानि ससेप्टिबिलिटी H के अक्ष पर लार्मर आवृत्ति से थोड़ी कम गति से पुरस्सरण करते हैं. अतः समय के साथ प्रोटान तथा H एक कला में नहीं रह पाते जैसा कि ऊपर भाग i, ii तथा iii में दर्शाया गया है.

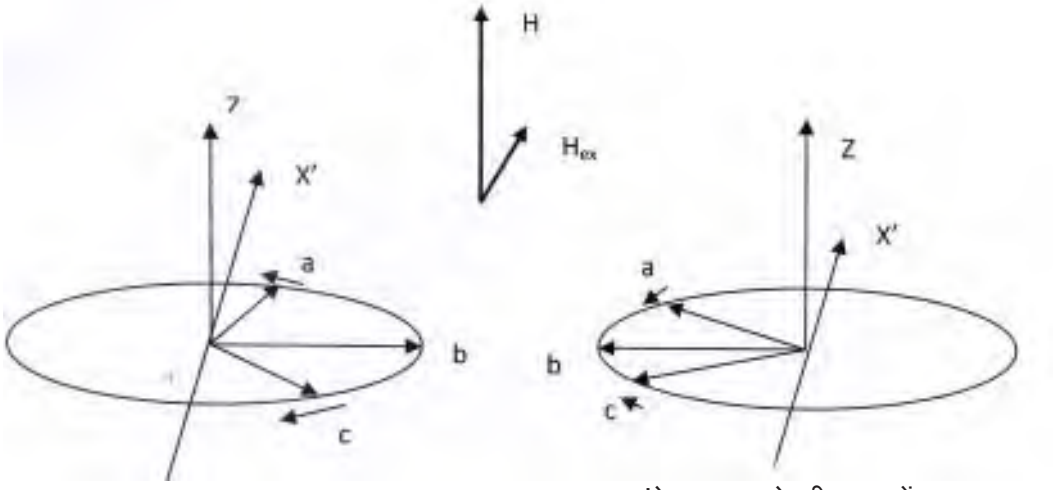

i) संवेग का विपरीत कला में प्रचक्रण

180^0 घूमने के पहले की स्थिति

ii)संवेग एक दूसरे की कला में

180^0 घूमने के बाद की स्थिति

चित्र- 7

शरीर के विभिन्न अवयवों की कार्यप्रणाली का चित्रण कर औषधीय समाधान खोजा जाता है. ये रसायन दो प्रकार के होते हैं : अ. सकारात्मक आभास देने वाले यौगिक और ब. नकारात्मक आभास देने वाले यौगिक.

अ) चुंबकीय अनुनाद चित्रण में अधिक सकारात्मक आभास यानि ऊज्वल चित्रण के लिए प्रयुक्त रासायनिक यौगिक

चुंबकीय अनुनाद चित्रण में इन रासायनिक यौगिकों का प्रयोग करने से T_1 में कमी आती है जिससे संसूचना की तीव्रता बढ़ जाती है तथा चित्र अधिक उज्ज्वल हो जाता है. इन रासायनिक अणुओं का अणुभार कम होता है तथा ये गेडोलिनियम, मेंगनीज या आयरन के संकर होते हैं. इन सभी तत्वों की संरचना देखने से यह पता चलता है कि इनके वेलेंस इलेक्ट्रॉन कक्षा में अयुगल इलेक्ट्रॉन होते हैं, जिनका प्रचक्रण काल लंबा होता है. ऐसे ही कुछ संकर जैसे गेडोलिनीयम डायमेगलुमाइन, गेडोटेरिडाल, गेडोटेरेट मेग्लुमाइन इत्यादि का उपयोग केंद्रीय तंत्रिका प्रणाली के साथ ही संपूर्ण शरीर के चुंबकीय अनुनाद चित्रण में होता है.

ब) चुंबकीय अनुनाद चित्रण में नकारात्मक (काले रंग) प्रभाव छोड़ने वाले रासायनिक यौगिक : ये सुपर पेरामेगनेटिक आयरन ऑक्साईड के छोटे कण होते हैं जिनके उपयोग से चुंबकीय अनुनाद चित्रण के दौरान प्रोट्रान पर

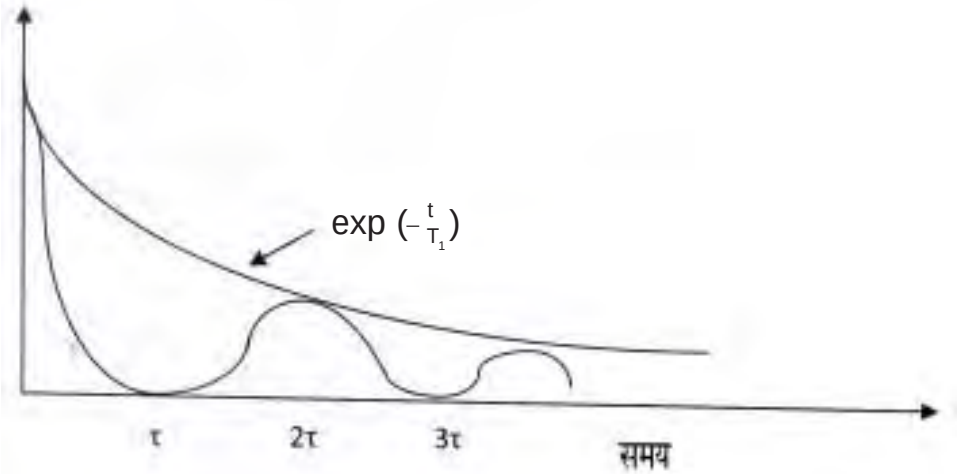

चित्र-8 : प्रचक्रण गूंज का समय के साथ संबंध. शय तल पर प्रारंभिक घुर्णन के बाद चुंबकत्व M यानि सेसेप्टीबिलिटी की संसूचना के परिमाण का समय के साथ प्रचक्रण-प्रचक्रण श्रांति के कारण बदलाव.

स्थानीय चुंबकीय प्रभाव को और तीव्र बनाते हैं. अतः प्रचक्रण-प्रचक्रण श्रांति की तीव्रता बढ़ जाती है, जिसके कारण T_1 तथा T_2 कम हो जाते है. ये कण क्रिस्टलाइन आयरन ऑक्साईड के ऊपर बहुलक पदार्थ जैसे डेक्स्ट्रान अथवा पोलीइथिलीन ग्लायकोल का लेप चढ़ाकर बनाये जाते हैं. इन कणों का औसत व्यास 300nm से कम होने पर ही ये T_1 में अधिक प्रभाव उत्पन्न करते हैं तथा T_2 आधारित मापन में ज्यादा प्रभावी जान पड़ते हैं.

कई विशिष्ट प्रकार के नकारात्मक (काले रंग) प्रभाव छोड़ने वाले रासायनिक यौगिक उपलब्ध हैं जोकि परफ्लोरोकार्बन होते हैं जिनके अणु में हाइड्रोजन नहीं होता अतः इनकी उपस्थिति में प्रोट्रान के चुंबकीय अनुनाद में कमी आती है तथा संसूचना की तीव्रता कम होने से चित्र में कालापन उत्पन्न होता है.

आज कई विशिष्ट प्रकार के रासायनिक यौगिकों का विकास किया जा रहा है, जिनके प्रयोग से प्रोट्रान चुंबकीय अनुनाद चित्रण को औषध विज्ञान में अधिक उपयोगी बनाया जा सके. जैसे कि ऐसे अणु बनाना ज़ोकि शरीर में अधिक काल तक बने रहें, साथ ही ये किसी विशिष्ट ग्रंथि में सांद्रित होने के गुण वाले हों. निश्चित ही इनके विकास से प्रोटान चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि को नयी दृष्टि मिलेगी व रोगोपचार के लिए यह नयी आशा की किरण या वरदान साबित होगी तथा मानव जीवन को भविष्य में नयी आशा व आधार देगी.

ऐसे ही कुछ रंगविरोधी प्रभाव उत्पन्न करने वाले, कुछ महत्वपूर्ण रासायनिक यौगिकों की जानकारी तालिका-2 में दी गई है, जिनका प्रयोग कर शरीर के विभिन्न अवयवों के सुंदर चुंबकीय अनुनाद चित्र प्राप्त कर उनकी कार्यप्रणाली का अध्ययन आसानी से संभव होता है.

शरीर के विभिन्न अवयवों के ऐसे ही कुछ चुंबकीय अनुनाद चित्रों का वर्णन यहां किया जा रहा है. चित्र-9 में T_1 को आधार बनाकर प्राप्त किये गये चुंबकीय अनुनाद को दर्शाया गया है. इस चित्र में हम नेत्र गोलक तथा प्रकाशकीय तंत्रिका कोशिकाएं (आप्टिक तंत्रिका) को स्पष्ट देख सकते हैं. चित्र-10 में रंगविरोधक यौगिकों का उपयोग कर लिया गया रक्त धमनियों का छायाचित्र दिया गया है. इस मापन से मस्तिष्क तथा गले की धमनियों का स्पष्ट चित्रण किया गया है. चित्र को प्राप्त करने के लिए प्राप्त चुंबकीय अनुनाद संसूचनाओं की सर्वाधिक तीव्रता के आधार पर पुर्नमुल्यांकन किया गया है. चित्र-10 में मुख्य धमनियां अधिक चमकीली दिख रही है जबकि पतली धमनियों एवं नसों का रंगविरोध कम है.

कार्यपरक चुंबकीय अनुनाद चित्रण

चुंबकीय अनुनाद चित्रण की यह एक आधुनिक तकनीक है जिसकी सहायता से मस्तिष्क की कार्य प्रणाली का अध्ययन किया जाता है. इस विधि की कार्यप्रणाली का सिद्धांत यह

चित्र-9 : मानव मस्तिष्क का T_1 आधारित चुंबकीय अनुनाद चित्र जिसमें आंखों तथा उससे जुड़ी मस्तिष्क में स्थित प्रकाशकीय तंत्र कोशिकाओं का स्पष्ट चित्र दर्शाया गया है.

है कि मस्तिष्क में विद्यमान ऊतकों की धमनियों में प्रवाहित हो रहे रक्त प्रवाह से उस क्षेत्र के चुंबकीय ससेप्टिबिलिटी में परिवर्तन होता है. यह चुंबकीय ससेप्टिबिलिटी, बाह्य चुंबकीय प्रभाव क्षेत्र में उत्पन्न चुंबकत्व के अनुपात में होती है. अतः पदार्थ की ससेप्टिबिलिटी में बदलाव होने पर क्षेत्र का चुंबकत्व भी बदलेगा. इस प्रकार के स्थानीय चुंबकीय परिवर्तनों के कारण T_2 यानि प्रचक्रण-प्रचक्रण श्रांति काल पर असर पड़ता है. ध्यान रहे कि रक्त की ससेप्टिबिलिटी रक्त में विद्यमान हीमोग्लोबिन के ऑक्सीकरण पर निर्भर करती है. डीआक्सीहीमोग्लोबीन अनुचुंबकत्व होता है, जबकि आक्सी हीमोग्लोबीन विषमचुंबकत्व होता है तथा इसकी ससेप्टिबिलिटी सामान्य ऊतकों के बराबर होती है. मस्तिष्क की तंत्रिका कोशिकाओं की गतिविधि बढ़ने से स्थानीय कोशिकाओं में रक्त प्रवाह बढ़ जाता है जिससे उस क्षेत्र में ऑक्सीहीमोग्लोबीन की मात्रा बढ़ जाती है व डीआक्सीहीमोग्लोबीन की मात्रा कम हो जाती है. अतः इस प्रकार के ऊतकों की ससेप्टिबिलिटी, सामान्य कोशिकाओं के समान होती है. जिसके कारण क्षेत्र के चुंबकत्व में थोड़ा बदलाव आता है. ये बदलाव T_2 की मात्रा में भी बदलाव करते हैं जिसे नापा जा सकता है. चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि का एक महत्वपूर्ण गुण यह है कि इस विधि में किसी भी प्रकार की रेडियोधर्मिता का उपयोग नहीं किया जाता है. साथ ही इस विधि में किसी प्रकार के बाह्य विकिरणों का भी उपयोग नहीं किया जाता है. अतः इस विधि से आवश्यकता पड़ने पर सब्जेक्ट पर बार बार मापन किये जा सकते हैं, जो कि अन्य उच्च ऊर्जा विकिरणों पर आधारित विधियों से करना ठीक नहीं है.

हम देखते है कि विज्ञान की प्रगति के साथ इस विधि से विभिन्न रोगियों के शारीरिक पीडाओं के निदान व कर्क रोग ग्रसित ग्रंथियों का स्पष्ट चित्रण संभव हो गया है. जो चुंबकीय अनुनाद चित्रण के व रंग विरोधक यौगिकों के विकास के साथ संगणकीय ट्रामोग्राफी तकनीक के कारण ही संभव हो सका है.

चित्र-10 : चुंबकीय अनुनाद चित्रण विधि में रंग विरोधक यौगिकों के प्रयोग से रोगी की ग्रीवा धमनियों का प्राप्त किया गया चित्र. (tip.com के सौजन्य से साभार) इस पश्च संसाधित चित्र में रोगी के गले में स्थित रक्त वाहिका धमनियों को उज्ज्वल बताया गया है, मुख्य धमनियों को अधिक उजले रंग का तथा छोटी आकार की कम व्यास वाली धमनियों को रंग विरोधक योगिकों के प्रयोग से कम उजले रंगो से दर्शाया गया है.

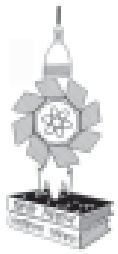

तालिका - 1 : चुंबकीय अनुनाद चित्रण के लिए उपयुक्त कुछ महत्वपूर्ण नाभिकों के नाभिकीय गुणधर्म

नाभिक	एकक प्रोटानों की संख्या	एकक न्युट्रानों की संख्या	परिणामी प्रचक्रण संख्या	लार्मर आवृत्ति (MHz/T)
^{1}H	1	0	1/2	42.58
^{2}H	1	1	1	6.54
^{31}P	1	0	1/2	17.25
^{23}Na	1	2	3/2	11.27
^{14}N	1	1	1	3.08
^{13}C	0	1	1/2	10.71
^{19}F	1	0	1/2	40.08

तालिका -2 : चुंबकीय अनुनाद चित्रण में रंगविरोध उत्पन्न करने वाले कुछ महत्वपूर्ण रासायनिक यौगिक

यौगिक का नाम	शरीर के अवयव जिनके चुंबकीय अनुनाद चित्रण में यह यौगिक सहायक होता है.
फेरमाआक्साईड	इस रंग विरोधक यौगिक का स्वस्थ उत्तोलक, रीढ़ व अस्थि मज्जा पर अवशोषण होता है. अतः कर्करोग ग्रसित ऊतक आसानी से दिखता है. T_2 के उपयोग से चित्रण में अधिक उपयोगी. लगभग 15 मिनट में चित्रण.
परफ्लोरो रसायन जैसे परफ्लोरोआक्साईल ब्रामाईड, परफ्लोरोनोनाने	जठर गहणिका (ग्रंथियों) का नकारात्मक प्रभाव से चित्रण
Gd-DTPA -पालीईथिलीनग्लायकोल कवच के साथ	मस्तिष्क
गेडोपेंटेटेट डायमेग्लुमाईन	मस्तिष्क प्रयोग करने पर T_2 में कमी आती है तथा चुंबकत्व यांनि ससेप्टीबिलिटी बढ़ती है.
मोनोक्लोनल एंटीबडी के साथ गेडोलिनीयम के संकर	कर्करोग ग्रसित ग्रंथी का चित्रण, या लक्षित ग्रंथी का चित्रण

स्टेम सेल थेरेपी

डॉ (श्रीमती) प्रेम भार्गव
एफ-6/1, सेक्टर 7 (मार्केट) वाशी, नवी मुंबई - 400 703,
मो.-09757257663

मानव शरीर की संरचना कोशिकाओं के संयोजन से हुई है. शरीर की वृद्धि के अलावा नित्यप्रति की क्रियाओं में कुछ कोशिकाओं का निरंतर क्षरण होता रहता है और उनके स्थान पर नई कोशिकाएं निर्मित होती रहती हैं. स्टेम कोशिकाएं इस नव कोशिका निर्माण प्रक्रिया की सहायक घटक होती है. कभी-कभी जब इस प्रक्रिया में व्यवधान आ जाता है या कोई विकृति पैदा हो जाती है तो कई कोशिकाओं का निर्माण नहीं होता. इस स्थिति में शरीर का वह भाग रोग ग्रस्त हो जाता है. इस विकृति को दूर करने के प्रयास में जिज्ञासु मानव मन में यह धारणा उभरी कि यदि किसी प्रकार से लैब में स्टेम (सामान्य वयस्क स्टेम) कोशिकाओं का निर्माण कर उनको शरीर में प्रत्यारोपण कर दिया जाए, तो कदाचित यह व्यवधान दूर हो जाए. स्टेम सेल हमारे शरीर के मूल निर्माण घटक हैं. उनमें शरीर की विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं में विकसित हो सकने की क्षमता है. शरीर की मरम्मत प्रणाली के रूप में काम करते हुए, यह अन्य कोशिकाओं की पुनः पूर्ति के लिए असीमित रूप में बढ़ सकती है और विभिन्न अंगों को बनाने वाले अनेक ऊतकों में बदल सकती हैं. कोई भी बच्चा बीमारियों का उपचार करने की कुदरती शक्ति के साथ पैदा होता है. स्टेम सेल भविष्य में उन्हें होने वाली संभावित बीमारियों से बचाने के लिए एक क्रांतिकारी चिकित्सीय धारणा है. इसी धारणा ने स्टेम सेल के निर्माण की अवधारणा को जन्म दिया.

शुक्राणु जब अंडाणु को निषेचित करता है तब केवल एक प्रकार की कोशिका होती है. यह एक से दो, दो से चार और इसी प्रकार विभाजित होते हुए एक पिंड का आकार ले लेती हैं. इसी पिंड से विभिन्न कोशिकाएं विशिष्ट रूप धारण कर शरीर के विभिन्न अंगो, हड्डियों, त्वचा आदि कोशिकाओं को विकसित करती हैं, बिलकुल उसी तरह जैसे तने से शाखाएं, प्रशाखाएं प्रस्फुटित होती हैं.

सन् 1962 में कॅम्ब्रिज विश्वविद्यालय के जान गर्डन (John Gurden) ने स्टेम सेल से मेंढक की अंडाणु कोशिका से नाभिक (न्यूक्लियस) हटा कर उसकी जगह एक टेडपोल की आंत से लिए सेल का नाभिक रख दिया और मेंढक के अंडाणु को टेडपोल के एक स्वस्थ क्लोन के रूप में विकसित करके इस सिद्धांत को प्रतिपादित किया. गर्डन के प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया कि सभी सैल्स का एक जेनेटिक कोड होता है और प्रत्येक सेल्स से पूरा जीव या उसके शरीर का कोई

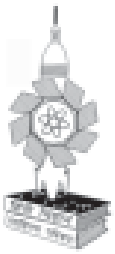

विशिष्ट अंग बनाया जा सकता है. 1977 में स्काटिश वैज्ञानिक विलियम इयन विल्गट ने गर्डन की खोज को पहली बार स्तनपायी जानवरों पर आजमाया और डॉली भेड़ का क्लोन तैयार करके पूरी दुनिया में तहलका मचा दिया. इसके एक साल बाद ही रिसर्चरों ने पहले मानव भ्रूण स्टेम सेल उत्पन्न किए. इन दोनों वैज्ञानिक उपलब्धियों ने चिकित्सीय क्लोनिंग के विचार को जन्म दिया. विचार यह था कि मरीज के स्किन सेल को अनिषेचित अंडाणु में प्रविष्ट किया जाए ताकि उसे प्राथमिक अवस्था में वापस लाया जा सके. इसके बाद भ्रूण स्टेम सेल्स को ऐसे टिशू या अंग में बदला जाए जिसे मरीज के शरीर में बदलने की जरूरत है. चूंकि नए टिशु में मरीज का अपना जीन 'समूह होगा, उसके शरीर की प्रतिरोधी प्रणाली द्वारा इस टिशु को ठुकराए जाने की संभावना बहुत कम रहेगी. लेकिन इसके लिए मानव अंडाणु कहां से लाये. स्टेम सेल को प्राथमिक कोशिका भी कहते हैं, जो भ्रूण से प्राप्त होती है. भ्रूण से बने स्टेम सेल हर तरह की कोशिकाएं बना सकते हैं लेकिन इससे इलाज में कुछ दिक्कतें भी हैं ऐसी कोशिकाओं को शरीर आसानी से स्वीकार नहीं कर पाता और अंग प्रत्यारोपण में दिक्कत आती है. साथ ही इस पर शोध करने के लिए भ्रूण को नष्ट करना होता था. अतः इस पर नैतिक प्रश्न उठाए गए और कुछ देशों में इस शोध पर प्रतिबंध लगा दिया गया.

जब जिज्ञासा जन्म लेती हैं, तो जिज्ञासु मन अनेक विकल्प सोचने लगता है. भ्रूण से प्राप्त होने वाले स्टेम सेल की शोध पर प्रतिबंध लगने के बाद वैज्ञानिक परिपक्व सैल को फिर से स्टेम सेल में बदलने का तरीका ख़ोजने लगे. गर्डन की खोज के 40 वर्ष से अधिक वर्षों के बाद क्योटो विश्वविद्यालय के यामानाका ने अंडाणु की कोशिकाओं में जीन्स को स्थानांतरित करने के स्थान पर त्वचा की कोशिकाओं में चार जीन्स को डाला जिसने उनको स्टेम सेल में बदल दिया और इससे वह कोशिका विशिष्ट सेल बन गई. इस प्रयोग में उन्होंने 2006 में चूहों की स्किन कोशिकाओं में कुछ जीन प्रविष्ट कराके उन्हें स्टेम सेल में बदल दिया. इस तरह उन्होंने यह साबित कर दिया कि परिपक्व सैल्स में जो विकास हुआ था उसे पलटा जा सकता है और उन्हें भ्रूण जैसा करनेवाली कोशिकाओं में बदला जा सकता है. यामानाका की खोज से उन वैज्ञानिकों को बड़ी राहत मिली जो नैतिक विवादों के कारण स्टेम सेल में अपनी रिसर्च आगे बढ़ाने में कठिनाई महसूस कर रहे थे. यामानाका ने एक प्रकार से गर्डन (जिसे क्लोनिंग तकनीक का जनक भी माना जाता है) के शोध को ही आगे बढ़ाया और सिद्ध किया कि शरीर की परिपक्व कोशिकाओं को पुनः स्टेम सेल अथवा प्राथमिक कोशिकाओं में बदला जा सकता है. इन दोनों वैज्ञानिकों को साल (2012) के चिकित्सा नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है. नोबल समिति के कथनानुसार इस असाधारण खोज ने कोशिकाओं के विकास और विशिष्टीकरण के दृष्टिकोण को ही बदल दिया है. नोबल समिति के अध्यक्ष अर्बन लेनदाही ने कहा 'हम दिल या दिमाग के बड़े भाग को प्रयोगशाला में अध्ययन के लिए नहीं ले जा सकते पर कोशिकाओं को (उदाहरण के लिए मरीज की त्वचा कोशिकाओं की रीप्रोग्रामिंग करके उन्हें) प्राथमिक अवस्था में ले जाकर प्रयोगशाला में उन्हें विशिष्ट बना सकते हैं. कृत्रिम रूप से विकसित विशिष्ट प्रकार की सेल को मांसपेशी, स्नायुतंत्र आदि में विकसित किया जा सकता है. इस खोज ने चिकित्सा जगत को क्षतिग्रस्त कोशिकाओं के पुनः निर्माण के लिए नये क्षितिज खोल दिए हैं. स्टेम सेल की इन विशेषताओं को देखकर वैज्ञानिकों को यह विश्वास होने लगा है कि एक दिन स्टेम सेल से नई कोशिकाओं को निर्मित कर स्पाइनल कॉर्ड की क्षतिग्रस्त कोशिकाओं से लेकर, पार्किन्सन्स जैसी बीमारियों में क्षतिग्रस्त कोशिकाओं को बदला जा सकेगा. शोधकर्ताओं ने हार्ट डिजीज डायबिटीज और अल्जीमर जैसे रोगों के अध्ययन के लिए रोग प्रधान स्टेम सेल और व्यक्ति प्रधान स्टेम सेल पर शोध शुरु कर दिया है. कासेलिस्का इंस्टीट्यूट के जीव विज्ञान के आण्विक विकास के प्रोफेसर और नोबल समिति के सदस्य थॉमस पर्लमान ने इन दोनों वैज्ञानिकों को धन्यवाद देते हुए कहा है कि अब विकास एक ही मार्ग पर आगे नहीं बढ़ेगा और अल्जीमर, पार्किन्सन्स जैसे स्नायुतंत्र से संबंधित रोगों का भी निदान और उपचार संभव हो सकेगा.

इस खोज से अल्जीमर, पार्किन्सन्स जैसी असाध्य बीमारियों के अलावा अन्य बीमारियों के उपचार के लिए भी स्टेम सेल का प्रयोग किया जाने लगा है. आइए देखते हैं और किन किन बीमारियों के लिए ये कारगर सिद्ध हो सकती है.

1. एनईसी-नेक्रोटाइडिंग एन्ट्रोकोलाइटिस में अत्यधिक सूजन से बच्चों की आंतों की कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं. मां के दूध और प्रोबायोटिक्स से बीमारी की संभावना को कम किया जा सकता है पर यदि बीमारी हो जाए, तो आपरेशन के अतिरिक्त और कोई उपचार उपलब्ध नहीं है. ऑपरेशन के माध्यम से मृत कोशिकाओं को निकाल दिया जाता है जिससे आंतों का भीतरी भाग छोटा हो जाता है और आंतें काम करना बंद कर देती हैं. ऐसी स्थिति में नस के माध्यम से पोषण देना पड़ता है. यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन इंस्टीट्यूट ऑफ चाइल्ड हेल्थ में किए गए नए अध्ययन

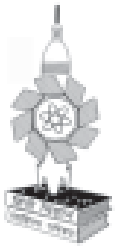

के अनुसार ऑवल (जिस झिल्ली के अंदर बच्चा पेट में रहता है) के तरल द्रव्य से लेकर स्टेम सेल के इंजेक्शन से आंतों में होनेवाली क्षति को रोका जा सकता है.

2. स्टेम सेल से गुर्दे की कोशिकाओं का विकासः किडनी एक जटिल ढांचा है, जिसकी आसानी से रिपेयर (मरम्मत) नहीं की जा सकती. मनुष्य के शरीर में लगभग 200 प्रकार के सेल होते हैं, पर यह कोशिका केवल तीन प्रकार के सेल में विकसित होती है - अधिवृक्क ग्रंथि (गुर्दे के ऊपर की ग्रंथि), प्रजनन ग्रंथि सेल और किडनी सेल. कोइनो विश्वविद्यालय के केन्जी ओसफन और उनकी टीम ने स्टेम सेल - 'ब्लेन्क स्लेट्स' को लेकर शरीर में किसी भी प्रकार के सेल के लिए रीप्रोग्रामिंग की और उसे किडनी कोशिकाओं की दिशा में मोड़ दिया. ओसफन के अनुसार उनकी शोध में 90 प्रतिशत सेल मध्यवर्ती कोशिकाओं के रूप में विकसित हो गए. यद्यपि ओसफन को आशंका है कि उनके द्वारा विकसित कोशिकाओं को प्रत्यारोपित कर किडनी की बीमारी को ठीक किया जा सकेगा या नहीं, फिर भी किडनी के उपचार की दिशा में यह बढ़ता हुआ कदम है. दूसरी ओर मोनाश विश्वविद्यालय की शोरान रिकार्डो और उनके साथियों ने अपने प्रयोग में किसी व्यक्ति की किडनी के सेल लिए और उन्हें प्राथमिक सेल के रूप में बदलने की कोशिश की. उन्होंने किडनी के सेल में रीप्रोग्राम किए हुए कुछ जीन्स को अंतःस्थापित (इनसर्ट) किया, जिससे अन्य सेल विकसित हो सके. दूसरे अध्ययन से चाइनीज एकेडेमी ऑफ साइंसेज की मिगुल ईस्टविन और उनके साथियों ने पाया कि मरीज के मूत्र से किडनी सेल लेकर भी रीप्रोग्रामिंग की जा सकती है. इनका दावा है कि मरीज के मूत्र से लिए गए किडनी सेल से विकसित सेल द्वारा उपचार के बाद किडनी का प्रत्यारोपण आवश्यक नही रहेगा. यदि ऐसा हो गया, तो डायलेसिस पर निर्भर मरीज जटिल और खर्चीले ऑपरेशन से बच सकेंगे.

3. बधिरता के लिए स्टेम सेल उपचार - वातावरण में व्याप्त ध्वनि तरंगें कान के अंदरूनी भाग में कंपन पैदा करती है और यहां ध्वनि तरंगों की विद्युत तरंगों में बदल होती है, जिन्हें मस्तिष्क ग्रहण कर लेता है. शेफील्ड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने प्रयोग के द्वारा दावा किया है कि कान के अंदरुनी नस की क्षति को स्टेम सेल उपचार से ठीक किया जा सकता है. उन्होंने अपने प्रयोग में मानव भ्रूण के स्टेम सेल को 18 हिरण मूसा के कान की नस के अंदरूनी भाग में इंजेक्ट किया और 10 सप्ताह के अंदर उनकी श्रवण शक्ति में सुधार हुआ. वैज्ञानिकों का कथन है कि गेरबरिल और मनुष्यों की श्रवण सीमा एक समान हैं. लंदन में हुए इस प्रयोग ने बधिर मनुष्यों के हृदय में भी आशा की ज्योति जगा दी है.

4. मस्कुलर डिस्ट्राफी - मस्कुलर डिस्ट्राफी से पीड़ित व्यक्ति की आयु अधिक से अधिक 20 से 25 साल होती है. मस्कुलर डिस्ट्राफी 9 प्रकार की होती हैं इनमें सबसे खतरनाक डूकेने प्रकार की बीमारी होती है. जिससे मरीज की पूरे शरीर की नसें बेहद तीव्र गति से मरने लगती हैं. डॉ नंदनी गोकुल चंद्रन इस बीमारी से पीड़ित मरीजों के इलाज में स्टेम सेल थेरेपी से आशा की किरण जगा रही है.

5. एक इंजेक्शन से दिल हो जाएगा चंगा : दिल के सामान्य एक लाख सैल्स में 300 स्टेम सेल होते हैं. इंपीरियल कॉलेज लंदन के वैज्ञानिक उसी मरीज के दिल से निकाले गए सैल्स से स्टेम सेल का एक ऐसा इंजेक्शन तैयार कर रहे हैं, जिसे लगाने के बाद दिल में आई खराबी अपने आप ठीक हो जाएगी.

6. टूटी हुई हड्डियों का स्टेम सेल से उपचार : मांस पेशी व कंकाल विज्ञान के प्रोफेसर रिचर्ड आरेफो और उनकी टीम के सहयोगी सदस्य रसायन विज्ञान के प्रोफेसर मार्क ब्रेडेले ने एक ऐसा मैटीरियल तैयार किया है जिसकी सहायता से टूटी हुई हड्डियों को स्टेम सेल की सहायता से जोड़ा जा सकता है. यह मैटीरियल तीन प्रकार के प्लास्टिक का मिश्रण है जो मजबूत, हल्का और हड्डियों के स्टेम सेल को सपोर्ट करने के लायक है. यह मैटीरियल छिद्रों से युक्त एक ऐसा ढांचा है जिसके माध्यम से रक्त प्रवाहित होता है, जो मरीज की अस्थिमज्जा से स्टेम सेल को इस मैटीरियल से जोड़ देता है और नई हड्डी को बढ़ने देता है. जैसे -जैसे नई विकसित हड्डियां प्रतिस्थापित होती हैं, प्लास्टिक नष्ट हो जाता है. इस प्रयोग के परिणाम प्रयोगशाला में और जानवरों पर स्पष्ट देखे जा चुके हैं. अब लक्ष्य मनुष्यों पर प्रयोग करना है. मार्क ब्रेडेले का कथन है कि इस तकनीक से हड्डियों की जटिल क्षति से ग्रस्त मरीजों को लाभ होगा और वृद्ध लोगों के स्वास्थ्य के बनाए रखने में भी यह मददगार सिद्ध होगा.

7. नकली दांतों से छुटकारा : वैज्ञानिकों ने एक तकनीक विकसित की है, जिसके जरिए उम्र के किसी भी दौर में नए दांत उगाए जा सकते हैं. फिलहाल वैज्ञानिकों ने चूहे की मदद से एक ह्यूमेनमाउस हाइब्रिड दांत विकसित करने में कामयाबी हासिल की है. अब इसे पूरी तरह से शरीर में विकसित करने के लिए प्रयोग चल रहे हैं. स्टेम सेल तकनीक ने इसमें अहम भूमिका निभाई है. इस प्रयोग के पीछे अहम भूमिका निभाने वाले प्रोफेसर पॉल का कहना है कि जबड़े से निकाली गई कोशिकाएं नए दांत विकसित करने की क्षमता रखती है.

8. लकवाग्रस्त अंग में फिर से स्पर्श की अनुभूति :

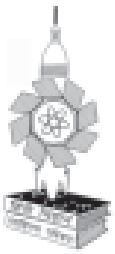

वैज्ञानिकों ने एक ऐसे स्टेम सेल उपचार को विकसित किया है जिसके जरिए क्षतिग्रस्त मेरुदंड के कारण लगवाग्रस्त अंगों में फिर से स्पर्श की अनुभूति होने लगेगी. जूरिच विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. अर्मित कर्ट और उनकी सहयोगी टीम ने तीन मरीजों पर इस उपचार को आजमाया. स्नायु संबंधी वयस्क स्टेम सेल का इंजेक्शन देने के बाद उनमें से दो के परिणाम सकारात्मक थे. डॉ.कर्ट ने इन्हें आधारभूत परिणाम बताया. लंदन में अंतरराष्ट्रीय मेरुदंड सोसाइटी (इंटरनेशनल स्पाइनल कॉर्ड सोसाइटी) की वार्षिक कान्फ्रेंस में उन्होंने अपनी उपलब्धियों का ब्यौरा दिया और कहा कि मेरुदंड की मरम्मत कर पाना एक बड़ी उपलब्धि है, जिसे स्टेम सैल थेरेपी द्वारा किया जा सका. इसी टीम के सदस्य डॉ.स्टीफेन हुण ने कहा कि यह स्टेम सेल का पहला उपकरण है जो केंद्रीय स्नायु तंत्र की मरम्मत कर सकता है. ऐसे मरीजों में बदलाव देखना कौतुहलजनक है. डॉ. कर्ट ने बताया कि इस प्रयोग में तीन मरीजों को जिनका मेरूदंड पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया था और नीचे के भाग में स्पर्श की कोई अनुभूति नहीं थी, वयस्क स्नायु संबंधी स्टेम सेल की 20 मिलियन की मात्रा दी गई. छः महीने बाद बहुत अच्छा सुरक्षित पार्श्व चित्र नजर आया. मरीजों से विस्तार से पूछने पर और परीक्षण से पता चला कि क्षतिग्रस्त मेरुदंड मस्तिष्क को संकेत भेजने लगा है. डॉ.हुन ने कहा कि मेरुदंड की क्षति के स्टेम सेल उपचार की खोज में हमने एक-एक ईट रखकर इसे पुख्ता बनाया है.

भारत में सायन अस्पताल, मुंबई के डॉ आलोक शर्मा ने एक ऐसे व्यक्ति का उपचार किया है जिसका मेरुदंड दो जगह से टूट गया था. 25 वर्षीय इरफान (जो चिड़ियाघर की देखभाल करता था) पर शेर के पिंजरे की सफाई करते समय शेर ने हमला कर दिया था, जिससे उसका मेरुदंड दो जगह से टूट गया. राजकोट में स्क्रू और प्लेट तकनीक से उसका इलाज किया गया पर उसका नीचे का भाग पक्षाघात से पीड़ित हो गया. डॉ. शर्मा ने उसकी हिप बोन से स्टेम सैल लेकर उसको इंजेक्शन दिया. एक सप्ताह के बाद उसने अपने अपंग अंगों में सनसनी की अनुभूति की. 6 महीने बाद उसे फिर से स्टेम सेल की खुराक देनी होगी. डॉ शर्मा को विश्वास है कि वह पूर्णतः ठीक हो जाएगा.

9. खून से स्टेम सेल बनाने की तकनीक - अब मरीज के गंभीर रोगों का इलाज उसी के खून से संभव हो सकेगा. यह कामयाबी मिलेगी, रक्त को स्टेम सेल के रूप में विकसित करने की तकनीक से, जिसे कैंब्रिज विश्वविद्यालय में कार्यरत गोरखपुर की बेटी इंबिशात गेती ने खोज निकाला है. रक्त से बनी कोशिकाओं का प्रयोग कर हृदय, दिमाग, आंख, अस्थि आदि अंगों की बीमारियों का इलाज हो सकेगा. शोध में रक्त से बनी स्टेम सैल का प्रयोग रक्त वाहिनियां बनाने में होगा और इसे बड़ी उपलब्धि के रूप में देखा जा रहा है. इंबिशात के मुताबिक इन स्टेम सेल्स की खासियत यह है कि वे शरीर के किसी भी अंग की कोशिकाओं के रूप में विकसित हो सकती हैं. इसी विशेषता के कारण ये हृदय, दिमाग, किडनी, नेत्र सहित किसी भी अंग की बीमारियों का इलाज करने में सक्षम हैं.

10. स्टेम सेल से कृत्रिम रक्त बनाया - आई.आई.टी. मद्रास के वैज्ञानिकों ने स्टेम सेल से कृत्रिम रक्त बनाया है, जो ऑक्सीजन को मानव अंगों में पहुंचाने में सक्षम होगा. इन वैज्ञानिकों ने शरीर के रज्जु (कॉर्ड) से वयस्क स्टेम सेल लेकर उसमें विभिन्न स्तरों पर पौष्टिक अनुपूरक डाले. 17 दिन के बाद स्टेम सेल लाल रक्त-कण में विकसित हो गए. ये रक्तकण संक्रमण रहित होंगे. कृत्रिम रक्त की कीमत मनुष्य के प्राकृतिक रक्त से लगभग आधी होगी. इसकी खराब होने की समय सीमा 50 दिन होगी, जब कि मानव रक्त 42 दिन के बाद चढ़ाने लायक नहीं रहता. कृत्रिम रक्त सभी रक्त वर्ग के मरीजों को चढ़ाया जा सकेगा. पहले इसका पशुओं पर परीक्षण किया जाएगा, यदि वे इसे स्वीकार कर लेते हैं और बच जाते हैं, तो मानव के लिए इसका प्रयोग किया जाएगा.

11. स्टेम सेल से बालों का उपचार - स्विस वैज्ञानिक फ्रेड जूली और इटली के विशेषज्ञों ने भारत में इस उपचार पद्धति पर प्रकाश डाला. फ्रेड जूली ने (जिन्होंने स्टेम सेल को अलग किया) कहा कि हम त्वचा के लिए स्टेम सेल का प्रयोग करते हैं, पर डॉ. रिचर्ड शाह ने बालों को उगाने में इसकी संभावनाएं देखी. डॉ. रिचर्ड को आशा है कि इस उपचार से बालों की बढ़त 85 प्रतिशत हो जाएगी. उन्होंने बताया कि एक प्रकार के स्विस एपिल से स्टेम सेल को निकालकर उनसे यह उपचार किया जाता है. यह बालों के गिरने की रफ्तार को 50 प्रतिशत कम कर देता है और बालों को बढ़त को 85 प्रतिशत बढ़ा देता है. इस उपचार में एक विशेष मशीन के द्वारा खोपड़ी में स्टेम सेल को पहुंचाया जाता है.

पश्चिम के अनेक नीति निर्धारक मानते हैं कि यामानाका की खोज के बाद मानव भ्रूण स्टेम सेल्स पर रिसर्च की कोई जरूरत नहीं है लेकिन यामानाका का कहना है कि भ्रूण स्टेम सेल्स अब भी शोध के लिए जरूरी है. शोध के दौरान

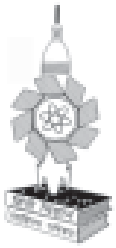

सन् 1970 में चिकित्सीय शोध कर्ताओं ने पाया कि शिशु की नाभि तंतु (नाल) का रक्त स्टेम सेल्स का सबसे अच्छा स्रोत है जिसमें गंभीर बीमारियों का इलाज करने की अदभुत क्षमता है. बच्चे के जन्म के बाद जो रक्त नाभि तंतु (नाल) में रह जाता है, उसे नाभि तंतु का रक्त कहते हैं. **रिज आई वी एफ बेनसप्स** अस्पताल की स्त्री रोग और बंध्यत्व विशेषज्ञ अनुभा सिंह का कहना है 'प्रसूति का समय ही वह समय है जब नाभि तंतु से स्टेम सेल को निकाला जा सकता है, अन्यथा उन्हें फेंक दिया जाता है. नाभि तंतु के रक्तकण में विशेष स्टेम सेल होते हैं जिनका उपयोग जीवनघातिनी बीमारियों से प्रतिरक्षा और आनुवांशिक रोग के उपयोग में किया जा सकता है. इन्हें भविष्य के लिए भी सुरक्षित किया जा सकता है. इसके लिए संभावित प्रसूति तारीख के कुछ सप्ताह पहले ही योजना बनानी होती है. प्रसूति के बाद 10 मिनट के अंदर बच्चे की नाभि तंतु से रक्त एकत्रित किया जाता है. एकत्रित रक्त जांच, संसाधन और स्टेम सेल हार्वेस्टिंग के लिए प्रयोगशाला में भेजा जाता है. कोलम्बिया एशिया अस्पताल के प्रसव विज्ञानी और स्त्री रोग विशेषज्ञ डॉ अमिता शाह के अनुसार कम से कम 3 से 5 मिलीलिटर रक्त नाभि तंतु से लिया जाता है. यह प्रक्रिया बच्चे और मां दोनों के लिए सरल, सुरक्षित और हानिरहित है. ये स्टेम सेल्स भविष्य में चिकित्सीय उपयोग के लिए क्रायोजनिक तरीके द्वारा सुरक्षित रखे जाते हैं.

नाभि तंतु रक्त के स्टेम सेल कई अन्य प्रकार के स्टेम सेल में विकसित हो सकते हैं, जिनका प्रयोग सगे भाई बहन या अन्य रक्त संबंधियों के रक्त कैंसर, थेलसीमिया, खून से संबंधित बीमारियों, हृदय रोग, मधुमेह, तांत्रिका संबंधित बीमारियों और अन्य जान लेवा बीमारियों सहित 75 गंभीर बीमारियों के लिए किया जा सकता है. डॉ अनुभा सिंह की मान्यता है कि ऐसे मरीजों के बचने की दर अधिक होती है, जिनके रक्त संबंधी या सगे भाई बहन के नाभि तंतु के रक्त से स्टेम सेल दिए गए हों. रक्त संबंध न होने पर बचने की संभावना कम हो जाती है क्योंकि दाता और प्राप्तकर्ता के रक्त वर्ग और श्वेत कोशिका प्रतिजन का मैच होना जरुरी होता है. पर जापान के अनुसंधान कर्ताओं से प्रेरित होकर कोलकाता के नेताजी सुभाषचंद्र बोस इन्स्टीट्यूट के डॉक्टरों ने इस अवरोधक को तोड़कर स्टेम सेल के उपचार क्षेत्र में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है. अप्लास्टिक रक्ताल्पता से पीड़ित 42 वर्षीय मरीज को उन्होंने एक ऐसे नवजात शिशु के नाभितंतु के रक्त को देकर उपचार किया है, जो उसका रक्त संबंधी नहीं था. इंस्टीट्यूट के निदेशक डॉ आशीष मुखर्जी का कहना है कि नाभितंतु के रक्त के स्टेम सेल में कम प्रतिजनीय गुणधर्म होते हैं अतः बिना रक्त वर्ग या जीन के मैच होने पर भी उन्हें मरीज को दिया जा सकता है. (मनुष्य का श्वेत कोशीय प्रतिजन अपने और पराए सेल्स का अंतर जानने के लिए प्रतिरक्षात्मक पद्धति का उपयोग करता है).

स्टेम सेल की उपयोगिता को देखते हुए आजकल माता-पिता अपने शिशु के स्टेम सेल को सुरक्षित कराने लगे हैं, पर भविष्य में जीवनघाती रोगों की आशंका से भयभीत होकर सभी शिशुओं के स्टेम सेल को सुरक्षित रखवाना आवश्यक नहीं है.

हां, जिन शिशुओं के परिवार में आनुवंशिक बीमारियों की, रक्त कैंसर या हर्लर सिंड्रोम जैसी जीवनघाती रोगों की परंपरा हो, उन्हें अपने शिशु के नाभि तंतु के रक्त का संरक्षण करा लेना चाहिए.

यह सत्य है कि स्टेम सेल उपचार से अनेक बीमारियों पर विजय पाई जा सकेगी, पर फिर भी कुछ प्रश्न ऐसे हो सकते हैं, जो आज अनुत्तरित हैं और शायद भविष्य में भी रहे.

विज्ञान प्रश्न मालिका - २ के सही हल

प्र.1 (क), प्र.2 - (ख), प्र. 3. (क), प्र. 4. (ख), प्र. 5. (ख), प्र. 6 (ग), प्र. 7 (ख), प्र. 8. (ख), प्र. 9 (क), प्र.10 (ख), प्र. 11 (क)

भूल सुधार

वैज्ञानिक के पिछले अंक (वर्ष44, 3/4) में पृष्ठ 16 के चित्र 3 ब में नीचे से (ऊपर की ओर) दूसरी पंक्ति में

$^{26}_{13}Mg$

के स्थान पर

$^{26}_{12}Mg$

पढ़ा जाय. इसी प्रकार पृष्ठ 87 व पृष्ठ 88 पर दी गयी आंकिक संख्या-युति की आखिरी पंक्ति में 13 के स्थान पर संख्या 19 पढ़ी जाए. मुद्रण की भूलों के लिये हमें खेद हैं.

-सं.मं.

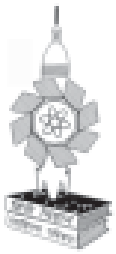

पिघलती बर्फ

डॉ.अचिन्त्य
सह प्राचार्य एवं प्राध्यापक, सिविल इंजिनियरिंग विभाग,भागलपुर कॉलेज ऑफ इंजिनियरिंग,
पोस्ट-सबॉर, भागलपुर-813210 (बिहार)

हमारी पृथ्वी के पर्यावरण के निर्माण में बर्फ की महती भूमिका है. समुद्री हिमखंड, ग्लेशियर, हिम-शिखर एवं बर्फ की चादर सूर्य की गर्मी का आंशिक परावर्तन कर देती हैं जिससे पृथ्वी कुछ ठंडी रहती है. इसके विपरीत खुले समुद्र की सतहें, जहां प्रकाश का अभाव रहता है, और बर्फ-विहीन धरती गर्मी को अधिक मात्रा में अवशोषित करती हैं. जैसे-जैसे बर्फ लुप्त होती जाती है, वैसे-वैसे पृथ्वी सूर्य की ज्यादा गर्मी अवशोषित करने लगती है. फलस्वरुप, अधिक गर्मी के कारण बर्फ भी अधिक मात्रा में पिघलने लगती है और इस चक्र में घटती बर्फ भूमंडल के तापमान को बढ़ाने का एक कारण बनती हैं.

संयुक्त राष्ट्र आईपीसीसी से जुड़े 600 से ज्यादा वैज्ञानिकों के अनुसार इस बात की संभावना 90% से ज्यादा है कि ग्लोबल वार्मिंग आदमी की करतूतों का नतीजा है. पिछली आधी सदी के दौरान विशेषतः कोयला और पेट्रोलियम जैसे जीवाश्म इंधनों को फूंकने से वातावरण में कार्बन डाइआक्साइड और दूसरी ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा खतरनाक स्तरों तक जा पहुंची है. मोटे अनुमान के अनुसार आज हमारी आबो-हवा में (उद्योग-पूर्व अवस्था की तुलना) में 30% से ज्यादा कार्बन डाइऑक्साइड मौजूद है. सामान्य स्थितियों में सूर्य से पहुंचने वाली ऊष्मा का एक हिस्सा हमारे वातावरण को जीवनोपयोगी गर्मी प्रदान करता है और शेष विकिरण धरती की सतह से टकराकर वापस अंतरिक्ष में लौट जाता है. वैज्ञानिकों के अनुसार वातावरण में मौजूद ग्रीन हाउस गैसें इस लौटने वाली अतिरिक्त ऊर्जा को सोख रही हैं जिससे धरती की सतह का औसत तापमान बढ़ रहा है. ऐसी आशंका है कि इक्कीसवीं सदी के अंत तक पृथ्वी के औसत तापमान में 1.1 से 1.6 डिग्री सेंटीग्रेड की बढ़ोतरी हो जाएगी. भारत में बंगाल की खाड़ी के आसपास यह वृद्धि 2 डिग्री सेंटीग्रेड तक होगी जब कि हिमालयी क्षेत्रों में पारा 4 डिग्री सेंटीग्रेड तक चढ़ जाएगा. अंकों में यह वृद्धि भले ही मामूलीसी लगे लेकिन यह समस्या इतनी गंभीर है कि समुचित ध्यान न देने पर समूची मानव सभ्यता में भारी उलटफेर करने की क्षमता रखती है. गौरतलब है कि 20 हजार वर्ष पूर्व आए एक लघु हिमयुग के दौरान पृथ्वी का औसत तापमान आज से मात्र 6 से 8 डिग्री सेंटीग्रेड कम था, लेकिन इसके असर से समूचे जीव जगत की तस्वीर बदल गयी थी. आज मौसम के अप्रत्याशित व्यवहार को भी ग्लोबल वार्मिंग से जोड़ा जा रहा है. सूखा, अतिवृष्टि, चक्रवात और समुद्री हलचलों को वैज्ञानिक तापमान वृद्धि का नतीजा बताते हैं. पिछले छह दशकों में ध्रुवीय बर्फ भंडारों में जबर्दस्त गिरावट दर्ज की गयी है. जलवायु परिवर्तन का प्रभाव खास तौर पर जीव-जंतुओं और पौधों पर दिखायी देने लगा है. मेढ़क से लेकर फूलदार पौधों तक में प्रकट हो रहे ये बदलाव असम्बद्ध घटनाएं नहीं हैं वरन् ग्लोबल वार्मिंग के संकेत चिन्ह हैं.

ढाई हजार किलो मीटर में फैली हिमालयी पर्वतमालाओं में जलवायु परिवर्तन और तापमान वृद्धि के अनेक लक्षण दिखाई दिए हैं. ग्लेशियर तेजी से सिकुड़ रहे हैं और वृक्ष-

रेखा ऊपर की ओर सरकती जा रही है. गंगा का पवित्र उद्गम गोमुख ग्लेशियर पिछली एक सदी में 19 किलोमीटर से ज्यादा सिकुड़ गया है और आज इसके सिकुड़न की रफ्तार लगभग 30 मीटर प्रतिवर्ष है. यदि ग्लेशियरों के पिघलने की यही रफ्तार बनी रही तो सन् 2035 तक मध्य और पूर्वी हिमालय के सारे ग्लेशियर लुप्त हो जाएंगे.

सिर्फ गंगोत्री ग्लेशियर ही नहीं सिकुड़ रहे हैं, बल्कि अन्य हजारों हिमालयी ग्लेशियर भी पीछे हटते जा रहे हैं. पिन्डारी, बारा शिंगरा, डोकरियानी, मेबोला, सोनापानी, मिलाप और जेमू क्रमशः 23, 36,18, 35, 17, 13 और 28 मीटर प्रतिवर्ष की दर से सिकुड़ते जा रहे हैं. यदि ग्लोबल वार्मिंग पर नियंत्रण नहीं किया गया तो नदियों में पहले तो बाढ़ आएगी और फिर वे सूख जाएंगी. समुद्र की सतह में बढ़ोतरी होगी और उपजाऊ भूमि बांझ बन जाएगी.

उदाहरण के तौर पर गंगा नदी को लें. उत्तरकाशी में गंगा के जल स्तर में 20-30 प्रतिशत वृद्धि का अनुमान है और उसके बाद धीरे-धीरे अगले ही दशक में इसका जल स्तर अपने मूल जल स्तर का आधा रह जाएगा जो क्रमशः नदी के सूखने का द्योतक है.

हिमालय की पहाड़ियों में लगभग 38,000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में ग्लेशियर हैं जो प्रतिवर्ष 800 घन किलोमीटर आयतन का जल-प्रवाह निर्माण करता है. यह भारत की महान संस्कृति का पोषण करता है. इन ग्लेशियरों का शुरू में तेजी से गलना नदियों में बाढ़ लाएगा और दो दशक बाद अर्थात सन् 2030 तक जब ग्लेशियर काफी पिघल चुके होंगे, स्थिति उल्टी हो जाएंगी और अनेक नदियां सूखकर केवल नाम की नदी रह जाएंगी.

ऐन्ड्रयू, चार्ली, केमिली, डायेन, कैटरीना, रीटा और फिर विल्मा ये नाम हैं उन तूफानों के जिन्होंने हाल ही में अमेरिका को तबाह कर के रख दिया. हद तो यह है कि समुद्री तूफानों के आने का मौसम अभी थमा नहीं है और आने वाले तूफानों के लिए अभी से कुछ नाम सुरक्षित कर लिए गये हैं, जैसे कि स्टैन, टैमी, विनस आदि. वैज्ञानिकों ने तूफानों के आने की जो वजह खोजी है उसके अुसार पिछले 35 वर्षों में समुद्र के सतह का औसत तापमान 0.5 डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ जाना है. जब कैटरीना ने तबाही मचायी थी, उस समय मैक्सिको की खाड़ी का पानी तीन डिग्री सेंटीग्रेड ज्यादा गर्म था. जब वायुमंडलीय प्रदूषण बढ़ता है तो सागर के पानी को भी गर्म कर देता है. जब समुद्र का ताप बढ़ता है तब हवा में पानी की मात्रा बढ़ जाती है. यह अतिरिक्त पानी से भरी हवा जब तटों पर आकर बरसती है तो विनाशकारी बाढ़ लाती है.

'एल निनों' और 'ला निनों' की प्रक्रियाएं प्रशांत महासागर के ठंडे और गर्म होने के मौसम से जुड़ी है. जो दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी हिस्से में मौसम के भीषण उलट-फेर को जन्म देती है.

ग्लोबल वार्मिंग और इससे जन्में 'मेल्टिंग आइस' और जलवायु परिवर्तन के लिए कौन जिम्मेदार है? इक्कीसवीं सदी की इस सब से बड़ी चिंता ने वैज्ञानिक विरादरी को कई खेमों में बॉट दिया है. हाल ही में जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र के अंतराष्ट्रीय पैनल ने इसके लिए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को जिम्मेदार ठहराते हुए चेताया कि आदमी को अब अपने औद्योगिक पापों की सजा भुगतने की तैयारी कर लेनी चाहिए. उधर वैज्ञानिकों का दूसरा खेमा ग्लोबल वार्मिंग को आदमी की करतूत मानने को तैयार नहीं. उनके अनुसार मानव जनित प्रदूषण से निःसंदेह थोड़ी-बहुत गर्मी जरूर पैदा हुई है लेकिन वैश्विक स्तर पर परिवर्तन के पीछे प्रमुखतः बाहरी अंतरिक्ष से आने वाले कॉस्मिक विकिरण के घटते-बढ़ते चक्र का हाथ है.

डेनमार्क के नेशनल स्पेस सेंटर के मौसम विशेषज्ञ हेनरिक स्वेंसमार्क ने अपनी ताजा प्रकाशित पुस्तक में जलवायु परिवर्तन की वैकल्पिक अवधारणा पेश करते हुए दावा किया है कि मौजूदा ग्लोबल वार्मिंग वायुमंडल से गुजरनेवाली कॉस्मिक किरणों में कमी के कारण पैदा हुयी है. ये किरणें वायुमंडल में मौजूद जलकणों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं और ये जलकण अंततः संघनित होकर बादल का रूप ले लेते हैं. अपने प्रयोगों से उन्होंने सिद्ध किया है कि पृथ्वी तक पहुंचने वाली कॉस्मिक किरणें सूर्य के चारों ओर चलने वाली चुंबकीय गतिविधियों से नियंत्रित होती है. जब सौर गतिविधि ज्यादा होती है तब विकिरण की मात्रा घट जाती है और इस कारण धरती को गर्मी से बचानेवाले बादल भी कम बनते हैं. इस के विपरीत कम सौर सक्रियता ज्यादा विकिरण और उसके समतुल्य ज्यादा बादलों के रूप में प्रकट होती है और परिणाम स्वरूप धरती अपेक्षाकृत ठंडी हो जाती है.

स्वेंसमार्क जलवायु परिवर्तन के लिए मानव गतिविधियों से होनेवाली कार्बन डाइआक्साइड की भूमिका को पूरी तरह अस्वीकार तो नहीं करते, लेकिन मानव-जनित कारकों की भूमिका को ऊँट के मुंह में जीरे से अधिक नहीं मानते. स्वेंसमार्क कहते हैं कि जलवायु परिवर्तन पर खतरे की घंटी बजाने वालों ने अपनी गणनाओं में कॉस्मिक विकिरण की घट-बढ़ से होने वाले तापमान परिवर्तन को शामिल नहीं किया. वह बताते हैं कि बीते कुछ दशकों से कॉस्मिक किरणों में कमी का दौर चल रहा है, जिस कारण पृथ्वी के इर्द-गिर्द

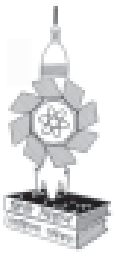

इनसे पैदा होने वाले बादल पर्याप्त मात्रा में नहीं बन रहे. ये बादल सूर्य से पहुंचने वाली गर्मी के एक हिस्से को परावर्तित कर देते हैं और धरती की सतह को ज्यादा गर्म नहीं होने देते. स्वेंसमार्क के शब्दों में 'लंबे समय से यह माना जाता रहा है कि बादल जलवायु परिवर्तन से पैदा होता हैं. लेकिन हम देख रहे हैं कि अब बादलों के हाथ में जलवायु परिवर्तन की डोर हैं. हाल ही में स्वेंसमार्क ने कॉस्मिक किरणों से बादल बनने की परिघटना पर पिछले पांच वर्षों के दौरान किए गए अपने शोध को प्रकाशित किया और अब जलवायु परिवर्तन के नए सिद्धांत के साथ उनकी पुस्तक 'द चिलिंग स्टार्स : ए न्यू थ्योरी ऑफ क्लाइमेट चेंज' धमाका करने जा रही है. दुनिया भर के 60 से ज्यादा वैज्ञानिकों की एक टोली स्विटजरलैंड की राजधानी जिनेवा स्थित पार्टिकिल एक्सलेरेटर में बादलों पर होने वाली कॉस्मिक किरणों के प्रभाव को मापने की तैयारी कर रही है. उन्हें उम्मीद है कि यह प्रयोग ग्लोबल वार्मिंग संबंधी प्रचलित अवधारणा पर पुनर्विचार के लिए वैज्ञानिकों को प्रेरित करेगा.

स्वेंसमार्क कहते हैं कि 'धरती में मौजूद बर्फ की प्राचीन परतें जलवायु में बार-बार होने वाले परिवर्तनों का सबूत देती हैं.' पिछले एक हजार वर्षों के बाद हाल के दशकों में सौर सक्रियता में जबर्दस्त तेजी आई है. बेशक मानव गतिविधियों का जलवायु पर असर पड़ता है लेकिन कॉस्मिक किरणों के बड़े प्रभाव को शामिल किए बिना ग्लोबल वार्मिंग संबंधी हमारे नतीजे गलत होंगे. दूसरी ओर कुछ अन्य मौसम वैज्ञानिकों ने स्वेंसमार्क के दावों को सरासर गलत बताते हुए कहा है कि वह स्वयं कॉस्मिक किरणों के प्रभाव को नमक-मिर्च लगाकर पेश कर रहे हैं.

कुछ अन्य वैज्ञानिक आसमान की ऊंचाई से बादलों में झांक रहे हैं. उनके सामने एक रहस्य हैं. उनकी खोज ग्लोबल वार्मिंग यानि गर्म होती धरती के जिम्मेदार कारण खोजने से जुड़ी है. वैज्ञानिकों के सामने रहस्य यह है कि उन्हें आर्कटिक पर बादलों में पानी की बूंदे मिली हैं. चूंकि उत्तरी ध्रुव इस स्थान से महज 685 मीटर दूर है, इसलिए इस पानी को परंपरागत वैज्ञानिक समझ के अनुसार बर्फ के रूप में जमा हुआ रहना चाहिए था, परंतु इस समझ के विपरीत आर्कटिक पर बादलों में पानी तरल बूंदों के रूप में मौजूद हैं. इसलिए एक परिवर्तित नीले कार्गो कन्टेनर पर सवार वैज्ञानिक इस पर विचार कर रहे हैं कि लगातार गर्म होती धरती के पीछे बादल ही तो जिम्मेदार नहीं है.

वैज्ञानिक टेनिल उट्टल इस खोज को काफी महत्व दे रहे हैं. वे यूएस नेशनल ओशेनिक एंड एटमोसफेरिक ऐडमिनिस्ट्रेशन की अर्थ सिस्टम्स रिसर्च लेबोरेटरी के क्लाउड एंड आर्कटिक रिसर्च ग्रूप के हैं. उनकी टिप्पणी है कि आर्कटिक पर स्थित बादलों में बेहद ठंडे पानी की मौजूदगी अजूबा है. यहां तक कि शून्य से भी तीस डिग्री सेल्सियस नीचे तापमान पर भी बादलों में पानी तरल अवस्था में मिला है. उट्टल इस परिघटना को दूरगामी परिणाम से जोड़कर देख रहे हैं. उनका कहना है कि आर्कटिक के बेहद ठंडे वातावरण में भी हिम के क्रिस्टल की जगह अगर बादल में पानी की तरल बूंदे ही भरी हों तो यह स्थिति बेहद महत्वपूर्ण हो जाती है. दरअसल इसी स्थिति पर यह निर्भर करता है कि बादल फिर पृथ्वी और पर्यावरण की ओर कितना विकिरण जाने देंगे और कितना रोक पायेंगे. उट्टल ने नोट किया है कि पानी भरे बादल बर्फीले बादलों की तुलना में आर्कटिक के वातावरण को ज्यादा गर्म करने से सक्षम है. इसकी वजह यह है कि पानी वाले बादल पृथ्वी की सतह से उठने वाली ऊष्मा को ज्यादा ग्रहण करने की क्षमता रखते हैं. इससे वे एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि बादलों में बर्फ और पानी का अनुपात आर्कटिक के वातावरण का तापमान नियंत्रित करने में और फिर उसके पिघलने की स्थिति तय करने के लिहाज से महत्वपूर्ण है.

कुछ विशेषज्ञ ऐसे भी है जो मौसम बदलाव के पीछे ग्रीन हाउस गैसों की अवधारणा को वेबुनियाद बताते हैं. उनके अनुसार मौसम परिवर्तन की व्यवस्था दिन, साल और यहां तक कि सदियों के पैमाने पर भी नहीं की जा सकती. मौसम और जलवायु परिवर्तन बेहद जटिल प्रक्रियाएं हैं और अभी हम ठीक से इसे समझ नहीं पाये हैं. इन विशेषज्ञों के अनुसार जलवायु में बदलाव कोई पहली बार नहीं हुआ है. पहले भी कभी भूवैज्ञानिक ऐसे परिवर्तनों से दो-चार हुए हैं. बदलाव की जानकारी का आसानी से उपलब्ध होना भी हमें ऐसा सोचने पर मजबूर कर रहा है कि मौसम में अप्रत्याशित बदलाव हो रहे है. वे कहते हैं कि जलवायु परिवर्तन की जड़े मानव इतिहास से भी पीछे जाती हैं और हम नहीं जानते हैं कि ऐसा क्यों होता है. कुछ वैज्ञानिक इस परिघटना के पीछे सूर्य के ऊर्जा उत्पादन में होने वाले उतार-चढ़ाव को जिम्मेदार मानते हैं तो कुछ इसे पृथ्वी की कक्षा में बदलाव या ज्वालामुखीय गतिविधियों या फिर उल्का पिंडों से जोड़ते हैं. फिर भी इस में दो राय नहीं कि संप्रति विश्व के अधिकांश वैज्ञानिक आज के प्राकृतिक बदलावों के पीछे सबसे बड़ा कारण औद्योगिक गतिविधियां मानते हैं. आर्थिक विकास और प्राकृतिक वातावरण के स्वास्थ्य का संतुलन बनाना थोड़ा मुश्किल काम है, पर मुश्किलों से जुझना ही इंसान की फितरत हैं.

संतुलित भोजन से करें कैंसर बचाव

डॉ. हेमलता पन्त
वैज्ञानिक, सोसाइटी ऑफ बॉयलाजिकल साइंसेज एण्ड रूरल डेवलपमेंट,
10/96, गोला बाजार, झूँसी, इलाहाबाद, पिन-211019, उत्तर प्रदेश
Email: pant_hemlata@yahoo.co.in

कैंसर एक गंभीर रोग है और दुर्भाग्यवश अब तक इस रोग के निवारण की कोई कारगर चिकित्सा की खोज नहीं की जा सकी है. कैंसर पूरी दुनिया में हृदय रोगों के बाद मौत का सबसे महत्वपूर्ण कारण है. हमारे देश में अब तक लगभग 30 लाख से अधिक ऐसे रोगियों की पहचान की जा चुकी है जो कैंसर से पीड़ित हैं. और हर वर्ष लगभग 7 लाख कैंसर के नये मामले सामने आ रहे हैं. इनमें मुख के कैंसर तथा महिलाओं में स्तन कैंसर के सर्वाधिक मामले प्रकाश में आ रहे हैं.

कैंसर शरीर के किसी भी अंग में हो सकता है. हमारा शरीर कोशिकाओं से मिलकर बना होता है. शरीर में कोशिकाओं के अनेक समूह होते है जो विभाजित होते रहते है. प्रत्येक कोशिका का एक लक्ष्यपरक विभाजन होता है जो लक्ष्य पूरा होने के बाद अपने आप बन्द हो जाता है. किन्तु कभी कभी हमारी कोई एक कोशिका लक्ष्यहीन हो निरंतर और बिना रूके विभाजित होने लगती है (एक से असंख्य संख्या तक), तो इसे कैंसर कारक कोशिका कहते हैं. ऐसी दिशाहीन कोशिकायें असामान्य रूप से विभाजित होकर शरीर की विभिन्न स्वस्थ कोशिकाओं, ऊतकों तथा अंगों को क्षतिग्रस्त कर नष्ट करने लगती है. हर मनुष्य के शरीर में कैंसर कोशिकायें होती हैं, जो विभाजित होती रहती है और औसतन हमारे शरीर में लगभग 10 बार ऐसा हो सकता है इसका अर्थ यह है कि हम सभी में लगभग दस बार कैंसर शुरू तो होता है, लेकिन हमारे शरीर का मजबूत इम्यून सिस्टम या रक्षा संस्थान इन लक्ष्यहीन काशिकाओं की पहचान कर उनका विभाजन रोक कर कैंसर को पनपने ही नहीं देता, इसलिए हर व्यक्ति को कैंसर नहीं होता है. कैंसर रोग होने के कारणों का अभी तक पूरा ज्ञान उपलब्ध नहीं है. वैज्ञानिकों के मतानुसार लगभग 50-60 % कैंसर सही व संतुलित आहार न लेने के कारण होता है.

लगभग 20% कैंसर (जिसमें यकृत, आमाशय, गर्भाशय, फेफड़े, त्वचा, गलनाल, ग्रीवा शामिल है) विभिन्न प्रकार के संक्रमणों से भी हो सकता है. यकृत कैंसर एक घातक रोग है, इससे प्रत्येक वर्ष लगभग 7 लाख लोगों की मृत्यु हो जाती है. इस कैंसर के होने का एक कारण हेपेटाइटिस-बी भी है. यदि हेपेटाइटिस-बी रोग का सही इलाज न हो तो यह यकृत कैंसर उत्पन्न कर सकता है. गर्भाशय कैंसर एक प्रकार के विषाणु पापिलोमा द्वारा भी हो सकता है. पेप्टिक अल्सर और गैस्ट्रिक कैंसर 'हेलिकोबैक्टर पाइलोरी' नामक जीवाणु द्वारा भी हो सकता है. एक सामान्य कोशिका कैंसर कोशिका में तभी बदलती है जब उस कोशिका के जीन में विकृति हो जाए. कैंसर कोशिकाओं में जीन विकृति आनुवांशिक होने के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण, गलत खान पान आदि की वजह से भी हो सकती है.

अमेरिका के कैलिफोर्निया स्थित लारेंस बर्कले नेशनल लेबोरेटरी के वैज्ञानिकों ने एक ऐसे सुपर जीन 'स्टाबी' (STABI) की खोज की है जो स्तन कैंसर का मूल कारण माना जा रहा है. इस जीन के कारण कैंसर शरीर के अन्य भागों में फैलता है और रोगी का बचना लगभग नामुमकिन हो जाता है. स्टाबी नामक यह जीन ट्यूमर के अन्दर ही कम से कम 1000 जीनों के व्यवहार को परिवर्तित कर देता है. जब यह जीन अतिसक्रिय हो जाता है तब यह कैंसर कोशिकाओं को विभाजित कर फैलाने लगता है किन्तु, जब सुप्त अवस्था में रहता है तब जीन कोशिकाओं को विभाजित तथा प्रसारित करना बंद कर देता है.

पुरूषों में जहाँ प्रोस्टेट ग्रन्थि के कैंसर का खतरा अधिक

होता है वहीं महिलायें स्तन, गर्भाशय व अण्डाशय कैंसर की समस्या से ज्यादा ग्रसित रहती हैं. अधिक शारीरिक भार वाले व्यक्तियों को पित्ताशय कैंसर तथा अधिक वसायुक्त खाद्य पदार्थ का सेवन करने वाले व्यक्तियों को बड़ी आँत के कैंसर होने का खतरा अधिक होता है.

आहार द्वारा कैंसर होने के कारण :- यदि विभिन्न खाद्य अनाजों में एस्पर्जिलस फफूँद का संक्रमण हो गया हो तो उनका प्रयोग न करें, क्योंकि यह फफूँद 'एफ्लाटॉक्सिन' नामक विष स्रावित करता है, जो यकृत कैंसर उत्पन्न कर सकता है. हमारे भोजन में 'विटामिन-ए' की कमी से फेफड़े का कैंसर तथा 'विटामिन-सी' की कमी से अग्नाशय कैंसर होने की आशंका बढ़ जाती है. 'विटामिन-ई' तथा 'सिलेनियम एण्टीऑक्सीडेन्ट' की कमी भी कैंसर होने की संभावना को बढ़ाती है. डिब्बा बंद भोज्य पदार्थों को तैयार करने के लिए ज्यादा तापमान, ऑक्सीकरण तथा पॉलीमराइजेशन प्रक्रियाओं का सहारा लिया जाता है और भोजन में अच्छे स्वाद तथा इसे अधिक समय तक सुरक्षित रखने व आकर्षक बनाने हेतु कुछ रसायन, रंग, खुशबू, रेजिन व प्रिजर्वेटिव मिलाये जाते है. किन्तु इससे भोज्य पदार्थों में कैंसर कारक तत्वों का निर्माण हो सकता है. आजकल नानस्टिक बर्तनों का प्रचलन भी बहुत बढ़ गया है, इनमें टैफलॉन की पर्त होने के कारण इन बर्तनों में बने भोज्य पदार्थों के सेवन से कैंसर होने की संभावना हो सकती है. एक ही तेल या घी को अधिक ताप पर यदि कई बार गर्म करें तो उसमें हानिकारक ऑक्सीडेन्ट उत्पन्न हो जाते हैं जो कैंसर का कारण हो सकते हैं. भोज्य पदार्थों को अधिक तापमान पर ग्रिल स्मोक्ड करने से भी कैंसर उत्पन्न करने वाले कारक उत्पन्न हो सकते हैं. इसी प्रकार बहुत अधिक मात्रा में मिर्च, मसाला व अचार प्रयोग करने से आमाशय व ग्रासनली के कैंसर की संभावना अधिक होती है. अधिक मात्रा में कॉफी का सेवन अग्नाशय कैंसर को उत्पन्न कर सकता है. अधिक तम्बाकू खाने वालों में मुँह के कैंसर का खतरा ज्यादा होता है. जबकि प्रतिदिन अत्यधिक मात्रा में शराब पीने वालों में यकृत, ग्रासनली व आमाशय कैंसर का खतरा होने की संभावना ज्यादा होती है. यदि तम्बाकू, सिगरेट तथा शराब तीनों का ही सेवन अधिक किया जाय तो मुँह, गले व स्वर तन्त्र के कैंसर होने की आशंका अधिक होती है.

शुरूवाती दौर में कैंसर के कोई स्पष्ट लक्षण प्रकट नहीं होते, लेकिन कुछ ऐसे लक्षण है जिन्हें कैंसर का संकेतक माना जाता है. जो निम्न हैः-

1. शीघ्र न भरने वाले घाव-मुख्य रूप से मुँह का छाला या जख्म. यदि आवाज में बदलाव या भारीपन जो 2-3 हफ्तें से ठीक न हो रहा हो . खाने में हो रही परेशानी जो 2-3 हफ्तें से ठीक न हो रही हो. निरन्तर खाने में अपच जो ठीक न हो रहा हो तथा खाँसी, या साँस फूलना जो 2-3 सप्ताह से ठीक न हो रहा हो.
2. शरीर के किसी अंग विशेष में गाँठ का निर्माण, विशेषकर स्त्रियों के स्तन पर.
3. असामान्य रूप से बार-बार रक्तस्राव, विशेषकर स्त्रियों में मासिक धर्म के स्थायी रूप से बन्द हो जाने के बाद और उल्टी में.
4. शारीरिक भार में लगातार कमी या कोई असामान्य परेशानी.
5. सदा बलगम निकलना या खून मिश्रित बलगम निकलना.
6. शौच क्रिया का असामान्य होना.
7. तिल या मस्से के आकार या रंग में परिवर्तन.

कैंसर से बचाव हेतु आवश्यक भोजनः-

सब्जियों तथा फलों में विभिन्न प्रकार के फाइटोकेमिकल्स या फाइटोन्यूट्रिएन्ट्स, कैरोटीनॉयड्स, फीनोलिक अम्ल, सल्फर यौगिक, पोषक तत्व तथा शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेन्ट्स पाये जाते हैं. यदि इनका सेवन प्रतिदिन के आहार में सही मात्रा में किया जाय तो कैंसर से बचाव संभव है. नेशनल कैंसर इंस्टीट्यूट ऑफ कीमोप्रिवेन्शन प्रोग्राम, डिवीजन ऑफ कैंसर प्रिवेन्शन एण्ड कन्ट्रोल, अमेरिका द्वारा हुए शोध से यह पता चला है कि फाइटोकेमिकल्स, मानव शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली (इम्यून सिस्टम) में वृद्धि करता है.

कैरोटिनॉयडस शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट होते हैं. ये सब्जियों में पीले, लाल तथा नारंगी पिगमेंट के रूप में पाये जाते है. कैरोटीन प्रमुख कैरोटिनॉयड है जो विटामिन-ए का मुख्य स्रोत है. इसके अतिरिक्त सब्जियों में - कैरोटीन, लाइकोपीन, लूटिन, सीजैन्थीन, - क्रिप्टोजैन्थीन आदि कैरोटिनॉयड्स पाये जाते हैं. इनमें से - कैरोटीन, - कैरोटीन तथा - क्रिप्टोजैन्थीन विटामिन-ए में बदल जाते हैं. जबकि अन्य में विटामिन-ए नहीं पाया जाता है. ये केवल एंटीऑक्सीडेन्ट्स का कार्य करते हैं.

एंटीऑक्सीडेन्ट्स शरीर में उपस्थित हानिकारक पदार्थों जैसे फ्री-रेडिकल्स (ऑक्सीडेन्ट) को बाहर निकालते हैं, तथा ऑक्सीकरण की क्रिया को कम करते हैं. फ्री-रेडिकल्स ऑक्सीकरण क्रिया द्वारा शरीर की कोशिकाओं को हानि पहुँचाते हैं, जिससे शरीर में थकावट महसूस होती है. बहुत से बाह्य कारक जैसे प्रदूषण, धूम्रपान, तनाव, जलन तथा कार्सिनोजेन्स के कारण हमारे शरीर मे फ्री-रैडिकल्स की वृद्धि होती है, परिणाम स्वरूप ऐसे कारकों की अधिकता से

तालिका 1 : विभिन्न प्रकार के फाइटोकेमिकल्स का लाभकारी प्रभाव

क्र.सं.	फाइटोकेमिकल	स्रोत	लाभकारी प्रभाव
1.	इण्डोल	ब्रूसेल्स स्प्राउट ब्रोकली, पत्तागोभी	फेफड़े के कैंसर में लाभकारी
2.	स्पोनिन	बीन्स	यह कैंसर कोशिकाओं में डी.एन.ए. रेप्लीकेशन को रोककर कैंसर को फैलने से रोकता है.
3.	एलील सल्फाइड	लहसुन, प्याज, रेशेदार सब्जियाँ	उदर कैंसर हेतु लाभकारी
4.	लाइकोपीन	टमाटर, मिर्च तरबूज	गले व प्रोस्टेट ग्रन्थि के कैंसर में लाभदायक
5.	टारपीन	पालक	कैंसर से बचाव
6.	एलोजिक अम्ल	अनार	कैंसर से बचाव

हमारे शरीर की प्राकृतिक शक्ति या क्रियाशीलता का ह्रास होता है, अतः ऐसी दशा में हमें अपने आहार के रूप में पर्याप्त मात्रा में एण्टीऑक्सीडेंट लेना चाहिए जो केवल सब्जियों तथा फलों से प्राप्त होते हैं.

विभिन्न प्रकार के फाइटोकेमिकल्स, फीनॉलयुक्त यौगिक व पोषकीय तत्वों के स्रोत व उनका लाभकारी प्रभाव तालिका 1, 2 व 3 में दिया गया है.

विभिन्न प्रकार के खाद्य मशरूम जैसे 'श्वेत बटन मशरूम' (एगैरिकस बाइस्पोरस), 'ओयेस्टर मशरूम' (प्ल्यूरोट्स प्रजाति) तथा 'शिटाके मशरूम' (लेन्टीनस इडोडस) में ऐसे पॉली सेकेराइड्स पाये जाते हैं जो ट्यूमर की वृद्धि को कम करने में लाभकारी साबित हो रहे हैं. इसी प्रकार 'लाल मशरूम' (गैनोडर्मा ल्यूसिडम), 'पफबल मशरूम' (कालबेटिआ गिगेन्टिआ) और 'हिप्सी जायगस' मशरूमों में क्रमशः 'गैनोडर्मिन', 'कैल्विसिन' तथा 'बीटा ग्लूकेन' जैसे फाइटोकेमिकल व पोषक तत्व पाये जाते हैं जो कैंसर की रोकथाम हेतु प्रयोग किये जा रहे हैं, अतः इन मशरूमों को हम अपने आहार में शामिल कर सकते हैं, जिससे कैंसर

तालिका 2 : विभिन्न प्रकार के फीनॉलयुक्त यौगिकों का लाभकारी प्रभाव

मौलिक अंश	यौगिक	स्रोत	प्रभाव
एन्थोसायनिडिन्स	सायनिडिन, मालविडिन डेलफिनिडिन पिलरगोनिडिन पिओनिडिन, पिट्यूनिडिन	लाल, नीले व बैगनी फल, सेब अंगूर, पुलम, अनार, स्ट्राबेरी, ब्लैक बेरी, ब्लूबेरी	कैंसर में लाभ
फ्लैवन-3-ओल्स	इपीकेटचिन, इपीगैलोकेटचिन, कैटचिन, गैलोकैटेचिन	सेब, ब्लैकबेरी, पुलम, स्ट्राबेरी, खुर्बानी	कैंसर में लाभ
फ्लैवानोन्स	हेस्परेटिन, हारेनजनिन इरिओडिक्टिओल	नीबू, संतरा, अंगूर	कैंसर से बचाव
फ्लैवोन्स	लूटिओलिन, एपीजिनिन	अमरूद, पालक, पीपर, सेलरी, पासर्ले	कैंसर से बचाव
प्रोएन्थो-सायएसिन्स	टैनिन्स	अमरूद, सेब, अनार	कैंसर से बचाव
फ्लैवोनोल्स	क्यूरसिटिन, केम्पफोरोल रूटिन, मायरिटिन	प्याज, बीन्स, ब्रोकली, केल, पीपर, लिट्यूस	कैंसर से बचाव
फीनोलिक अम्ल	कैफिक अम्ल, क्लोरोजेनिक अम्ल, कोयूमारिक अम्ल, इलाजिक अम्ल	सेब, नाशपाती, पुलम, चेरी, स्ट्राबेरी, ब्लैकबेरी	कैंसर से बचाव

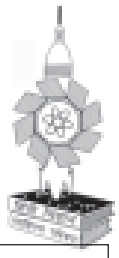

तालिका 3 : विभिन्न प्रकार के फाइटोकेमिकल्स का लाभकारी प्रभात

स्रोत	लाभकारी
पीले-नारंगी फल, आम, पपीता, गाजर, हरी पत्तीदार सब्जियाँ, हरी सरसों, सलाद, विन्टर स्वैश, केला, पीलाकद्दू, तरबूज, खरबूज, खुर्बानी, स्विसचार्ड, पालक, लालमिर्च, ब्रोकली, शकरकन्द	**प्रभाव** फेफड़े व मुँह के कैंसर से बचाव
संतरा, नीबू, मुसम्बी, ऑवला, हरी मिर्च, हरी सब्जियाँ, पत्तागोभी, करेला, ब्रोकली, ब्रूसेल्स, स्प्राउट	आमाशय के कैंसर से बचाव
अंकुरित अनाज, दालें, दूध, चना, मक्का, पत्तीदार सब्जियाँ, शकरकन्द, बादाम, अखरोट, सूखी सेम	

होने से बचाव हो सके.

कुछ नये अनुसंधानों के परिणामः-

कैंब्रिज विश्वविद्यालय, लंदन के मुख्य शोधकर्ता रार्बट थामस व उनके दल ने अपने शोध अध्ययन के उपरान्त यह निष्कर्ष दिये हैं कि अनार, हरी चाय, हल्दी व ब्रोकली का सेवन करने से कैंसर पर नियंत्रण किया जा सकता है. शोधकर्ताओं ने सर्जरी तथा रेडियोथेरेपी की प्रक्रिया से गुजर चुके कई कैंसर पीड़ितों को इन चारों खाद्य पदार्थों के सत से बनी गोली प्रतिदिन दो बार छः महीने तक खिलाने के बाद पाया कि मरीजों के शरीर में पी.एस.ए. का स्तर 63 प्रतिशत तक कम हो गया.

यहां पी.एस.ए. एक प्रोटीन है, जिसे कैंसर की तीव्रता मापने का एक पैमाना माना जाता है. शोधकर्ताओं के अनुसार उपरोक्त चारों खाद्य पदार्थ पॉलीफेनॉल से भरपूर है. एंटीऑक्सीडेन्ट गुणों से भरपूर पॉलीफेनॉल ऑक्सीकरण की प्रक्रिया और कार्सिनोजन (कैंसर उत्पन्न करने वाले रसायन) से होने वाली हानि से डी.एन.ए.की सुरक्षा करते हैं. यह कैंसर ग्रस्त कोशिकाओं को खत्म भी करता है तथा इसके फैलाव को रोकने में भी सफल पाया गया है. कैंसर को घटाने हेतु सामान्यतः कीमोथेरेपी ओर रेडियोथेरेपी जैसी प्रक्रियाओं का सहारा लिया जाता है जिसके कई पार्श्व प्रभाव भी हो सकते हैं, अतः उपरोक्त नई खोज इस दिशा में काफी मददगार साबित हो सकती है.

इस्टीट्यूट ऑफ फूड साइंस टेक्नोलॉजी एंड न्यूट्रीशन, लंदन के शोधकर्ताओं ने अपने शोध अध्ययन के उपरान्त यह पाया कि चाकलेट में पाये जाने वाले तत्व कोको के सेवन से ऑत के कैसर में बचाव हो सकता है. इस शोध के प्रमुख शोधकर्ता मार्टिन एरिबस ने चूहों को आठ हफ्तों तक ऐसा आहार दिया जिसमें कोको की अधिक मात्रा थी. इन चूहों में पहले से ही कैंसर था. कोको युक्त आहार के सेवन से चूहों में ऑत का कैंसर खत्म हो गया. यह संभवतः कोको में पाये जाने वाले फाइटोकेमिकल के कारण संभव हुआ. अभी तक ऑत में होने वाले कैंसर का कोई प्रभावशाली इलाज नहीं है, अतः यह खोज महत्वपूर्ण है.

विश्व कैंसर रिसर्च फंड के शोधकर्ताओं ने अपने शोध निष्कर्ष के आधार पर यह बताया कि भोजन में नमक या लवण युक्त पदार्थो में कटौती करने से पेट में होने वाले कैंसर की आशंका को कम किया जा सकता है. शोधकर्ताओं के अनुसार प्रतिदिन आहार में लिए जाने वाले नमक की औसतन मात्रा 6 ग्राम होनी चाहिए, लेकिन अधिकतर लोग 8.6 ग्राम नमक खाते हैं जो कि खतरनाक है, यदि खाने में प्रतिदिन 6 ग्राम नमक का सेवन किया जाय तो कैंसर के खतरे को 14% तक कम किया जा सकता है.

देश-विदेश में हुए शोधों से ज्ञात हुआ है कि अदरक में कैंसर से बचाव के गुण हैं. अदरक में एंटीऑक्सीडेन्ट तथा जिन्जरोल फाइटोकेमिकल पाया जाता है. इसके सेवन से कैंसर से बचाव में सहायक एन्जाइम सक्रिय होते हैं. अरदक अनाजों में लगने वाले फफूँद 'एस्पर्जिलस' को भी नष्ट करता है जो एफ्लाटॉक्सिन नामक जहरीला विष स्रावित करते हैं जो यकृत कैंसर का कारण है.

वैज्ञानिकों के निष्कर्ष के अनुसार प्रोबायोटिक पदार्थो (जैविक प्रतिरोधक क्षमता बनाने वाले पदार्थ) का सेवन करने से कैंसर में कमी आ सकती है. इन पदार्थों में उपस्थित लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया मनुष्य के अमाशय में पहुंचकर कैंसर उत्पन्न करने वाले तत्वों तथा कैंसर कारक बैक्टीरिया (हेलिकोबैक्टर पाईलोरी) की वृद्धि को रोकते हैं. ये पदार्थ कैंसर उत्पन्न करने वाली कोशिकाओं की अनियमित वृद्धि को रोक कर शरीर की कोशिकाओं को नष्ट होने से बचाते हैं. वैज्ञानिकों द्वारा हुए शोध के परिणाम द्वारा बाइफिड बैक्टीरिया द्वारा तैयार किये गए प्रोबायोटिक पदार्थों को

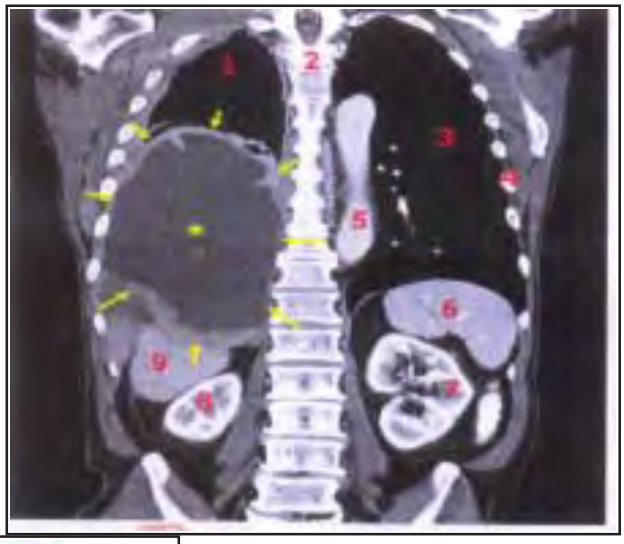

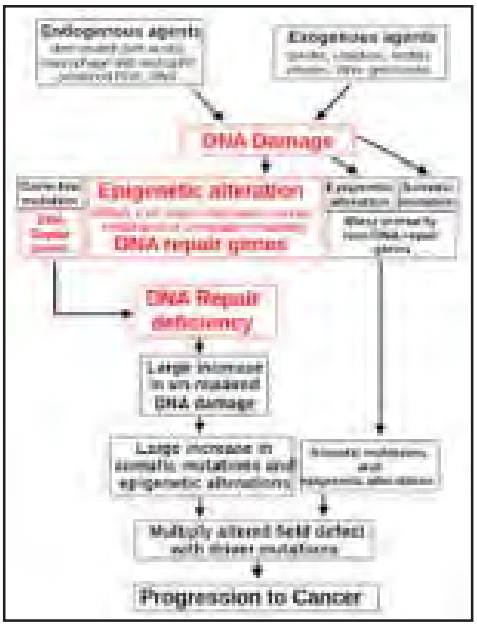

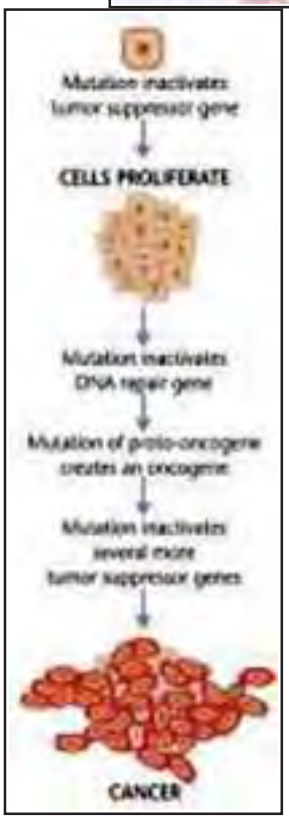

केमोथेरपी

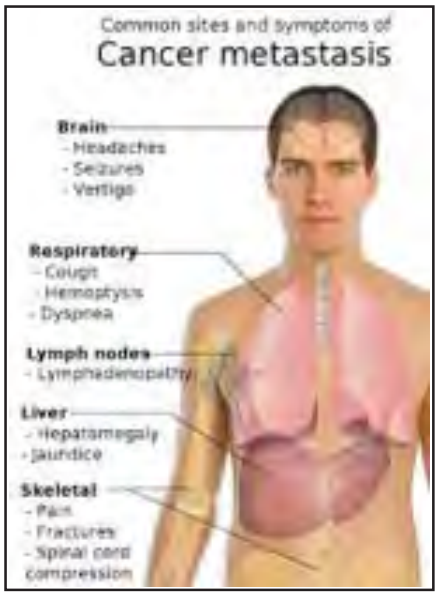

रिडीयेशन थेरेपी

सर्जरी

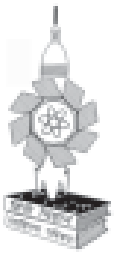

चूहों पर प्रयोग कर देखा गया. इनके सेवन से चूहों में आंत व स्तन ग्रंथियों के कैंसर में कमी देखी गयी.

शिकागों स्थित अमेरिकन सोसाइटी ऑफ क्लीनिकल आंकोलॉजी के शोधकर्ता डा0 सुरेन्द्र शास्त्री के अनुसार कैंसर की जाँच सिरका (विनेगर) से करना आसान हो सकती है. इनके अनुसार गर्भाशय के कैंसर के लिए पी.ए.पी. स्मीयर टेस्ट कराया जाता है, जिनके उपकरण बहुत महगें होते हैं. विनेगर टेस्ट में विनेगर कैंसर का संभावित खतरा झेल रहे ऊतकों को सफेद रंग में बदल देता है. यह परीक्षण बहुत सस्ता है, और इसके परिणाम एक मिनट में सामने आ जाते हैं.

उपचार

इस बीमारी से बचाव हेतु हमारे देश में सन् 1975 में राष्ट्रीय कैंसर बचाव कार्यक्रम की शुरुआत हुई. वर्तमान में कैंसर के इलाज की मुख्यतया तीन पद्धतियाँ प्रचलित है-

1. शल्य चिकित्सा
2. रेडियोथेरेपी
3. कीमोथेरेपी

कैंसर रोग के प्रारंभिक चरण में शल्य चिकित्सा सर्वाधिक प्रभावी चिकित्सा पद्धति है. लेकिन शल्य चिकित्सा के बाद शरीर में कितनी कैंसर कोशिकाये बची रह जाती हैं, यह पता करने का अभी कोई साधन नहीं है. रेडियोथेरेपी पद्धति भी कैंसर को ठीक करने का दूसरा प्रमुख उपाय है; और इसके लिए विशेष उपकरणों की आवश्यकता होती है. कीमोथेरेपी भी अब बहुत से कैंसर में उपयोगी है पर मुख्य रुप से यह रक्त कैंसर में ज्यादा प्रभावशाली होती है. कीमोथेरेपी में कैंसर से बचाव हेतु इंजेक्शन द्वारा उपचार किया जाता है.

यों तो कीमोथेरेपी तेजी से विभाजित होती कैंसर कोशिकाओं को रोकती और नष्ट करती है लेकिन साथ ही साथ शरीर की सामान्य कोशिकाओं को भी प्रभावित करती हैं. इसी प्रकार रेडियोथेरेपी में एक्स किरणों तथा विकिरणों द्वारा जहां कैंसर कोशिकाओं को जलाकर नष्ट किया जाता है वहीं ये शरीर की अन्य क्रियाशील कोशिकाओं और अंगों को भी प्रभाावित करते हैं. कैंसर रोधक दवायें यकृत, गुर्दे व फेफड़े आदि अन्य अंगों में भी पार्श्व प्रभाव डालती हैं. कैंसर रोधक दवाओं और विकिरण से ऐसे विषाक्त तत्व पैदा होते हैं जो हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को बहुत ही कमजोर बना देते हैं. अतः हमें अपना आहार संतुलित लेना चाहिए.

हमारे भोज्य पदार्थों में बहुत से ऐसे तत्व या पदार्थ होते हैं और हो सकते हैं जो कैंसर उत्पन्न करते हैं, लेकिन कैंसर होने के बाद उनका सेवन न करने से कैंसर रुकेगा, ऐसा नहीं है. कैंसर कारक तत्व कोशिकाओं के आहार में आवश्यक तत्व नहीं होते हैं. संतुलित व पोषकीय आहार की कमी कैंसर होने का कारण तो हो सकती है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि कैंसर होने के बाद यदि संतुलित आहार लिया जाय तो वे कैंसर के रोधक होंगे. हाँ! इतना अवश्य है कि संतुलित आहार तथा आहार में बदलाव कैंसर से लड़ने की हमारी शारीरिक क्षमता को काफी बढ़ा सकता है.

तम्बाकू का सम्बन्ध वैसे तो भोज्य पदार्थों से नहीं है लेकिन यदि तम्बाकू का सेवन बंद कर दिया जाय तो कैंसर के मरीजों की लगभग 50% संख्या में कमी हो सकती है. हमारे देश में लगभग 40% पुरुष और 20% महिलायें किसी न किसी रुप में वर्तमान में तम्बाकू का सेवन कर रहे हैं. तम्बाकू में निकोटिन (नशा पैदा करने वाला पदार्थ) के साथ-साथ 43 प्रकार के कैंसर उत्पन्न करने वाले कारक भी पाये जाते हैं.

कैंसर से बचाव हेतु भोज्य पदार्थों में अंकुरित अन्न, ताजा फल व कच्ची सब्जियाँ तथा फलों का प्रयोग अधिक करें, क्योंकि इनमें प्राकृतिक एंजाइम होते है जो उबालने पर नष्ट हो जाते हैं. पका हुआ भोजन कुल आहार का 30% तक ही ले तो अच्छा है.

शक्कर का सेवन कम करें क्योंकि यह मोटापे का भी कारण है. शक्कर कैंसर कारक नहीं, लेकिन मोटापा कैंसर कारक है. अतः शक्कर के स्थान पर गुड़, शहद, खांड या मुनक्का प्रयोग करें.

सफेद नमक भी कम मात्रा में ले यदि सफेद नमक के स्थान पर सेंधा नमक लें तो ज्यादा अच्छा होगा. हर्बल चाय का प्रयोग करें. यदि भुट्टे का नियमित सेवन किया जाय तो फेफड़े के कैंसर के संभावना 37% तक कम हो जाती है. मांस का प्रयोग न करें क्योंकि अपचे मांस से आंतों में जो विषैले पदार्थ उत्पन्न होते हैं जो कैंसर उत्पन्न करते हैं. मोटापे पर नियंत्रण, घर का बना भोजन प्रयोग किया जाय, डिब्बा बंद भोज्य पदार्थों तथा प्रसंस्कारित या परिरक्षित भोजन का कम से कम मात्रा में प्रयोग करें. अधिक वसा युक्त भोजन व जंक फूड से बचे. प्रदूषण रहित व तनाव मुक्त वातावरण में रहें.

हमारे खाद्य पदार्थों में कम से कम रसायनों या योगिकों का प्रयोग हो या कार्बनिक तथा जैविक खादों का प्रयोग हो तो इस बीमारी की संभावना कम से कम होती है.

अंत में सदैव प्रसन्न रहना तथा सकारात्मक सोच बनाये रखना भी इस रोग को कम करता है.

प्राकृतिक प्रकोप एवं मानवीय त्रुटियों की देन - केदारनाथ त्रासदी

डॉ. अखिलेश्वर कुमार द्विवेदी, डॉ. अभिषेक गोयल, डॉ. गणेश कुमार पाठक
प्राध्यापक भूगोल, भूगोल विभाग,
श्री अ.प्र.ब.राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अगस्त्यमुनि, रूद्रप्रयाग (उत्तराखण्ड), पिन कोड - 246421
ई-मेल :- dr.akdeivedi@gmail.com

उत्तराखण्ड और प्राकृतिक प्रकोप का चोली-दामन का साथ रहा है, यहां कभी भूकंप अपना कहर बरपाता है तो कभी गदेरे या तेज वर्षा मानव व भवनों को अपने साथ बहा कर ले जाते हैं. इधर कुछ वर्षों में यहां पर प्रकृति अपना रौद्र रुप दिखा रही है और विभिन्न क्षेत्रों में बादल फटने की प्रक्रिया व उनसे मानव तथा आर्थिक नुकसान की घटनाएं प्रबल हो गयी हैं.

दिनांक 16 व 17 जून 2013 को केदारनाथ घाटी क्षेत्र में आयी जल प्रलय विपदा ने भीषण त्रासदी को जन्म दिया जिसमें स्थानीय निवासियों के अतिरिक्त संपूर्ण देश व विश्व के विभिन्न देशों से आये कई लोग काल के गाल में समा गये, कई घायल हुए तो कई लापता हुए. इस जल-प्रलय को कुछ लोगों ने हिमालय सुनामी की संज्ञा प्रदान की तो कुछ लोगों ने दैवी प्रकोप माना. इस आपदा से संबंधित वैज्ञानिक दृष्टिकोण को यहां प्रस्तुत किया गया है.

आपदा की प्रक्रिया को समझने के पूर्व इससे संबंधित विभिन्न घटकों की जानकारी आवश्यक है, जो निम्नवत है -

तेज वर्षा से उत्पन्न उफनती गंगा का एक दृश्य

1. चोराबारी ग्लेशियर :- यह घाटी हिमनद है. 'जो कि 30^0 44' 50'' से 30^0 45' 30'' उ.अक्षांश एवं 79^0 01' 16'' से 79^0 05' 20'' पूर्वी देशान्तर के मध्य लगभग 7 किमी. लंबाई में अवस्थित है. इसके बेसिन का क्षेत्रफल लगभग 38 वर्ग किमी.में है. इसके 'हिम का फैलाव लगभग 5.9 वर्ग किमी. में है. इस ग्लेशियर का ढाल

लगभग 11'' दक्षिण-पूर्व की ओर को केदार नाथ मंदिर की दिशा में है. इस ग्लेशियर की मोटाई 30 मीटर से 75 मीटर है. पहले यह ग्लेशियर मूल रूप से एक ही था. समय के साथ-साथ जैसे-जैसे हिम रेखा पीछे की ओर खिसकती गयी वैसे-वैसे इस ग्लेशियर के दो भाग हो गये. बीच का भाग उठा हुआ है जिस पर शीत ऋतु में हिम की पतली परत जमा होती है तथा यह ग्रीष्म ऋतु में शेष दोनों ग्लेशियरों की अपेक्षा जल्दी पिघल जाती है. इस उठे हुए भाग में कुछ योगदान ग्लेशियर के निक्षेप से निर्मित हिमोढ़ का भी है. ग्लेशियर के दो भागों में दांयी ओर का ग्लेशियर मुख्य ग्लेशियर है जो चोराबारी ग्लेशियर के नाम से जाना जाता है. जबकि बायी ओर के ग्लेशियर को सहायक ग्लेशियर कहा जाता है.

बाढ़ की त्रासदी के पश्चात केदारनाथ मंदिर और आसपास के परिसर की तबाही का दृश्य

मुख्य ग्लेशियर (चोराबारी ग्लेशियर) चोराबारी ताल (गांधी सरोवर) के समीप से गुजरता हुआ दक्षिण की ओर ताल के दक्षिणी-पूर्वी सिरे से लगभग 2 किमी.नीचे तक गया है.

2. चोराबारी ताल (गांधी सरोवर) :- इस ताल को गांधी सरोवर भी कहते हैं. वर्ष 1948 में महात्मा गांधी क़ी अस्थियों व राख को इस सरोवर में विसर्जित किया गया था तब से इसका नाम गांधी सरोवर हो गया है. इसका पूर्व नाम चोराबारी ताल/झील है. यह झील केदारनाथ मंदिर से लगभग 4 किमी. दूर उत्तर-पश्चिम में स्थित है. इस झील/ताल/सरोवर को जल की प्राप्ति चोराबारी ग्लेशियर व इसके चतुर्दिक जमा हिम के पिघलने से होती है. इसके अतिरिक्त वर्षा से भी इस सरोवर को जल की प्राप्ति होती है. 'इस ताल की लंबाई 400 मी. व चौड़ाई लगभग 200 मीटर तथा गहराई 15-20 मीटर है.' इसकी तलहटी में बोल्डर व कीचड़ मिश्रित रूप में है. यह सरोवर समुद्र तल से लगभग 3960 मीटर की ऊंचाई पर है. इस ताल की पश्चिमी सीमा व दक्षिणी-पश्चिमी सीमा (दीवार) कटोर चट्टान द्वारा बनी है. जबकि पूर्वी व दक्षिणी-पूर्वी सीमा चोराबारी ग्लेशियर व हिमोढ़ द्वारा निर्मित है. 17 जून की आपदा के पश्चात इस ताल का अस्तित्व समाप्त हो गया है.

3. मन्दाकिनी नदी :- चोराबारी ग्लेशियर एवं चोराबारी ताल (गांधी सरोवर) मन्दाकिनी के उदगम स्रोत है. मन्दाकिनी नदी उद्गम स्रोत से दक्षिण की ओर केदारनाथ मंदिर के पीछे से होते हुए पुनः थोड़ा दक्षिण एवं दक्षिण-पश्चिम होते हुए केदारनाथ मंदिर से (पश्चिम में) वक्राकार मार्ग बनाते हुए दक्षिण-पूर्व की ओर आगे प्रवाहित हो जाती है, और इस प्रवाह के क्रम में सरस्वती नदी में केदारनाथ मंदिर के ठीक पीछे (उत्तर-पश्चिम में) मिलती है.

4. सरस्वती नदी :- सरस्वती नदी का उद्गम सहायक ग्लेशियर से होता है. यह नदी उद्गम स्थान से थोड़ा पूर्व में जाकर पुनः दक्षिण-पूर्व दिशा में वक्री मार्ग बनाते हुए दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित होती हुई केदारनाथ मंदिर के पीछे मन्दाकिनी नदी में मिलकर आगे की ओर प्रवाहित होती है. इसमें मन्दाकिनी नदी की अपेक्षा जल की मात्रा काफी कम रहती है.

केदारनाथ मंदिर क्षेत्र :- यह मन्दिर क्षेत्र मन्दाकिनी नदी घाटी में 30^0 44' 57'' उत्तरी अक्षांश तथा 79^0 04' 01'' पूर्वी देशान्तर पर स्थित है जो कि समुद्र तल से लगभग 3583 मीटर की ऊंचाई पर है. केदारनाथ नगरीय क्षेत्र मन्दाकिनी एवं सरस्वती नदियों के हिमनद अवक्षेप में स्थित हैं. जो पश्चिम में मंदाकिनी एवं पूर्व में सरस्वती नदी के प्रवाह मार्ग के मध्य में है. प्राचीन काल में मन्दाकिनी नदी एवं सरस्वती नदियों का संगम मंदिर के पीछे (उत्तर) नहीं होता था. वास्तव

में सरस्वती नदी केदारनाथ मंदिर के पूर्व से प्रवाहित होती थी तथा मन्दाकिनी नदी केदारनाथ मंदिर के पश्चिम प्रवाहित होती थी और इन दोनों नदियों का संगम केदारनाथ के आगे (दक्षिण) होता था. कुछ समय अन्तराल के पश्चात कुछ भौगोलिक एवं पर्यावरणीय कारकों के कारण सरस्वती नदी का मार्ग परिवर्तित हुआ और यह अपने पुराने मार्ग से विमुख होकर मन्दाकिनी नदी के प्रवाह मार्ग का अनुसरण करती थी किन्तु 16 व 17 जून 2013 की बाढ़ के पश्चात मन्दाकिनी एवं सरस्वती नदियों का प्रवाह सरस्वती नदी के पुराने मार्ग से हो रहा है.

आपदा के कारक - केदारनाथ क्षेत्र में आई आपदा के दो प्रमुख कारक थे.

(अ) प्राकृतिक एवं (ब) मानवीय कारक

(अ) प्राकृतिक कारक के प्रमुख घटक निम्नवत हैं :-

1. हिमपात एवं हिम का पिघलना :- साधारणतया वर्ष भर में सूर्य की माध्य स्थिति पृथ्वी के परिप्रेक्ष्य में 23.5^0 उत्तर अक्षांश से 23.5^0 दक्षिण अक्षांश के मध्य रहती है. लगभग 14 जनवरी के पश्चात सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध की ओर अग्रसर होने लगता है और धीरे-धीरे, मई व जून के महीनों में यह लगभग कर्क रेखा (23.5^0 उ.अक्षांश) के ऊपर पहुंच जाता है अक्टूबर से मध्य अप्रैल तक केदारनाथ क्षेत्र में अत्यधिक बर्फबारी होती है जिस कारण वहां मनुष्य एवं अन्य जीव प्रवास नहीं कर सकते. वर्ष 2012-13 में अन्य वर्षों के अपेक्षा अधिक मात्रा में बर्फबारी भी हुई.

मई व जून के महीनों में उच्च पर्वतीय क्षेत्रों (हिमालय पर्वत) में स्थित हिम ऊष्मा पाकर पिघलने लगते हैं. ये हिम विभिन्न रूपों जैसे हिम शिखर, हिमनद (ग्लेशियर) आदि रूपों में विद्यमान रहते हैं. पिघलने के पश्चात ये जल में परिवर्तित होकर विभिन्न गदेरों, छोटी एवं बड़ी नदियों के रूप में आकर आपस में मिलते हैं. गर्मी के मौसम के कारण हिम का पिघलाव तेजी से होता है फलस्वरूप नदियों के जल का आयतन भी बढ़ जाता है. केदारनाथ क्षेत्र में हिम कई रूपों में जमा रहता है और ग्रीष्म ऋतु में ये तेजी से पिघलते हैं.

2. ग्लेशियरों का अपरदन एवं परिवहन कार्य :- समुद्र तल से 3800 मी.की ऊंचाई से हिमनद की प्रक्रिया प्रभावी होना प्रारंभ हो जाती है, चुकि केदारनाथ घाटी क्षेत्र में मुख्य रूप से चोराबरी ग्लेशियर व सहायक ग्लेशियर है जो कि समुद्र तल से 3800 मी. से अधिक की ऊंचाई पर है इनके द्वारा अपरदनात्मक कार्य भी सम्पादित होता है. इन हिमग्लेशियरों में छोटे, मध्यम व बड़े आकार के कंकड़,

पत्थर व शैल मिश्रित रूप में होते हैं जो हिमग्लेशियर के अपरदन यंत्र के रूप में कार्य करते हैं, और जिनकी सहायता से हिमग्लेशियर अपनी घाटी की तली तथा किनारों को अपघर्षण से अपरदित करता रहता है.

आपदा के दौरान मंदाकिनी नदी की तेज धार के किनारे फंसे यात्रियों को बचाने के लिये निर्मित रस्सा पूल और सहायक दल के सदस्य एवं यात्री.

उपरोक्त दोनों ग्लेशियरों का ढाल दक्षिण-पूर्व की ओर है अतः ये दक्षिण-पूर्व की ओर गति करते है और अपने साथ कंकड़ पत्थर, शैल व शैल चूर्ण का भी परिवहन करते हैं, जो कि मार्ग में पड़ने वाली शैलों पर रगड़ का कार्य करते हैं. इसके अतिरिक्त ग्लेशियर चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़ों को तोड़कर उन्हें अपने साथ परिवहन कर लेता है, इसे उत्पाटन कहते हैं. कभी-कभी ये बड़े टुकड़े अपने संवेग के कारण हिमनद के वेग से भी आगे चले जाते हैं. हिम के पिघलने तथा वर्षा से प्राप्त जल शैल की सन्धियों में प्रविष्ट हो जाता है तथा ताप की कमी के कारण जमकर हिम का रूप धारण करके फैलता है जिससे शैल कमजोर पड़ जाती है इस कारण शैल के बड़े-बड़े टुकड़े टूट कर अलग होते रहते है तथा हिमनद के परिवहन में सम्मिलित होते है. चूंकि उपरोक्त दोनों ग्लेशियर घाटी हिमनद हैं, अतः उत्पाटन की क्रिया इनके कारण

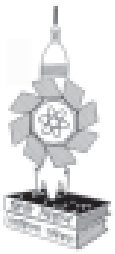

अधिक होती है. उपरोक्त ग्लेशियरों द्वारा परिवहन किये जाने वाले पदार्थों में शिलाखण्ड, कंकड़, पत्थर, रेत कण व मिट्टी आदि सम्मिलित रहते है, इसे ग्लेशियल ड्रिफ्ट कहते हैं. उपर्युक्त ग्लेशियल ड्रिफ्ट हिमनद के पार्श्व भागों, तली व अग्रभाग से स्थानान्तरित होता है. फलस्वरूप ग्लेशियल ड्रिफ्ट का हिमनद के पार्श्वों के सहारे पंक्तिबद्ध रूप में संचलन होता है और कुछ जमाव पार्श्व भाग में भी होता रहता है. इसके अतिरिक्त हिमनद के अग्रभाग द्वारा भी ग्लेसियल ड्रिफ्ट किया जाता है. चोराबरी ग्लेशियर व चोराबारी ताल के मध्य पंक्तिबद्ध रूप में ग्लेशियर ड्रिफ्ट का जमाव है तथा चोराबारी हिमनद व सहायक हिमनद के अग्रभाग में भी ग्लेसियल ड्रिफ्ट का जमाव है (ग्लेसियल ड्रिफ्ट के जमाव से हिमोढ़ बनते हैं)

3. केदारनाथ घाटी की U आकृति :- केदारनाथ का क्षेत्र तीन ओर (पूरब, पश्चिम एवं उत्तर) से ऊंची-ऊंची पहाड़ियों से घिरा है जबकि एक ओर दक्षिण से लगभग खुला हुआ है. स्पष्ट है कि मंदिर परिक्षेत्र लगभग एक U आकृति की घाटी मे स्थित है. जिसका ढाल दक्षिण की ओर है.

यह U आकार की घाटी (केदारनाथ मंदिर परिक्षेत्र) मन्दाकिनी एवं उसकी सहायक नदियों का बाढ़कृत मैदान क्षेत्र है, जिसमें अनुमानतः 100 साल में एक बार लगभग 1 फुट से ऊपर पानी भर जाता है.

इस घाटी में मानसून का आगमन दक्षिण से होता है (भारत में मानसून का आगमन दक्षिण से उत्तर की ओर होता है तथा केदारनाथ मंदिर क्षेत्र मानसून के मार्ग में स्थित होने व दक्षिण से खुला होने के कारण इस क्षेत्र में मानसून आसानी से प्रवेश कर जाता है). इस मंदिर घाटी क्षेत्र में 15 जून से 18 जून सुबह तक लगातार वर्षा का कारण इस घाटी का U आकार में होना भी है दरअसल दक्षिण-पश्चिम से मानसून के बादल आकर इस घाटी में दक्षिण से प्रवेश कर आगे बढ़ते गए और उत्तर के पर्वतों, पहाड़ों से टकराकर पुनः पीछे होने का प्रयास करने लगे. किन्तु पीछे से आनेवाले मानसूनी बादलों ने इन वापस होते हुए बादलों को रोका, (घाटी तीनों ओर से ऊंचे-ऊंचे पर्वतों से घिरी है). इधर दक्षिण से मानसून बादलों का लगातार आना जारी था, फलस्वरूप उन बादलों का लगातार संघनन एवं घर्षण होता रहा और बादल फटने का समदृश्य बन गया. (बादल फटना वह प्रक्रिया है जब किसी सीमित क्षेत्र में 100 मिमी./घंटे या इससे अधिक की दर से वर्षा होती है).

4. अति वर्षा :- साधरणतया उत्तरी भारत में मानसून का आगमन 15 जून के पश्चात प्रारंभ हो जाता है जो कि लगभग 25-28 जून तक पूर्ण रूप से सक्रिय होता है. किन्तु घटना वर्ष में मानसून 15 जून को सक्रिय हो गया, केदारनाथ घाटी क्षेत्र में 10 जून को वर्षा की शुरूआत हो गई कुछ जगहों पर हलका भूस्खलन भी हुआ. दिनांक 15 जून को पूर्ण रूप से मानसून का आगमन उत्तराखण्ड हिमालय क्षेत्र में हुआ. वाडिया इन्स्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी द्वारा चोराबारी ग्लेशियर पर समुद्र तल से 3820 मी.की ऊंचाई पर स्थापित मापक द्वारा 15 जून (5:00pm) से, 6 जून (5:00am) तक 12 घण्टे के दौरान 210 मिमी. वर्षा का अंकन किया गया तथा 16 जून को प्रातः 5.00 बजे से सायं 5.00 बजे तक 115 मिमी. वर्षा अंकित की गई. अर्थात 24 घण्टे में कुल 325 मिमी. वर्षा हुई. देहरादून मौसम विभाग के निदेशक डा.आनन्द शर्मा के अनुसार 'बंगाल की खाड़ी में निम्न वायु दाब के कारण चक्रवातीय चक्रण उत्पन्न हुआ जो कि पश्चिम दिशा की ओर गया. इसी समय कैस्पियन सागर से उच्च वायु दाब की पवन भी नमी को लेकर भारत के पश्चिमी क्षेत्र की ओर बढ़ने लगी. बंगाल की खाड़ी की चक्रवातीय चक्रण तथा कैस्पियन सागर की उच्च दाब की नमी युक्त पवन का संकेद्रण लगभग राजस्थान के पूर्वी भाग में ऊपर हुआ, और यह तेजी से उत्तराखण्ड के हिमालय क्षेत्र की ओर बढ़ने लगा. जिसके कारण उत्तराखण्ड के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में 15 जून 2013 को सुबह से ही मूसलधार बारिश प्रारंभ हो गयी जो कि लगातार 18 जून 2013 की सुबह लगभग 5.00 बजे तक जारी रही. इस भीषण वर्षा से उत्तराखण्ड के चार जनपद चमोली, उत्तरकाशी, रूद्रप्रयाग व पिथौरागढ़ के लगभग 40000 वर्ग किमी. के क्षेत्र प्रभावित हुए.

वर्षा से हिम के पिघलने की दर में वृद्धि :- सामान्यतः ग्रीष्म ऋतु में हिम (हिम, हिमशिखर व हिमनद) का पिघलना एक सामान्य प्रक्रिया है, जिस कारण नदियों के जल स्तर में वृद्धि होती है. यह सामान्य प्रक्रिया केदारनाथ क्षेत्र में भी होती रही. केदारनाथ क्षेत्र में 10 जून को 50 मिमी. वर्षा के साथ मानसून का आगमन हुआ जिसने विभिन्न नदियों व गदेरों के जल स्तर में वृद्धि के लिए उत्प्रेरक का कार्य किया. किन्तु 15,16 व 17 जून की अप्रत्याशित वर्षा की वजह से हिम (हिम, हिमशिखर व हिमनद) के पिघलने की दर में वृद्धि हुई क्योंकि जब वर्षा का जल हिम (हिम, हिमशिखर व हिमनद) के संपर्क में आता है तो वर्षा के जल की ऊष्मा का स्थानान्तरण तीव्रता से हिम को होता है और ऊष्मा पाकर हिम तेजी से पिघलने लगता है जिससे जल की मात्रा में वृद्धि होती है.

कमजोर चट्टानें :- चूंकि हिमालय अभी भी एक नवीन पहाड़ है इसका विकास 5 से.मी.प्रतिवर्ष की दर से हो रहा है

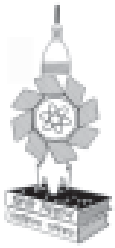

तथा यहां के पहाड़ कच्चे है और मिट्टी, रेत व बोल्डर मिश्रित है. 15 जून की लगातार मूसलाधार वर्षा के कारण इन पहाड़ों में पानी का अवशोषण होने लगा, वर्षा जल के लगातार अवशोषण के कारण ये पहाड़ जल से संतृप्त हो चुके थे (इनमें जल को और सोखने की क्षमता नहीं रह गयी थी). अतः अनवरत वर्षा के कारण ये जल से संतृप्त पहाड़ 16 जून की सुबह से ही स्खलित होने लगे.

तीव्र ढाल :- पर्वतीय क्षेत्र की नदियां ढाल से प्रवाहित होने के कारण उर्ध्वाधर या लम्बवत अपरदन करती है. केदारनाथ घाटी क्षेत्र की मन्दाकिनी और उसकी सहायक नदियों का उदगम एवं परिवहन तीव्र ढाल से होता है तथा ये नदियां भी यही कार्य करती है. किन्तु अधिक वर्षा के कारण व हिम के तेजी से और अधिक मात्रा में पिघलने के कारण नदी के जल के आयतन में वृद्धि हो गयी. फलस्वरूप लंबवत अपरदन के साथ-साथ पार्श्व अपरदन भी तीव्रता से होने लगा. जिससे नदियों का अधिग्रहण क्षेत्र का भी विस्तार होता गया तथा नदियों अतिरिक्त का जल अपने अधिग्रहण क्षेत्र से बाहर की ओर भी आने लगा.

ग्लेशियरों द्वारा निक्षेपित मलवा बोल्डर मिट्टी व रेत आदि का परिवहन भी नदी की धारा व अधिग्रहण क्षेत्र के बाहर निकलते जल के द्वारा होने लगा. नदी के मार्ग में बड़े-बड़े पत्थरों का बोल्डरों का आने की वजह से नदी का मार्ग परिवर्तन हुआ और 16 जून की शाम को लगभग 6.30 बजे दो बार मलवायुक्त प्रवाह उत्तर से केदारनाथ मंदिर की ओर आया जिसमें छोटे-बड़े पत्थर, बोल्डर, रेत व मिट्टी का मिश्रण था. इस मलबायुक्त प्रवाह से केदारनाथ मंदिर के अतिरिक्त अधिकांश भवन तहस-नहस हो गए, कई लोग उस मलबे में दब कर मृत्यु का शिकार हो गए. कई लोग मलबे में बहकर नदी में प्रवाहित हो गये, कुछ लोगों ने केदारनाथ मंदिर के अन्दर पहुंचकर अपनी व परिजनों की जान बचाने का प्रयास भी किया. इस मलबा का प्रभाव रामबाड़ा तक हुआ जो कि केदारनाथ व गौरीकुण्ड मार्ग के ठीक बीच में है. रामबाड़ा तक का मार्ग एवं आवास पूर्ण रूप से बर्बाद हो गए.

16 जून की घटना के पश्चात 17 जून की प्रातः लगभग 7.30 बजे पुनः मलबायुक्त प्रवाह आया जो 16 जून की अपेक्षा और भी भयानक था इस बार चोराबारी ताल/झील के टूटने से कहर बरपा.

चोराबारी ताल के टूटने की प्रक्रिया :- अमूमन चोराबारी ताल में पानी काफी कम मात्रा में रहता है. यहां तक की उस ताल को पैदल भी बीचो-बीच पार कर सकते है. किन्तु बीच में थोड़ा दलदल है जिसमें रेत, मिट्टी व छोटे पत्थरों का मिश्रण है. वर्षा के समय भी यह पूर्ण रूप से नहीं भर पाता है, किन्तु इस वर्ष 15 व 16 जून की भीषण वर्षा से यह ताल भर गया था. इसकी पश्चिमी सीमा ठोस चट्टान से आच्छादित है. जबकि पूर्वी व दक्षिणी-पूर्वी सीमा हिमोढ़ से निर्मित है और इस ताल से पानी निकलने का कोई मार्ग भी नहीं है. ताल के लगातार भरते जाने के फलस्वरूप जल की स्थितिज ऊर्जा में भी लगातार वृद्धि होती रही एवं द्रवीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हो गई. परिणामस्वरूप दक्षिणी-पूर्वी दीवार की शियरिंग शक्ति कम होती गयी. 16 जून की शाम को आयी बाढ़ के कारण काफी अधिक तीव्रता का भूकंप जैसा झटका आया था, जिसका प्रभाव चोराबारी ताल तक गया और इस कम्पन ने द्रवीकरण की प्रक्रिया में वृद्धि व दीवाल की शियरिंग शक्ति में और कमी लाने में उत्प्रेरक का कार्य किया, दूसरी ओर अनवरत वर्षा जारी थी और 17 जून की प्रातः ताल की दक्षिणी-पूर्वी सीमा में दरार पड़ी और टूट गई. जिससे कि ताल का पानी एवं द्रवीकरण जनित कीचड़ का मिश्रण तेजी से दक्षिण की ओर प्रवाहित होने लगा और जल की स्थितिज ऊर्जा, गतिज ऊर्जा में परिवर्तित होकर केदारनाथ क्षेत्र की ओर लगभग 45-50 किमी. प्रति घंटे की रफ्तार से बढ़ने लगी. इसने अपने साथ मलवा (कंकड़, पत्थर, बोल्डर, मिट्टी, रेत इत्यादि) लेकर मात्र 5 मिनट में संपूर्ण केदारनाथ क्षेत्र को बर्बाद कर दिया.

अन्य सम्भावित कारण :- केदारनाथ में इतनी भीषण बर्बादी करना और उसका प्रभाव हरिद्वार तक होना अकेले चोराबारीताल के जल का काम नहीं है. चोराबारी ग्लेशियर क्षेत्र से उत्तर व पूर्व में भीषण वज्रपात (तड़ित झन्झा) भी हो रहे थे.

छिपे/दबे हिमनदों का टूटना :- केदारनाथ क्षेत्र में कुछ ऐसे हिमनद मलबे की पतली, मध्यम व मोटी परत के नीचे दबे हुए है, जिनका पिघलाव कई वर्षों में नहीं हो पाया और ये निरन्तर धीमी गति से अपने ढाल की ओर गतिशील थे, सम्भवतः भीषण वज्रपात (तड़ितझंझा) के पश्चात ये चोराबारी ताल में गिरे होगे. इसके अतिरिक्त दूसरा सम्भावित कारण भी हो सकता है कि टूटा हुआ ग्लेशियर सरककर नीचे आया हो तथा वर्षा के कारण उसके पिघलने की दर में वृद्धि के कारण जल की अधिक मात्रा ने नदियों के जल में वृद्धि की हो. फलस्वरूप केदारनाथ क्षेत्र में बाढ़ की विभीषिका हुई. इसमें चोराबारी ताल के टूटने से निकले जल का भी संयुक्त रूप से योगदान रहा.

उपरोक्त दोनों दिनों के मलवायुक्त प्रवाह का प्रभाव केवल केदारनाथ क्षेत्र में ही नहीं वरन केदारनाथ से हरिद्वार तक इसमें मलवायुक्त प्रवाह के अतिरिक्त 15 जून से होने वाली

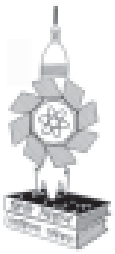

मूसलाधार वर्षा का भी जबरदस्त योगदान था क्योंकि 15 जून को मूसलाधार वर्षा उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में हो रही थी और वर्षा का जल विभिन्न मार्गों से अपने साथ कंकड़, पत्थर, बोल्डर, मिट्टी, रेत के अतिरिक्त विभिन्न वृक्षों को भी लेकर मन्दाकिनी नदी में आया. ये सभी नदी के अपरदन यंत्र के रूप में कार्य करने लगे. जिन्होंने नदी की तली व पार्श्वों (किनारों) को बेतरतीब ढंग से प्रहार करके खण्डित कर दिया.

जिला रूद्रप्रयाग की मन्दाकिनी घाटी में विध्वंस :- रूद्रप्रयाग में स्थित हिमालय पर्वत विभिन्न प्रकार की चट्टानों से निर्मित है कुछ पहाड़ कठोर चट्टानों से निर्मित है तो अधिकांश कच्चे पहाड़ हैं जिनमें मिट्टी पत्थर व रेत का मिश्रण है.

अनवरत वर्षा के परिणामस्वरूप कठोर चट्टानों पर आच्छादित मिट्टी अति वर्षा के जल द्वारा विलयन की प्रक्रिया से अपक्षयित व अपरदित होकर नीचे की ओर प्रवाहित होने लगी तथा चट्टानों की संधियों में भी वर्षा जल प्रविष्ट हुआ जिससे चट्टानें कमजोर हुई. वनस्पतियों की जड़ों से आबद्ध मिट्टी भी जड़ों का साथ छोड़ गयी परिणामस्वरूप मिट्टी के साथ-साथ अन्ततः चट्टानों व वनस्पतियों का भी बहाव नीचे की ओर होने लगा. इसी क्रम में गहरी जड़ों वाली वनस्पतियों के प्रवाहित होने से चट्टानों का भी अपने मूल स्थान से अलगाव हुआ और वह नीचे की ओर आने लगे.

मिट्टी व छोटे पत्थरों से मिश्रित (कच्चे पहाड़) पहाड़ों में भी उपरोक्त प्रक्रिया होती रही. मिश्रित पहाड़ में, वर्षा जल उसके आन्तरिक भाग में भी समाता गया. यह अवशोषण आन्तरिक रूप से अतिसंतृप्त अवस्था पा जाने तक होता रहा. इस अवस्था के पश्चात कच्चे पहाड़ का अधिकांश भाग अपक्षयित व रखलित हो गया. कच्चे पहाड़ के स्खलित व अपक्षयित होने के कारण अधिक संख्या में वृक्ष, विभिन्न वनस्पतियां, पत्थर, चट्टानों, मिट्टी इत्यादि नीचे की ओर या तो मार्गों पर आ गयी अथवा संबंधित गदेरों व नदियों में चली गयीं.

उपरोक्त दोनों प्रकार की चट्टानों से निकले पेड़, पत्थर, चट्टान, मिट्टी इत्यादि सहायक नदियों, गदेरों द्वारा मुख्य नदी में तथा स्वयं मन्दाकिनी नदी द्वारा अपने निकटवर्ती स्थानों से उपरोक्त अपक्षय व अपरदन द्वारा प्राप्त कचरे का परिवहन किया गया. मुख्य नदी में उपरोक्त पदार्थ ने नदी के सहयोगी अपरदन यन्त्र के रूप में कार्य किया. अनवरत वर्षा की वजह से नदी के जल के आयतन में वृद्धि हो रही थी, जिससे अपरदान यंत्रों की मात्रा में भी वृद्धि हो रही थी.

पर्वतीय/पहाड़ी क्षेत्रों में नदियां काफी घुमावदार मार्ग का अनुसरण करती है और इन क्षेत्रों में पार्श्व/क्षैतिज अपरदन की तुलना में उर्ध्वाधर या लम्बवत अपरदन अधिक होता है.

मन्दाकिनी नदी के जल के आयतन में वृद्धि के फलस्वरूप पार्श्ववर्ती अपरदन बढ़ा तथा अपघर्षण द्वारा नदी घाटी की दीवार के निचले भाग में अन्दर की ओर कटान के परिणमस्वरूप नदी ने अपने घुमावदार मार्गों के मोड़ों को अपने अपरदनात्मक यंत्रों के सहयोग से लगातार प्रहार से ध्वस्त कर दिया जिससे मलबे की मात्रा बढ़ती चली गयी.

इससे नदी की लंबाई पूर्व की अपेक्षा कम हो गयी है तथा चौड़ाई बढ़ गई, और नदी तट पर बने भवन या तो पूर्ण रूप से प्रवाहित हो गये अथवा भग्नावशेष रूप में विद्यमान हैं. मलबे के आने से नदी के विभिन्न परिवहन मार्गों पर सिल्ट, रेत व छोटे-बड़े नवीन पत्थरों का जमाव हो गया है, और नदी की तली का स्तर ऊंचा हो गया है.

मानवीय कारक :-

पुराने समय में लोग तीर्थाटन के लिए मुख्यतया गृहस्थ जीवन के बाद ही जाना उचित समझते थे एवं संपूर्ण परिवार एक साथ इस प्रकार की यात्रा नहीं करते थे. तीर्थाटन का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत शांति या मोक्ष की प्राप्ति होता था. किन्तु पिछले लगभग 4 दशकों में इस प्रकार की यात्राओं का उद्देश्य पूर्ण रूप से परिवर्तित हो चुका है. प्रायः देखा गया है कि वृद्धजनों के साथ-साथ बच्चे, नवयुवक, युवतियां एवं नवविवाहित जोड़े भी इन धार्मिक स्थलों पर बहुतायत से पहुंच रहे है. जब इस प्रकार के लोग ऐसे स्थानों पर जाते है तब यह यात्रा मौज-मस्ती से प्रेरित होती है.

देव-दर्शन के बहाने अब अधिकांश लोग इन स्थानों पर घूमने-फिरने, सैर-सपाटे, प्राकृतिक सौंदर्य का लुत्फ उठाने एवं गर्मी के मौसम में बर्फ से घिरी वादियों का आनंद लेने के लिए आते हैं. केदारनाथ में भी पिछले कुछ दशकों में पर्यटकों की दिन-दूनी रात चौगुनी वृद्धि हुई है. इससे सरकार, व्यापारी एवं पण्डों को यात्रा सीजन में अच्छी कमाई होती है. मुनाफे के लोभ में ये लोग अधिक से अधिक यात्रियों को इन स्थलों पर आने के लिए प्रेरित करते है. पहले केदारनाथ धाम की यात्रा सुगम नहीं थी. पैदल मार्ग (पगडण्डियों) के माध्यम से यात्रा पूर्ण की जाती थी. फलस्वरूप यात्रियों की संख्या भी कम ही रहती थी. किन्तु साधनों व मार्गों के विकास के फलस्वरूप तीर्थ यात्रियों की संख्या में वृद्धि होने लगी. लगभग 1990 के दशक से केदारनाथ में यात्रियों की चहल कदमी में वृद्धि होना प्रारंभ हो गयी. यात्रियों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए बाजारवादियों ने केदारनाथ क्षेत्र में

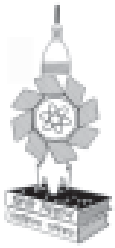

अपने बाजार की संभावनाओं को तलाशना व तराशना प्रारंभ किया. इन व्यवसायों में मुख्यतः यात्रियों के ठहरने व खाने-पीने की सुविधाओं की स्थापना हुई, जिसमें सरकारी व निजी क्षेत्र के व्यवसायियों ने अपने उद्यम स्थापित किए. परिणाम स्वरूप आने वाले वर्षों में तीर्थयात्रियों की संख्या में और वृद्धि होती गई. अब इसमें वृद्धों के साथ-साथ सभी आयु वर्ग के व्यक्ति सम्मिलित होने लगे. यहां तक कि नवजात शिशु भी शामिल होने लगे. वर्ष 2011 में स्थिति यह हो गयी कि जहां इस वर्ष उत्तराखण्ड की कुल जनसंख्या लगभग 1 करोड़ थी वहीं इस वर्ष मात्र मई व जून के महीनों में इस प्रदेश में आने वाले यात्रियों की संख्या उत्तराखण्ड की आबादी की दुगने से भी अधिक अर्थात 2 करोड़ 68 लाख हो चुकी थी. उत्तराखण्ड में पिछले 10 वर्षों में यात्रियों की संख्या में 140 प्रतिशत की वृद्धि हुई है.

1990 के दशक तक केदारनाथ मंदिर बाजारवाद से आच्छादित हो गया और अनियोजित रूप से केदारनाथ मंदिर क्षेत्र में बेतरतीब निर्माण कार्य होता रहा. 16 व 17 जून को आयी बाढ़ में इन अनियोजित सघन निर्माणों ने भी कहर बरपाने में अपना योगदान दिया. बाढ़ की चपेट में ये निर्माण भी आए और अधिकांश टूटकर अपने साथ यात्रियों को भी जमींदोज कर गए.

विकास या विनाश :-

उत्साही व्यवसायियों ने ऋषिकेश से गौरीकुण्ड तक नदी किनारे यहां तक कि नदी के अधिग्रहण क्षेत्र व छाड़न क्षेत्र में भी अवैध व वैध व्यवसायिक भवनों का निर्माण किया, जिनमें से बहुतायत 15, 16 व 17 जून को नदी में आयी बाढ़ के प्रभाव से टूट कर नदी के अपरदन यंत्र के रूप में सहभागी बन गए.

परिवहन मार्गों के विकास व विस्तारीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत डाइनामाइट व जे.सी.बी. यंत्रों द्वारा चट्टानों को तोड़ने के क्रम में पहाड़ियां कमजोर पड़ी और निकटवर्ती पहाड़ियों में भी अस्थिरता आयी. फलस्वरूप ये पहाड़ियां असमय स्खलित होती रहती है. 15, 16 व 17 जून की वर्षा से इनका अनवरत स्खलन होना जारी रहा और पहाड़ियों के बड़े-बड़े पत्थरों ने नीचे आकर अपने प्रहार से सड़क मार्गों को ध्वस्त कर दिया. जिससे कई स्थानों पर संपर्क मार्ग बाधित हुआ.

उत्तराखण्ड राज्य अधिकांशतः पर्वतीय क्षेत्र है. मात्र पर्यटन उद्योग राज्य के आर्थिक उन्नयन में सबसे बड़ा योगदान देता है. राज्य सरकार की भी कोशिश रहती है कि यात्रा सीजन में अधिक से अधिक संख्या में यात्री यहां पर आएं. जिससे राज्य सरकार के राजकोष में वृद्धि होती रहे. किन्तु योग्य सुविधाएं न होने से इन यात्रियों व गाड़ियों से ट्रैफिक जाम होता है अधिकांशतया यात्रियों को बीच में ही विभिन्न स्थानों/पड़ावों पर गाड़ियों को छोड़कर गौरीकुण्ड तक पैदल ही जाना पड़ता है. कारण कि अगस्त्यमुनि से गौरीकुण्ड तक (लगभग 60 किमी.) एकल मार्ग है, जो संकीर्ण है.

गौरीकुण्ड के पश्चात 14 किमी. का पैदल मार्ग है जो केदारनाथ तक जाता है. जिस पर यात्री पैदल, खच्चर, कण्डी अथवा पालकी के द्वारा अपनी यात्रा करते है. इस पैदल मार्ग पर भी जाम की समस्या बन जाती है. 14 किमी. के पैदल मार्ग में अवैध व वैध दुकानदारों का अतिक्रमण भी रहता है.

केदारनाथ पहुंचने पर (ठहराने की व्यवस्था होने के बावजूद) यात्रियों की भारी संख्या के कारण व्यवस्थायें कम पड़ जाती है.

उत्तराखण्ड राज्य के पर्वतीय क्षेत्र विशेष रूप से उच्च पर्वतीय क्षेत्र भौगोलिक, भू-गर्भीय संरचना व जलवायुविक रूप से काफी संवेदनशील है. राज्य सरकार, प्रशासन सभी को इसकी जानकारी भी है. केदारनाथ क्षेत्र भूगर्भीय दृष्टिकोण से भूकंप के तीव्रतम जोन-5 में श्रेणीकृत है. जलवायु के दृष्टिकोण से यहां का मौसम प्रतिक्षण तेजी से बदलता है. भौगोलिक दृष्टिकोण से अधिक ऊंचाई के पर्वतों व कच्चे पहाड़ों के बीच सदैव भू-स्खलन का भय बना रहता है. फिर भी जीवन को दांव पर लगाकर राजकोष की वृद्धि की लालसा में राज्य सरकार/शासन व प्रशासन नियमों को ताक पर रखकर क्षमता से अधिक व्यक्तियों का आवागमन केदारनाथ की ओर प्रतिदिन करने देते हैं. क्षमता से अधिक यात्रियों के आवागमन से उपरोक्त संवेदनशील कारकों के कारण कभी भी कोई बड़ी त्रासदी हो सकती है, और ठीक ऐसा 16 व 17 जून 2013 को हुआ भी. क्षमता से अधिक यात्रियों का सोनप्रयाग से केदारनाथ तक में फंसे रहने के कारण इस प्राकृतिक आपदा में मानवीय क्षति अधिक हुई. इसके अतिरिक्त टैक्सी पड़ाव व जाम में फंसी कई गाड़ियां व उनमें सवार यात्री मन्दाकिनी में नौका की तरह प्रवाहित हो गये.

यह मानवीय क्षति कम मात्रा में भी हो सकती थी यदि राज्य सरकार/शासन/प्रशासन ने पर्यटन के मास्टर प्लान को तैयार कर उसे सही रूप में क्रियान्वित किया होता.

आर्यभट्ट : भारत के महान गणितज्ञ, खगोलशास्त्री और मौलिक विचारक

डॉ.जगदीश चन्द्र व्यास
तकनीकी भौतिकी प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
मुंबई - 400085

आर्यभट्ट संभवतः भारत के तत्कालीन समय (499ई) के महानतम विश्वस्तरीय गणितज्ञों में से एक उद्भट विद्वान कहे जा सकते हैं. उनका गणित के साथ-साथ खगोल शास्त्र पर भी समान अधिकार था. विद्वत्ता के अलावा आर्यभट्ट मौलिक आन्विक्षिकी दृष्टि वाले श्रेष्ठ विचारक भी थे, जिन्होंने विश्व में पहली बार मुखर होकर उल्लेख किया कि हमारी पृथ्वी एक गोलीय धरातल युक्त पिण्ड है, जो अन्तरिक्ष में अन्य ग्रह-उपग्रहों की भांति स्वगुरूत्व के आधार पर अपनी धुरी पर चक्कर लगा रही है. उन्होंने उदाहरण देकर यह भी समझाने का प्रयत्न किया कि पृथ्वी की इस स्वगति को हम सामान्य धरतीवासी लोग अनुभव क्यों नहीं कर पाते हैं.

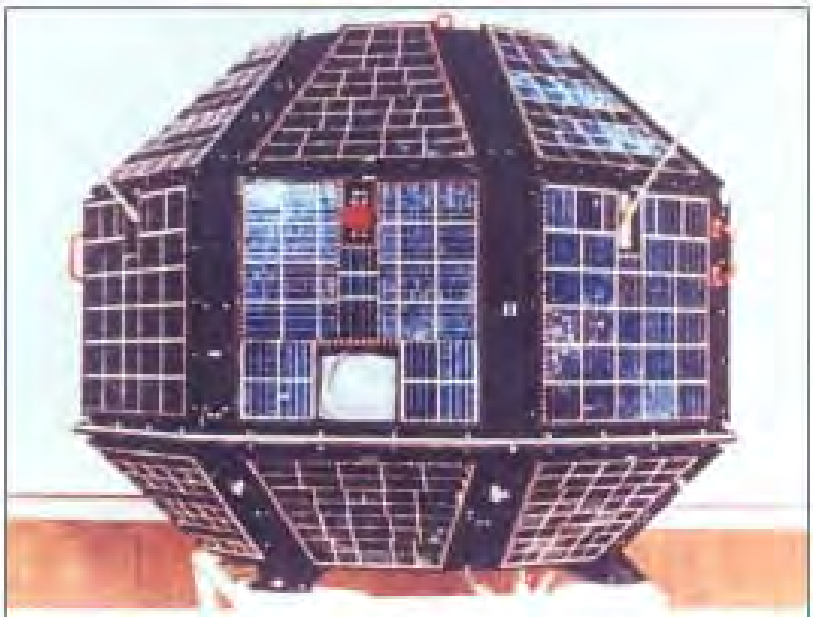

भारत के प्रथम अंतरिक्ष उपग्रह आर्यभट्ट (1975) का एक चित्र.

आर्यभट्ट ने तत्कालीन उपलब्ध खगोलीय आंकड़ों एवं स्वप्रेक्षणों का उपयोग करके आर्यभटीय नामक ग्रंथ की रचना की. इस ग्रंथ में उपरोक्त तथ्यों के अलावा पृथ्वी का व्यास,

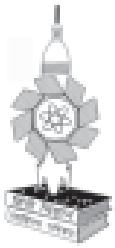

सूर्य, चन्द्र तथा अन्य ज्ञात ग्रहों के कक्षीय परिभ्रमणकाल, उनकी गतियां, कक्षीय व्यास इत्यादि जानकारियों को संख्याबद्ध आंकड़े देकर दर्शाया. इसके लिए उन्होंने एक सांकेतिक कोड या अंक-स्वराक्षर लिपि का आविष्कार भी किया और समस्त आवश्यक आंकड़ों या संख्याओं को शब्दबध्द कर काव्यात्मक छंदों के रूप में लिखा. गहराई से देखा जाए तो केवल यह अंक-स्वराक्षर लिपि रचना ही मौलिकता की दृष्टि से आर्यभट्ट को विश्वस्तरीय विद्वानों की श्रेणी में रखने के लिये पर्याप्त है. प्रस्तुत लेख इस विराट व्यक्तित्व के धनी, महान खगोलविद्, गणितज्ञ और श्रेष्ठ आचार्य आर्यभट्ट के कुछ महत्वपूर्ण कार्यों का विवरण सार-संक्षेप में देने का प्रयास मात्र हैं.

आर्यभट्ट का जन्म वर्ष उनकी अपनी पुस्तक आर्यभटीय (आ.) में लिखे एक श्लोक (आ.3/10) के आधारपर 476 (ई.) माना जाता है. उनका जन्म कहां हुआ, यह तो ठीक से ज्ञात नहीं, परंतु उनका अध्ययन कुसुमपुर में हुआ और यह कुसुमपुर, भास्कराचार्य प्रथम (629 ई.) के अनुसार पाटलीपुत्र, वर्तमान पटना (बिहार) के एक उपनगर या इसके ही निकटवर्ती कोई स्थान होना चाहिये. यह बात अलग है कि आज भी सभी विद्वान इस बारे में मतैक्य नहीं है कि कुसुमपुर कौन सी जगह थी. कठिनाई की बात यह भी है कि स्वयं आर्यभट्ट अपने व्यक्तिगत विवरणों के बारे में लगभग मौन से रहे हैं, और उनके वर्तमान काल में उपलब्ध लिखित साहित्य में भी इस प्रकार की जानकारी न के बराबर है. आर्यभट्ट द्वारा व्यक्तिगत जानकारी न लिखने का एक संभावित कारण यह भी हो सकता है कि अधिकांश तत्कालीन भारतीय मनीषा के विद्वानों की एक मान्यता थी कि व्यक्तिगत जानकारी देना या लिखना स्वप्रशंसा करने जैसा कार्य है, और भारतीय विद्वान स्वप्रशंसा को आत्मग्लानि या आत्महत्या के समकक्ष कार्य मानकर जहां तक संभव हो इससे बचकर रहते थे.

उदाहरण के रूप में सुप्रसिद्ध काव्यग्रंथ महाभारत के कर्णपर्व में लिखी एक घटना को लिया जा सकता है. इस घटना में परिस्थिति विशेष के कारण पाण्डुपुत्र अर्जुन क्रोधित अवस्था में अपने बड़े भाई युधिष्ठिर के लिए कहे गये अपशब्दों के प्रायश्चित स्वरूप स्वयं आत्मग्लानि से भर जाता है और इस अपराध के पश्चाताप के रूप में स्वहत्या (आत्महत्या) करने पर उतारू हो जाता है. उसी समय श्रीकृष्ण, परिस्थिति को समझकर अर्जुन को सलाह देते है कि विद्वानों का मत है कि आत्महत्या तो स्वप्रशंसा करने मात्र से ही हो जाती है. अतः शस्त्रों के बजाय स्वप्रशंसा करके तुम अपना यह प्रायश्चित पूरा कर सकते हो, और अर्जुन वैसा ही करता है. वैसे भी यह देखने में आता है कि पूर्वोत्तर भारतीय विद्वान, ऋषि, महर्षियों ने अपवाद के रूप में ही स्वयं के व्यक्तिगत विवरणों को लिखा है. हमें लगता है कि संभवतः आर्यभट्ट भी इस परंपरा के वाहक रहे हों.

आर्यभट्ट के समकालीन अन्य विद्वानों या शिष्य परंपरा में आर्यभट्ट के शिष्यों ने आचार्य आर्यभट्ट के बारे में कुछ लिखा भी हो, किन्तु इस प्रकार का विवरण या तो काल प्रवाह में, अथवा पिछले एक हजार वर्षों के दौरान हुए बर्बर विदेशी आक्रमणों में आक्रांताओं द्वारा स्थानीय साहित्य और शिक्षण केंद्रों, ज्ञान विज्ञान संबंधी पुस्तकों या पुस्तकालयों को जला देने या बर्बरता पूर्वक नष्ट कर देने क़े कारण आज उपलब्ध नहीं है. संदर्भ के लिए बख्तियार खिलजी (1193-97) द्वारा नालंदा विश्वविद्यालय को नष्ट करने और जला डालने की घटना का उल्लेख उसके अपने इतिहासकारों ने भी किया है. उस समय वहां लगभग 10,000 विद्यार्थी और लगभग 2000 शिक्षक रहकर शिक्षाध्ययन में लगे हुए थे. जो इस बर्बर कृत्य एवं नृशंस हत्या के शिकार हुए. प्रो.डी.जी.आप्टे (सय्याजी वि.वि. बड़ोदा) द्वारा लिखित पुस्तक 'भारत के प्राचीन विश्वविद्यालय' के अनुसार संभवतः स्वयं आर्यभट्ट इसी नालंदा विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपी (वर्तमान शब्द कुलपति) रहे थे. जो भी हो, लेकिन यह सत्य है कि आज आर्यभटीय या इससे संबंधित उपलब्ध टीकाएं इस पुस्तक के अत्यधिक लोकप्रिय होने के कारण ही बच पायी है, जिनके आधार पर हमारे सामने आचार्य आर्यभट्ट के व्यक्तित्व की विराट छवि उभरती है.

आर्यभट्ट नाम से ही जो अर्थ प्रकट होता है, वह है श्रेष्ठ और उच्चस्तरीय निष्णात विद्वान, अथवा विद्वानों के श्रेष्ठ मानक. आर्यभट्ट के परवर्ति विद्वानों की मान्यता थी कि आर्यभट्ट ने कम से कम एक और पुस्तक 'आर्यभटीय-सिद्धान्त' की रचना भी की. किन्तु न तो यह पुस्तक अब उपलब्ध है, और न ही ऐसा लगता है कि आर्यभटीय सिद्धान्त की रचना, आर्यभटीय के रचनाकार आचार्य आर्यभट्ट द्वारा ही हुई होगी. वर्तमान पीढ़ी के आचार्य डा. कृपाशंकर शुक्ल (डी.एससी.) लखनऊ विश्व विद्यालय (1976) का मानना है कि उपरोक्त दोनों ग्रंथ निश्चित ही अलग-अलग लेखकों की रचनाएं हैं, क्योंकि आर्यभट्टीय और आर्यभटीय-सिद्धान्त के आंकड़ों में भेद है और उनकी वैचारिक मान्यताएं भी अलग-अलग हैं. हमें भी आचार्य शुक्लजी का मत ही सही प्रतीत होता है. संभवतः 'आर्यभटीय-सिद्धान्त' के रचनाकार कोई अन्य समनामी किन्तु उनसे भी पूर्ववर्ती विद्वान रहे हों. हालांकि इस समनाम वाली गलत-फहमी के कारण वराहमिहिर (575 ई.) व ब्रह्मगुप्त (628 ई.) ने आर्यभट्टीय-सिद्धान्त को भी आर्यभट्ट की ही रचना माना और इसी कारण से ब्रह्म

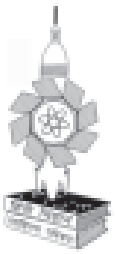

गुप्त ने आर्यभट्ट की प्रखर आलोचना भी अपनी पुस्तक खाण्ड-खाण्डक्य में की. यद्यपि ब्रह्मगुप्त के समकालीन भास्कराचार्य प्रथम (629 ई.वल्लभी, गुजरात) ने दीर्घ भास्करीय में आर्यभटीय को ठीक से समझाया.

आर्यभटीय ग्रंथ श्लोकबद्ध, काव्यमय रचना है, जो चार पादों (या अध्यायों), में विभक्त है. ये अध्याय क्रमशः दश गीतिका पाद (13 श्लोक), गणित पाद (33 श्लोक), कालक्रिया पाद (25 श्लोक) और गोल पाद (50 श्लोक) के नाम से जाने जाते हैं. यह पूरी रचना आर्य-छन्द में है, और पातंजलि योगशास्त्र या अन्य दर्शन ग्रंथों की भांति इतने संक्षेप में लिखी गयी है. कि किसी भी एक शब्द को तो छोड़िये, कभी-कभी अक्षरमात्र या इसमें प्रयुक्त सही स्वर की मात्रा के छूट जाने से भी अर्थ का अनर्थ हो जाने की पूरी संभावना बन जाती है. इसी कारण से अनेक विद्वान टीकाकारों ने आर्यभट्ट को ऋषि महर्षियों की श्रेणी में रखकर मान्यता दी है.

किन्तु इसी सार संक्षेप का दूसरा पक्ष यह भी है कि अति संक्षेपित विवरण के कारण आर्यभटीय को सीधे समझना आसान नहीं है, और इसे समझने के लिए योग्य मार्गदर्शक या टीकाकार की आवश्यकता पड़ती है.

आर्यभटीय के दश गीतिका पाद में 13 श्लोक है, किन्तु प्रथम श्लोक गुरु/ईश वन्दना, तथा दूसरे श्लोक में संकेत लिपि विवरण तथा अन्तिम श्लोक जो इसका महत्व दर्शाने के लिए है, इन्हें इस गिनती मे से अलग कर दे, तो इसका दश गीतिका नाम सार्थक लगता है. इस पाद में खगोलीय समय के मापन की इकाइयां यथा वर्ष, युग, मनु, कल्प आदि के परिमाण, पृथ्वी, चंद्र, सूर्य एवं अन्य तत्कालीन ज्ञात ग्रहों के परिभ्रमण कालों के समय अन्तरालों का माप, इनकी पृथ्वी से औसत दुरियां, ग्रह कक्षाओं के व्यास आदि का वर्णन है. इसी पाद में कोण मापन की इकाईयां, यथा अंश, मिनिट आदि तथा एक रेडियन कोण का निकटस्थ मिनट (कोणीय इकाई) में मान, इत्यादि दर्शाये है. उसी प्रकार विभिन्न त्रिकोणमिति से संबंधित कोणीय फलन यथा sineθ , cosineθ इत्यादि की परिभाषा के अलावा, एक दिये गए कोण θ के विभिन्न फलन माप यथा sineθ (ज्या) से अन्तराल विधि द्वारा अन्य कोणों के sine फलन निकालने के तरीके भी लिखे है.

गणित पाद में सामान्य संख्या श्रेणियों के योग प्राप्त करने के सूत्र, वर्ग और वर्गमूल, घन तथा घनमूल निकालने तरीके दर्शाए हैं. इसी प्रकार त्रिभुज, चतुर्भुज और वृत्त के क्षेत्रफल आदि ज्ञात करने के प्रमेय (नियम), पाई (π = किसी वृत्त की परिधि/उसी वृत का व्यास) का मान, तथा सुडोल वस्तुओं के आयतन निकालने के सूत्रों और उनके आपसी संबंधों का विवरण भी किया है.

स्मरण रहे, कोणीय इकाईयों के संबंध इस प्रकार है. 1^0 = 60 मिनट, तथा 1′ (मिनट) = 60″ (सेकंड). अतः 180^0 = 60 X180 = 10800′. हम जानते हैं कि π रेडियन = 180^0 अतः 1 रेडियन = $(180^0/\pi)$ = (10800′ / π)

कालक्रिया पाद में समय अन्तराल की इकाइयाँ जैसे कि वर्ष, मास, दिन के अलावा युग आदि की परिभाषा के साथ इनको मापने के तरीके, वृत्त विभाजन के तरीके, खगोल में प्रारंभिक या मूल-संदर्भ क्षण की स्थिति से अर्थात प्रारंभिक ग्रहों की स्थिति से अन्य स्थितियों के मापन, तथा किसी दिये गये समय पर ग्रहादि पिण्डों की शुद्ध आकाशीय स्थिति या इसके विपरीत आकाशीय स्थिति दर्शाने पर तत्कालीन समय का ज्ञान प्राप्त करने के तरीके दर्शाये हैं. इसी प्रकार एक ही समय में पृथ्वी के विभिन्न स्थानों के स्थानीय समय और इससे धरती एक गोलीय आकार का पिण्ड है, इसे भी दर्शाया है.

गोलपाद में ग्रहादि पिण्डों की गतियाँ, सूर्य या चन्द्र ग्रहण के समय का पूर्व गणितीय गणना द्वारा भविष्य के घटनाकाल का कथन तथा संबंधित गणन सूत्र, स्थान विशेष में इनके समय में बदल आदि का विस्तारित वर्णन है.

आर्यभट की अंक स्वराक्षर लिपि :

इस संपूर्ण अंक स्वराक्षर लिपि (कोड) को आचार्य आर्यभट्ट ने सिर्फ एक ही श्लोक (आ.1/2) में वर्णित कर लिख दिया है और यह श्लोक इस प्रकार है.

वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात्-ङ् मौ यः ।
खद्विनवके स्वरानव, वर्गे ऽ वर्गे नवान्य वर्गे वा ।।

इसे पढ़कर लगता है कि सामान्य संस्कृत भाषा से परिचित व्यक्ति भी उपरोक्त श्लोक के विवरण से इस संकेत लिपि को हमें बताने या इसे समझने/समझाने में असमर्थता व्यक्त कर सकता है, और जबतक गणित और व्याकरण दोनों ही विषयों का जानकार व्यक्ति हमें न समझाये, इसे समझ पाना कठिन है. इसीलिए आर्यभटीय के व्याख्याकारों/टीकाकारों ने इसे पर्याप्त महत्व देकर समझाया है. आर्यभट्ट के बाद की लगभग हर सदी में इसे समझाने के प्रयत्न होते ही रहे हैं. हम भी यहां इसे कुछ विस्तार करके समझने का प्रयत्न करेंगे.

देवनागरी लिपि में क से लेकर म तक के अक्षरों को, जो संख्या में पच्चीस (25) है, वर्गाक्षर कहते हैं. क्योंकि इन्हें लिखते समय हर एक पंक्ति में पांच अक्षर होते है, जैसे क से ङ, च से ञ, ट से ण, त से न तथा प से म तक पांच पंक्तियां

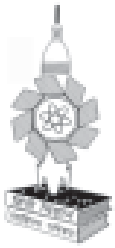

हैं.

गणित की भाषा में कहें तो (5 अक्षर) X (5 पंक्तियां) = 25 = 5^2, और इसलिए क से म तक के अक्षरों को वर्गाक्षर कहते है. आचार्य इन अक्षरों को क्रम से पूर्ण आंकिक संख्या के मान देकर स्थापित करते है, जो इस प्रकार है.

क = 1, ख = 2, ग = 3, घ = 4, ङ = 5,
च = 6, छ = 7, ज = 8, झ = 9, ञ = 10,
ट = 11, ठ = 12, ड = 13, ढ = 14, ण = 15,
त = 16, थ = 17, द = 18, ध = 19, न = 20,
प = 21, फ = 22, ब = 23, भ = 24, म = 25

देवनागरी लिपि में आगे के अक्षर वर्गाक्षर नहीं बन पाते हैं, क्योंकि एक ही पंक्ति में य र ल व श ष स ह, ये आठ अक्षर है. वर्गबध्द न होने से इन्हें अवर्ग-अक्षर कहते हैं. इनके मानक इस प्रकार से रखे हैं (जैसा कि श्लोक में लिखा है ख के आगे की संख्या के मान के साथ और उससे दस गुणा भी)

य = 30, र = 40, ल = 50, व = 60,
श = 70, ष = 80, स = 90, ह = 100

इस प्रकार देवनागरी वर्णमाला के मूल अक्षरों को निश्चित संख्या मान देने के बाद आचार्य आर्यभट्ट देवनागरी लिपि के स्वरों की मात्राओं का उपयोग भी, इस पद्धति में दर्शाते हैं. उनके अनुसार स्वरों की मात्राएं दशमलव अंक लेखन प्रक्रिया में अंकों के स्थानबद्ध मानों को प्रदर्शित करेंगी. संस्कृत भाषा (देवनागरी लिपि) में नौ (नव) स्वरों को प्रमुख प्रारंभिक स्वर माना जाता है. ये स्वर क्रमानुसार पाणिनी रचित अष्टाध्यायी में दर्शाये महेश्वर सूत्रों से सीधे भी समझे जा सकते हैं. यह क्रम इस प्रकार है. (बॉक्स देखे).

अ इ उ ऋ ऌ ए ओ ऐ औ

स्मरण रहे, वर्तमान हिन्दी भाषा भी देवनागरी लिपि में ही लिखी जाती है किन्तु इसमें ऋ व ऌ का उपयोग कम हो गया है, तथा स्वरों के क्रम भी बदल गये हैं, यथा नया क्रम क्रमशः अ इ उ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ हो गया है. किन्तु आर्यभटीय में महेश्वर सूत्रों से लिया क्रम ही उपयोग में है, अतः हमें भी उसी पूर्वोक्त क्रम के अनुसार स्वरों के मानकों को लेना होगा. दूसरी बात अ इ उ ऋ तथा ऌ के दीर्घ स्वरों यथा आ (अ), ई (इ), ऊ (उ), ॠ (ऋ) तथा ॡ (ऌ) का मान क्रमशः प्रारंभिक स्वर के समान ही रहता है. अर्थात अ = आ, इ = ई, उ = ऊ, ऋ = ॠ तथा ऌ = ॡ. किन्तु आगे वाले स्वर ए ओ ऐ तथा औ के स्थानबद्धता के मान स्वतंत्र है. आर्यभट्ट उपरोक्त सभी स्वरों (अल्प एवं दीर्घ मात्रा सहित) का उपयोग किसी दी गयी संख्या के अंक विशेष का दशमलव पद्धति में प्रयुक्त स्थानबद्धता से करते हैं.

उदाहरण के लिए दशमलव पद्धति में लिखी गयी संख्या 30201 को लें. इस 30201 संख्या में स्थानबद्ध होकर 30000, 200 और 1 का संयुक्त योग है. प्रचलित नियम से किसी संख्या में उपस्थित अंकोंकी स्थानबद्धता का क्रम संख्या में सबसे दाहिनी ओर के अंक से गिना जाता है. अतः उपरोक्त संख्या के दाहिनी छोर का अंक केवल 1 को दर्शाता है. इसके बाद इसी संख्या में बायी ओर (1की स्थिती से) चले तो अगला अंक 0 है. यद्यपि इस 0 का मानक दस गुणा है, किन्तु शुन्य से गुणा करने पर इसका मान शुन्य ही बना रहता है. इसी क्रम से तीसरे स्थान का अंक 2 है, और इसमें 100 का गुणा होकर यह 200 का मान दर्शाता है. चौथा अंक 0 है और इसका मान शुन्य ही बना रहेगा. जबकि पांचवे स्थान का अंक 3 है और इसका मान 3 में 10000 (=10^4) का गुणा होकर यह 30000 का मान दर्शाता है. इस

महेश्वर सूत्र (पाणिनी कृत अष्टाध्यायी से)

स्वरों का क्रम जानने के लिए

1. अ इ उ ण्.
2. ऋ ऌ क
3. ए ओ ङ
4. ऐ औ च्.
5. ह य व र ट्
6. ल ण्
7. ञ म ङ ण न म्
8. झ भ ञ्
9. घ ढ ध ष्
10. ज ब ग ड द श्
11. ख फ छ ठ थ च ट त व्
12. क प य्
13. श ष स र
14. ह ल्

उपरोक्त प्रथम चार सूत्रों में सभी मूल स्वर उपस्थित है. इनकी संख्या नौ है, और इनका क्रम भी इसी प्रकार से है. शेष स्वर इन्हींसे निर्मित हुए है.

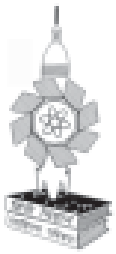

प्रकार 30201 संख्या अपने विस्तारित रूप में 30000, 200 तथा 1 का योग दर्शाती है.

उपरोक्त उदाहरण में दर्शायी स्थानबद्धता को आर्यभट्ट स्वरों के मानक बनाकर उनके साथ संयुक्त कर देते हैं. इसमें केवल स्वर ही यदि शब्द में आए तो इसका मान शुन्य रहेगा, किन्तु यही स्वर, अक्षर के साथ लगकर प्रदर्शित होता है, तो अक्षर की मानक संख्या को स्थानबद्धता का अर्थ प्रदान करेगा. आर्यभट्ट इस स्थानबद्धता का मानक इस प्रकार तय करते है.

अ = आ = 10^0 = 1

इ = ई = 10^2 = 100

उ = ऊ = 10^4 = 100,00

ऋ = ॠ = 10^6 = 100,00,00

ऌ = ॡ = 10^8 = 100,00,00,00

ए = 10^{10} = 100,00,00,00,00

ओ = 10^{12} = 100,00,00,00,00,00

ऐ = 10^{14} = 100,00,00,00,00,00,00

औ = 10^{16} = 1 के बाद सोलह शुन्य

इस प्रकार से स्वर एवं अक्षरों को मानक बनाकर इनके द्वारा किसी भी संख्या को शब्दबद्ध किया जा सकता है, या इसके विपरीत किसी भी दिए गए शब्द से निरूपित होनेवाली संख्या को अंकों में दर्शाया जा सकता है.

हम कुछ सरल उदाहरण लेते हैं. हम जानते है कि अक्षर ग से संख्या 3 निरूपित होती है, और ग् या गा से भी यही संख्या बनेगी. गणितीय रूप में यह इस प्रकार लिखा जायेगा.

ग् = 3, ग् X अ = ग = 3 X 10^0 = 3

और ग् X आ = गा = 3 X 10^0 = 3.

इस नियम से गि या गी से बनने वाली संख्या 3 X 10^2 अर्थात 300 होगी. जबकि गे से निर्मित संख्या 3 X 10^{10} = 30 अरब होगी (क्योंकि, ग X ए = गे = 3 X 10^{10}). इसी क्रम से गो, गै तथा गौ से निर्मित संख्याए क्रमशः 3 X 10^{12} , 3 X 10^{14} तथा 3 X 10^{16} होंगी.

इस कोड में एक पूरा शब्द चाहे वह एकमात्र अक्षर का हो या अनेक स्वराक्षरों से बना हो, एक पूर्ण आंकिक संख्या को प्रदर्शित करता है. जैसे, यथा शब्द को ले, इससे बनने वाली संख्या होगी 30 X 10^0 + 17 X 10^0 = 30 + 17 = 47. इसी प्रकार गोविन्द शब्द से बनने वाली संख्या गो + वि + न् + द = 3 X10^{12} + 60 X10^2 + 20 + 18 = 3000000006038 होगी.

इसी प्रकार से गणेश से निर्मित संख्या होगी

3 + 15 X 10^{10} + 70 = 150000000073

इसी क्रम में होम शब्द से निर्मित संख्या का मान होगा

10^2 X 10^{14} + 25 = 100,00,00,00,00000025

पाठकों के उपयोग के लिये हम इस लिपि को आधुनिक समझ के आधार पर इस प्रकार से भी लिख सकते है.

संख्या दर्शक शब्द

= प्रथम अक्षर X इस अक्षर से जुड़े स्वर का मान

+ द्वितीय अक्षर X इस अक्षर से जुड़े स्वर का मान

+ तृतीय अक्षर X इस अक्षर से जुड़े स्वर का मान---

------ = Σ (अक्षर X संबंधित स्वर मान)

सभी अक्षरों पर

यहां Σ एक गणितीय संकेत है जिसका अर्थ है प्रत्येक अक्षर और उसके स्वर के संख्यात्मक मानों को मिलाकर क्रम से जोडते चले जाना. स्मरण रहे, सभी अर्धाक्षरों के स्थानबद्धता के मान अपने-अपने पूर्ण अक्षर से जुड़े हुए स्वर के ही रहेंगे. अर्थात पूर्णाक्षर का स्वर ही अर्धाक्षर का भी

पाठकों की सुविधा के लिए हम अक्षर व एवं इसके साथ लगनेवाले सभी स्वरों से बनी संख्याओं की तालिका यहां दे रहे है. इस तालिका में व के स्थान पर अन्य अक्षर बदलकर आप संबंधित संख्याओं का निर्माण स्वयं भी कर सकते हैं.

मूल अक्षर या स्वराक्षर	विस्तार	संख्यात्मक मान
व्		60
व	व X अ	60 X 10^0 =60
वा	व X आ	
वि	व X इ	60 X 10^2 = 6000
वी	व X ई	= 6 X 10^3
वु	व X उ	60X10^4 = 600000
वू	व X ऊ	= 6X10^5
वृ	व X ऋ	
वॄ	व X ॠ	60 X10^6 = 6 X10^7
व्ऌ	व X ऌ	
व्ॡ	व X ॡ	60 X 10^8 = 6X 10^9
वे	व X ए	60 X 10^{10}= 6 X10^{11}
वो	व X ओ	60 X 10^{12}=6 X 10^{13}
वै	व X ऐ	60 X 10^{14}=6 X 10^{15}
वौ	व X औ	60 X10^{16}= 6 X 10^{17}

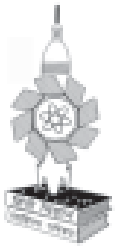

स्वर, माना जायेगा. यथा प्रवृत्ति शब्द को ले. इसका विस्तार है.

(प् + र) + (व X ऋ) + ((त् +त) X इ), जो कि (21+40)+ 60X10^6 +(16+16) X10^2 से निर्मित संयुक्त संख्या को दर्शाता है. यह संख्या 6000 3261 यानि छः करोड़ तीन हजार दो सौ इकसठ है.

इस लिपि में एक अक्षर और उससे जुड़े संयुक्त स्वर द्वारा प्रदर्शित सबसे बड़ी संख्या हौ से बनती है. जिसका मान 10^{18} है. इस प्रकार इस लिपि में बड़ी-बड़ी संख्याओं को भी छोटे-छोटे शब्दों से दर्शाने की अद्‌भुत क्षमता है. आचार्य आर्यभट्ट ने उपरोक्त संपूर्ण विवरण केवल एक ही श्लोक में बांध दिया है. जो यह दर्शाता है कि आर्यभट्ट विवरणों को संक्षिप्त करने के अद्‌भुत और निष्णात विद्वान थे. अब हम आगे के मूल पाठ में बढ़ते हैं.

आर्यभटीय के श्लोक 1/3 में लिखा है

युग रविभगणाः रव्युघृ, शशि चयगियिङुशुछ्लृ,
कु ङिशिबुण्लृष्खृ प्राक ।
शनि ढुङिवध्व, गुरू खिच्युभ,
कुज भद्‌लिझ्नुखृ, भुगुबुध सौरा : ।। (आ.1/3)

क्योंकि अब इस कोड से हम परिचित है इसलिए इस श्लोक को आप स्वयं भी समझने का प्रयत्न कर सकते हैं. इसका अर्थ है (एक) युग के कालान्तर में सूर्य (रवि) द्वारा लगाए गए चक्करों (भगण) की संख्या 4320.000 (=रव्युघृ) है, चन्द्रमा (शशि) द्वारा लगाए गए चक्करों की संख्या 5,77,53,336 (=चयगियिङुशुछ्लृ), पृथ्वी (= कु) द्वारा स्वधुरी पर लगाए गए चक्करों की संख्या 1,58,22,37,500 (= ङि - शिबुण्लृष्खृ), शनि के द्वारा लगाए गए चक्करों की संख्या 146564 (= ढुङिवध्व) गुरू के द्वारा लगाए गए चक्करों की संख्या 3,64,224 (=खिच्युभ), मंगल के द्वारा लगाए गए चक्करों की संख्या 22,96,824 (=भद्‌लिझ्नुखृ), तथा शुक्र व बुध ग्रह द्वारा पृथ्वी के चारों ओर लगाए गए चक्करों की संख्या सूर्य के समान ही होती है. आप उपरोक्त शब्दांकित संख्याओं को स्वयं भी संकेत लिपि के आधार पर ज्ञात कर सकते हैं. उदाहरणार्थ ङिशिबुण्लृष्खृ

= ङX इ + शX ई + बX उ + ण्X लृ + (ष्+ख) X ऋ
= 5X10^2 + 70X10^2 + 23X10^4 + 15X10^8 +
(80 + 2) X10^6 = 1582 23 7500

इसी प्रकार अन्य संख्याए भी शब्दानुसार लिप्यान्तर करके लिखी गयी है. यह श्लोक कहता है कि एक युग में 43,20,000 वर्ष होते हैं. (ध्यान रहे कि चाहे सूर्य, नक्षत्र मण्डल का एक चक्कर लगाये, अथवा पृथ्वी द्वारा सूर्य की कक्षा में एक पूर्ण चक्कर, दोनों ही परिभ्रमण कालों का मान एक वर्ष ही होगा.) इस एक युग (अर्थात 43,20,000 वर्षों) के दौरान चन्द्रमा 5,77,53,336 शनि 1,46,564 बृहस्पति 3,65,224 मंगल 22,96,824 क्रमशः अपनी-अपनी कक्षाओं के चक्कर पूरे करते हैं. बुध और शुक्र पृथ्वी से सूर्य की ओर होने से सूर्य के समान ही चक्कर लगाते हैं. किन्तु पृथ्वी इस काल में 1,58,22,37,500 चक्कर अपनी धुरी पर लगाती है.

यदि हम 1582237500 को 4320000 से विभाजित (भाग) करें तो हमें 366.2586806 संख्या मिलती है. क्योंकि एक दिन इस पूरे भ्रमण में अतिरिक्त गिनती में आता है, अतः एक वर्ष में 366.2586.... - 1 = 365.2586.. दिन होते हैं. वर्तमान में यह अन्तराल 365.2563 दिनों का माना जाता है. यह दर्शाता है की आर्यभट्ट ने वर्ष का दिन मान भी पर्याप्त शुद्धि से लिखा है. याद रहे समय अंतरालों के मान, मानक प्रेक्षणों के आधार पर ही तय किये जाते हैं, अतः तत्कालीन विद्वानों की प्रेक्षणीय शुद्धता उस समय के उपलब्ध वेधशालाओं और तंत्र को देखते हुए निश्चित रूप से स्तुत्य कही जा सकती है.

गणित पाद में आचार्य ने दशमलव पद्धति की संख्याओं के नामों यथा एक (10^0), दश (10^1), शत (10^2), सहस्र (10^3), त्वयुत (10^4), नियुत (10^5 या वर्तमान में एक लाख), प्रयुत (10^6 या दस लाख), कोटि (10^7), अर्बुद (10^8) एवं वृंद (10^9) को भी लिखा है, जो स्पष्ट करता है कि दशमलव पद्धति का प्रयोग तब तक पर्याप्त लोकप्रिय हो चुका था. इसी प्रकार आगे वर्ग (ज्यामितीय व आंकिक), वर्गमूल, घनमूल इत्यादि ज्ञात करने के सूत्र दर्शाये हैं. विशेषकर वृत्त के (परिधि / व्यास) स्थिरांक के संदर्भ में आर्यभट्ट (आ.2/10) स्पष्ट कहते हैं कि यह मान 3.1416 के नजदीक (निकट) है. अर्थात यह स्थिरांक शुद्ध भिन्न संख्या नहीं है. यह सूत्र कहता है कि किसी भी वृत्त के लिए परिधि/व्यास का मान 62832/20000 के निकटस्थ संख्या होती है. अर्थात π = 3.1416 (लगभग)

कालगणना के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि विश्व के अन्य देशों के तत्कालीन या उनसे पूर्व के विद्वानों की मान्यता थी कि पृथ्वी तबसे कोई 4000 वर्ष या आज से लगभग 6000 वर्ष पूर्व प्रकट हुई. इसके विपरीत भारतीय खगोलज्ञों और दार्शनिकों की मान्यता थी कि सृष्टि एक निरंतर चलने वाला दीर्घ प्रवाह है, जिसमें मनुष्य जीवन की भांति सृजन, पालन (जीवन) और प्रलय लगातार होनेवाली क्रमिक घटनाएं है. और संभवतः यह क्रम अनादि

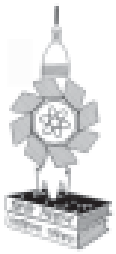

काल से चल रहा है.

आर्यभट्ट और अन्यान्य भारतीय विचारकों के अनुसार एक युग की अवधि, समय अन्तराल की पूर्ण वर्षों की संख्या में वह इकाई है, जब सौर परिवार में उपस्थित तत्कालीन सभी ज्ञात ग्रहों उपग्रहों द्वारा भ्रमण किये गये चक्करों की संख्या भी पूर्णांक इकाईयों में आ जाती है. तात्पर्य यह कि यदि एक प्राथमिक संदर्भ स्थिति से प्रारंभ होकर पुनः इसी विशेष अवस्था में उपरोक्त सभी ग्रह उपग्रहों को एक साथ फिर से पूर्व क़ी अर्थात पहले जैसी ही स्थिति तक आने में कम से कम जो समय लगता है, वह एक युग का समय है. इस काल का मापन आकाशीय प्रेक्षणों के आधार पर खगोलज्ञों ने किया, और यह मान 4320000 वर्ष (तब) पाया गया. अर्थात खगोलीय आंकड़ों से ही युग के वर्षों की संख्या प्राप्त की गयी. भारतीय खगोलज्ञ इससे आगे भी इन इकाइयों को ले गये. आर्य भटीय के अनुसार ये इकाईयां इस प्रकार है.

1 युग = 43,20000 इसे लौकिक भाषा में एक महायुग अथवा एक चतुर्युगी काल भी कहते हैं.

1 मनु = 72 युग

1 कल्प = 1008 युग = ब्रह्मा का एक दिन

जबकि अन्य पारंपारिक मान्यताओं के अनुसार वराहनिहिर (बृहत - संहिता) एवं सूर्य-सिद्धान्त इत्यादि के अनुसार

1 युग = 43,20,000

1 मनु = 71 युग

1 कल्प = 1000 युग

अन्यान्य विद्वानों के अनुसार इस 1 युग को अर्थात 43,20,000 वर्षों के अंतराल को ही महायुग भी कहा गया और इसके भी दस भाग किये गये. यह दसवाँ भाग एक कलिकाल या कलयुग कहा गया. इस प्रकार कलियुग का अन्तराल 4,32,000 वर्ष का है. अतः आर्यभटीय प्रणीत 1 युग = लौकिक 1 महायुग = लौकिक 10 कलयुग.

लौकिक दृष्टि से एक महायुग में चार युग अर्थात् क्रेता या सतयुग, त्रेता युग, द्वापर युग तथा कलियुग ये चार भाग बताये हैं, किन्तु नाम से स्पष्ट है ये कालान्तर क्रमशः

4 (कृत) कलि + 3 (त्रेता) कलि + 2 (द्वा) कलि + 1 कलि = 10 कलि. अर्थात 4: 3: 2: 1 के अनुपात में है और कलयुग से सीधे ही संबंधित है. इस प्रकार प्रचलित मान्यताओं से 1 कल्प = 1000 महायुग

= 432 करोड़ (पृथ्वी) वर्ष

यह भी मान्यता है कि ब्रह्मा के समय का केवल दिन वाला भाग ही 1 कल्प के बराबर होता है, और ब्रह्मा की 1 रात्रि भी 1 कल्प के बराबर मानी जाती है और इस प्रकार 2 कल्प अर्थात 864 करोड़ वर्षों में ब्रह्मा का एक पूरा दिन (रात्रि समेत) होता है.

आर्यभट्ट के अनुसार 1 कल्प = 1008 युग (या महायुग) और सृष्टि निरंतर चलनेवाली प्रक्रिया है.

संयोग से वर्तमान समय की वैज्ञानिक विधियों द्वारा पृथ्वी पर उपलब्ध रेडियो सक्रिय पदार्थों के विभिन्न समस्थानिकों (Isotopes) की उपलब्ध आनुपातिक प्रतिशत मात्रा से पृथ्वी की वर्तमान आयु का अनुमान निकाला गया है, और यह काल भी 4 से 5 अरब वर्षों के आसपास पाया गया है. जो एक कल्प के आसपास का समय है.

आर्यभट्ट, पृथ्वी गोल है इसकी चर्चा आर्यभटीय में अनेक स्थानों पर करते हैं, किन्तु इसे प्रत्यक्ष समझाने के लिए गोलपाद के एक श्लोक (आ. 4/13) में वे लिखते हैं कि हमारी इस पृथ्वी पर किसी एक ही विशिष्ट समय पर किसी एक स्थान पर तो सुर्योदय हो रहा है, जबकि दूसरी जगह मध्यान्ह है, वहीं तीसरी जगह सुर्यास्त हो रहा है, तथा चौथी जगह मध्य रात्रि का समय हो रहा है. यह श्लोक इस प्रकार है.

उदयो यो लंकायाम सोऽस्तमयः सवितुरेव सिद्धपुर।
मध्याह्नों यवकोट्यां रोमक विषयेऽर्धरात्रं स्यात् ।।

अर्थात जब लंका में सूर्योदय का समय होता है, उसी समय सिद्धपुर में सुर्यास्त होता है, यवकोटि में मध्याह्न और रोमक में मध्य रात्री का समय होता है. (यहां लंका वर्तमान उज्जैन, म.प्र.(भारत) के ही देशान्तर पर, किन्तु पृथ्वी की विषुवत रेखा पर स्थित एक बिंदु या काल्पनिक स्थान है, जो उज्जैन से दक्षिण दिशा की ओर होने से लंका नाम से सम्बोधित है.) स्पष्ट है आर्यभट्ट केवल युरोप और भारत की ही बात नहीं कर रहे, वे यवकोटी और सिद्धपुर को भी यहां दर्शा रहे हैं, इस विवरण में यवकोटी और सिद्धपुर, उपरोक्त संदर्भित लंका के देशान्तरों से क्रमशः 90^0 पूर्व, तथा 180^0 पूर्व (या पश्चिम) देशान्तर पर स्थित अन्य भूगोलीय बिन्दु हैं. इसी प्रकार रोमक भी यहां एक और अन्य विषुवत रेखीय बिन्दु है जो लंका के देशान्तर से 90^0 पश्चिम देशान्तर पर है.

स्पष्ट है कि आर्यभट्ट पृथ्वी के गोल होने के कारण उत्पन्न प्रभावों को यहां दर्शा रहे हैं. एक विशेष बात यह भी कि पृथ्वी के गोल होने में तत्कालीन किसी अन्य भारतीय खगोलज्ञ को भी आपत्ति नहीं थी (अर्थात् पृथ्वी गोल है यह भारत में सर्वमान्य हो चुका था). किन्तु, आर्यभट्ट के इस कथन पर आपत्ति थी कि पृथ्वी अपने अक्ष पर गतिमान होकर निरंतर घूम रही है. वराहमिहिर (575) और बाद में ब्रह्मगुप्त (628) इसे स्वीकार नहीं कर पाये, और ब्रह्मगुप्त ने

तो यह भी पूछा कि पृथ्वी पर खड़े लोग, इस तीव्र गति के कारण गिर क्यों नहीं जाते. स्मरण रहे, पृथ्वी के घूमने से विषुवत रेखीय क्षेत्रों में यह गति लगभग 1650 किमी. प्रतिघंटा के आस पास होती है. जो सामान्य ताप व दाब पर हवा में ध्वनि (आवाज) की गति से लगभग 1.4 गुणा अधिक (अर्थात 1.4 मेक) है. अतः वैसे तो यह शंका उपयुक्त है. परंतु ब्रह्मगुप्त सापेक्ष गति के सिद्धान्त को ठीक से न समझ पाने से शायद यह भूल गये कि हम पृथ्वी वासी सभी लोग और हमारी अन्यान्य सभी उपरचनाएं जैसे, घर, वाहन, यहां तक की वायुमंडल (आदि) भी पृथ्वी की इसी गति से ही संयुक्त होने के कारण स्वयं इस गति को अनुभव नहीं कर सकते है.

जैसे हम विमान या रेल यात्रा के दौरान समान गति पा जाने के बाद, जलपान इत्यादि करने में कठिनाई नहीं महसूस करते है, किन्तु गति बदलने या ब्रेक लगने पर ही इस प्रकार के बल या त्वरण से उत्पन्न धक्के का अनुभव कर पाते है. किन्तु वराह मिहिर व ब्रह्मगुप्त सापेक्ष गति ठीक से न समझ पाये और उलझ गये. जबकि भास्कराचार्य (प्रथम)

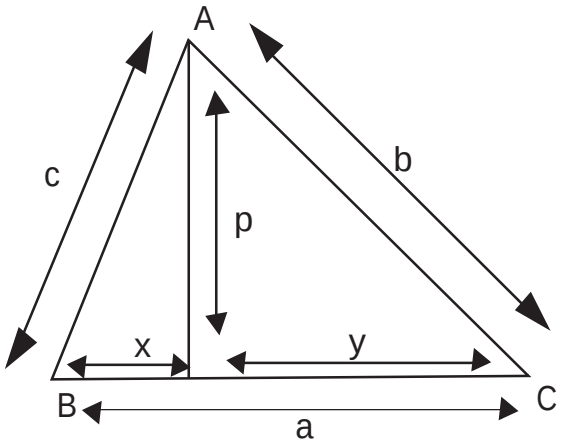

आर्यभट्टीय (आर्यभट्टकृत) के अनुसार त्रिभूज ABC का क्षेत्रफल (जिसमें बिन्दु A से भुजा BC पर डाले गये लंब का मान p है) $(1/2)\ a\ p$

$= (1/2)\ (x+y)\ p$

यहां पर

$p = (c^2-x^2)^{1/2} = (b^2-y^2)^{1/2}$

$x = (1/2)\ (a+(\ (c^2-b^2)/a)\ )$

$y = (1/2)\ (a-(\ (c^2-b^2)/a)\ )$

और लतादेव तथा बाद में लल्ला ने आर्यभट्ट का ही समर्थन किया.

सौर व चान्द्र वर्ष :-

एक वर्ष के समय अन्तराल का निर्णय पृथ्वी व सूर्य की सापेक्षित गति से होता था, और युग के अंतराल का निर्णय भी इसी सौर वर्ष को प्रमाण लेकर किया गया है, अर्थात् 12 चान्द्र मासों द्वारा वर्ष का निर्धारण नहीं किया जाता था, परन्तु चान्द्र पंचाङ्ग की तिथियों को सरलता से लोगों द्वारा अनुभव कर लेने के कारण सामान्य लोगो में यह पंचाङ्ग लोकप्रिय बना रहा. परिणाम स्वरूप सामाजिक पर्व, उत्सव इत्यादि के मानक दिन भी चांद्र तिथियों से जोड़े गये. किन्तु ये तिथियां भी मौसम तथा ऋतुओं के अनुसार ही बनी रहे, इसलिए भारतीयों ने प्रत्येक तीसरे वर्ष, लगभग 32 या 33 चांद्र मासों के बाद एक अधिक मास (पुरूषोत्तम मास) की प्रथा प्रचलित की, (जो संभवतः विश्व में अन्य किसी जगह नहीं है) और इसके द्वारा चान्द्र पंचाङ्ग को सौर वर्ष या संवत्सर से एकीकार कर दिया.

तत्कालीन अन्य विद्वानों की समझ थी कि ग्रह-उपग्रह और सूर्य को छोड़कर शेष सभी आकाशीय पिण्ड आकाश में नियतस्थान पर बंधे हुए से है और यह स्थिर सी रचना पूरी की पूरी एक विशिष्ट स्थिर कोणीय गति से लगभग 1^0 (अंश) प्रतिदिन, पूर्व से पश्चिम की दिशा में जा रही हैं. इस संपूर्ण आकाशीय मार्ग को 12 बराबर भागों में विभाजित करने से 12 राशियों का निर्माण हुआ, जबकि चान्द्र गति को ध्यान में रखकर इसी आकाशीय मार्ग को 27 बराबर भागों में विभक्त किया, जिन्हें 27 नक्षत्रों का नाम दिया गया.

आज हम जान चूके हैं, कि विश्व का हर पिण्ड, परमाणु से लेकर आकाश गंगाओं तक गतिशील अवस्था में ही विद्यमान हैं. परंतु सौर परिवार के सदस्यों के अलावा अन्य सभी प्रकाशयुक्त आकाशीय पिण्डों की पृथ्वी से दूरियां इतनी अधिक है, कि सैकड़ों या हजारों वर्षों के अंतराल में ही उनकी सापेक्षित स्थितियों में कुछ बदलाव देखना संभव हो सके. इसलिए उस काल के विद्वानों के लिए इन सब बाहरी पिण्डों (सौर परिवार के ज्ञात सदस्यों के अलावा) को स्थिर मानना एक मजबूरी सी थी.

सामान्य अनुभवों के आधार पर पृथ्वी को स्थिर मानना भी आवश्यक लगा. किन्तु आर्यभट्ट ने यह कहकर सबको चौंका दिया, कि स्वयं पृथ्वी आकाश में लटका हुआ एक पिण्ड है और स्वधुरी पर स्थिर गति से भ्रमण शील है. संभवतः आर्यभट्ट सापेक्ष गति के सामान्य नियमों को समझ

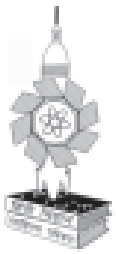

चुके थे. किन्तु इनका समुचित विस्तार न करने के कारण, वे बाद के लोगों की आलोचना के शिकार भी बने.

आर्यभटीय में लिखित सभी महत्वपूर्ण तत्थ्यों का समावेश करना यहां संभव नहीं है. फिर भी आर्यभट्ट के कुछ प्रमुख योगदानों का उल्लेख करना समुचित होगा. अंक स्वराक्षर संकेत लिपि, π का मान या पृथ्वी के स्वधुरी पर भ्रमण के अलावा आर्यभटीय में किसी कोण के फलन जैसे $\sin\theta$, इत्यादि का गणन अंतराल द्विभाजन विधि से दर्शाया है. आर्यभटीय में $\sin\theta$ न लिखकर $R\sin\theta$ का प्रयोग हुआ है जहां R वृत्त की त्रिज्या है. इसी प्रकार यदि $ax+b = cy+d =$ ------, हों, तो x, y,------ इत्यादि राशियों के मान निकालने के तरीके (कुटक विधि से), त्रिभुज या चतुर्भुज के क्षेत्रफल निकालने के सूत्र इत्यादि दिये हैं. कुछ उदाहरण इस प्रकार से है.

यदि किसी त्रिभुज की भुजाए a, b, व c हो तो आर्यभटीय के अनुसार उसका क्षेत्रफल (चित्र देखें)

$(1/2)\,(x+y)p = (1/2)\,a\,p$

होगा. तथा लंब p का मान

$p = (c^2 - x^2)^{1/2}$ होगा.

जबकि $x = (1/2)\,(a+\,(\,(c^2-b^2)/a)\,)$

और $y = (1/2)\,(a - (\,(c^2-b^2)/a)\,)$

हालांकि y या x में से किसी एक राशी का ही मान पर्याप्त है, पर आर्यभटीय में दोनों ही पदों को दर्शाया है.

इसी प्रकार विभिन्न गणितीय श्रेणियों का योग, पूर्णांक संख्याओं के योग, उनके वर्गों से बनी श्रेणियों का योग, या उनके घनों से निर्मित श्रेणियों के योग के परिणामों का उल्लेख है. ये परिणाम श्लोक रूप से अंक मात्रकों में इस प्रकार है.

$N_1 = 1+2+3..+n = (n+1)n/2$

$N_2 = 1^2+2^2+3^2+..+n^2$

$= n(n+1)(2n+1)/6$

तथा $N_3 = 1^3+2^3+3^3+....+n^3$

$= \{n(n+1)/2\}^2$

जो आज भी इन्हीं रूपों में उपयोग किये जाते हैं.

इसी प्रकार सुडौल वस्तुओं के आयतन निकालने के सूत्र भी आर्यभटीय में दर्शाये हैं. घन, शंकु आदि. किन्तु गोले के आयतन का सूत्र आर्यभटीय में कुछ त्रुटीयुक्त है. आर्यभटीय में वृत्त का क्षेत्रफल एकदम शुद्ध रूप में लिखा है $(\pi\, r^2)$, यहां r वृत्त का अर्धव्यास है. संभवतः आर्यभट्ट ने इसे लेकर गोले में ऊंचाई दर्शानेवाली राशी को वृत्त के क्षेत्रफल का वर्गमूल मानकर निकाला, और आयतन का मान = आधार का क्षेत्रफल x ऊंचाई, का उपयोग कर गोले के आयतन का सूत्र लिखा $(\pi\, r^2)^{3/2}$ अर्थात $(\pi\, r^2)x\,(\pi r^2)^{1/2}$ जो ठीक तो नहीं है, परंतु यह सूत्र लगभग पांच सौ वर्ष तक उपयोग में आता रहा. इसका सही सूत्र $(4/3)\pi\, r^3$ भास्कराचार्य द्वितीय (1114-83) द्वारा सिद्धान्त शिरोमणि में दिया गया . आर्यभट ने एक रेडियन (कोण मापन की इकाई) का मान निकटस्थ पूर्णांक मिनटों में 3438' लिखा. जबकि शुद्ध मान 3437.7' ... है. आर्यभटीय में एक और धारणा यह भी है कि सभी ग्रह एक ही गति से सौर मण्डल का चक्कर लगाते है, जो सही नहीं है. आर्यभट्ट गुरुत्वाकर्षण का तो जिक्र करते हैं, पर संभवतः पिण्डों की सापेक्ष दूरी के अनुसार उसमें बदलाव आदि का विस्तार नहीं करते. खैर, यह स्थिति तो आर्यभटीय के बाद के लगभग एक हजार वर्ष तक भी बनी रही. यहां तक की गुरुत्वबल संबंधित पिण्डों की आपसी दूरी के वर्ग के प्रतिलोमानुपाती होता है, ये मापन भी न्युटन के समय से भी सौ वर्ष बाद ही संभव हुए.

आर्यभट्ट ने स्पष्ट कहा कि सौर मंण्डल के सभी ग्रह, अर्थात बुध, मंगल, शुक्र आदि तथा अन्य उपग्रह चंद्रमा आदि, सूर्य के प्रकाश से ही चमकीले दिखते हैं और ग्रहों का छायावाला भाग वहां के रात्री काल को प्रदर्शित करता है. अर्थात आर्यभट्ट जान चुके थे कि सौर मंडल के ग्रहों का अपना स्वयं का कोई दृश्य प्रकाश नहीं है.सूर्य-चंद्र ग्रहणों के काल और स्थान के निर्णयों पर तो चतुर्थ पाद भरा हुआ है.

आर्यभटीय के लगभग अंत में (आ.4/49) में आर्यभट्ट स्वयं अपना मत प्रदर्शित करते हुए कहते है, कि 'सत्य और असत्य क़ी मान्यताओं से भरे उपलब्ध (तत्कालीन) साहित्यिक समुद्र के मंथन से और अपनी स्वमति रूपी नाव का उपयोग कर अपने गुरुदेव की कृपा के आधार पर मैं यह सत्यान्वेषण प्रस्तुत कर रहा हूं.' हमारे विचार से एक वैज्ञानिक ही इस प्रकार का निवेदन कर सकता है, हमें लगता है कि ऐसे अभूतपूर्व विद्वत्ता के धनी और अपने समय के क्रांतिकारी वैज्ञानिक विचारक आचार्य आर्यभट्ट के कार्यों का स्मरण मात्र ही हम भारतवासियों को निश्चित ही विशिष्ट गौरव की अनुभूति करा देने में समर्थ है. भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान (ISRO) ने इस महान विद्वान की स्मृति में अपने प्रथम अंतरिक्ष उपग्रह का नाम आर्यभट्ट रखा जो 1975 में (आर्यभट्ट के 1500 वे जन्मवर्ष पर) रूसी रॉकेट की मदद से अंतरिक्ष में प्रक्षेपित कर स्थापित किया गया था.

विज्ञान प्रश्न मालिका - 2

हां, अता पता ज़रूर पूछो पर इन पशु-पक्षियों के गुण जल्द बूझो!

*मित्रो, अनेक पशु-पक्षी सैंकड़ों-हजारों वर्षों से हमारे साथी रहे हैं. जी हां, कुत्तों से हमारी दोस्ती 10 हजार वर्षों से तथा बिल्ली से हमारी मित्रता 5 हजार वर्षों से रही है. इसी तरह तोता, मैंना और मोर जैसे पक्षी, तो हाथी, घोड़ा तथा ऊंट जैसे पशु भी हजारों वर्षों से हमारी जिंदगी का अटूट हिस्सा रहे हैं, है न ! शेरो-टाइगरों की मौजूदगी ने हमारे देश को अद्‌भुत ख्याति दी है. पर सवाल आज यह है कि क्या इतने लंबे समय के बाद भी हम इन पशु-पक्षी साथियों का स्वभाव-आचरण (**Ethology**), या उनकी तकलीफें-जरूरतें आदि को समझ पाये हैं. यही जानने के लिये इन विविध प्राणियों पर यह रोमांचक प्रश्नमालिका तैयार की गयी है जिससे हमें इन साथियों के प्रति हमारी स्वयं की समझ का पता चले.*

इस बार की विज्ञान प्रश्नमालिका में कुल 11 प्रश्न हैं, हर प्रश्न के तीन-तीन उत्तर 'क', 'ख' तथा 'ग' विकल्पों में आपके सामने हैं जिनमें से आपको सही विकल्प चुनना है. इन चुने हुए विकल्पों का मिलान फिर आप इसी अंक में अन्य किसी पृष्ठ पर दिए गए जवाबों से कर सकते हैं.

प्रश्न 1 : हमारी पृथ्वी का सबसे बड़ा थलचर है हाथी. बताइए कि अफ्रीकी हाथी तथा भारतीय हाथी में मुख्य फर्क क्या है?
(क) भारतीय हाथी का वजन, आकार और क़ान अपेक्षाकृत छोटे होते हैं.
(ख) अफ्रीकी हाथी पूरी तरह शाकाहारी नहीं होते.
(ग) अफ्रीकी हाथी के कान और दांत अपेक्षाकृत छोटे होते हैं.

प्रश्न 2 : इनमें से किस पशु के समूह को 'कारवाँ' कहा जाता है?
(क) हाथी (ख) ऊँट (ग) घोड़ा

प्रश्न 3 : कोई भी अपने पालतू डॉग्स को दंतचिकित्सक के पास नहीं ले जाता. उन्हे केविटीज की समस्या इसलिए नहीं होती क्योंकि....
(क) उनकी लार का pH क्षारीय रहता है.
(ख) उनकी लार का pH अम्लीय रहता है.
(ग) उनके दांतो पर ऐनेमल होता ही नहीं.

प्रश्न 4 : हम कॉमिक्स पुस्तकों तथा टीवी वगैरह के जरिये मिकी माउस की आनंदकारी हरकतों का लुत्फ उठाते हैं. इस कार्टून चरित्र की कल्पना और निर्माण सन-1928 में करने वाले का नाम है.
(क) रडयार्ड किपलिंग (ख) वाल्ट डिस्नी (ग) सालिम अली

प्रश्न 5 : पेंथरा लियो यानी जंगल का राजा शेर, है न? बताइए कि 110 दिन के गर्भकाल के बाद इसकी मादा (शेरनी) एक वक्त में कितने बच्चे पैदा करती है?
(क) केवल एक (ख) दो से छह (ग) आठ से दस

प्रश्न 6 : कुछ लोग कई बार जानवरों के नाम से ही खौफ खाते हैं. तरह तरह के जंतुओं के इस डर यानी जंतू-भीती को अंग्रेजी में क्या कहते हैं?
(क) साइनोफोबिया (Cynophobia)
(ख) ॲल्यूरोफोबिया (ailurophobia)
(ख) झूफोबिया (zoophobia)

प्रश्न 7 : चार्ल्स डारविन के मुताबिक हम कपि की संताने हैं, है न? इस बात के सबूत कई हैं जिनमें एक यह है कि हम मनुष्यों का आनुवांशिक शिल्प (DNA) इन में से एक कपि से 99% मिलता जुलता है. हां, कौन है यह..?
(क) गोरिल्ला (ख) चिंपाजी (ग) ओरांग-उटान

प्रश्न 8 : मुर्गी द्वारा अंडा देने के कितने दिन बाद इसमें से चूजा बाहर आता है?
(क) 11 दिन (ख) 21 दिन (ग) 41 दिन

प्रश्न 9 : हमारे देश के केरल, कर्नाटक, झारखंड तथा ओडिसा इन सभी राज्यों का राज्यपशु एक ही है, पर वह कौन है?
(क) हाथी (ख) कृष्ण-मृग (ग) टाइगर

प्रश्न 10 : श्रीलंका के झंडे पर एक पशु की तस्वीर है जोकि एक तलवार थामे हुए है. यदि आप क्रिकेट प्रेमी हैं तो आये दिन यह झंडा देखने को मिलता होगा, है न? तो बताइए इस झंडे पर मौजूद पशु का नाम. क्या यह है?
(क) टाइगर (ख) शेर (ग) भेड़िया

प्रश्न 11 : कर्नाटक राज्य में हाल में एक गिद्ध अभयारण्य शुरु हुआ है क्योंकि देश में गिद्धों की जबर्दस्त कमी हो गई है. भारत सरकार द्वारा अधिसूचित यह 'वल्चर सैंक्चुरी' देश की प्रथमेव वल्चर सैक्युरी है. संयोग से यह उसी स्थान पर है जहां फिल्म 'शोले' शूट हुई थी. अब बताइए, यह सैंक्चुरी कर्नाटक के किस स्थान पर स्थापित की गई है.
(क) रामदेवार बेट्टा नामक स्थान पर जिसे स्थानीय लोग रामानगरा भी कहते हैं.
(ख) उडिपी में यहां मशहूर कृष्ण मंदिर 'उडिपी श्रीकृष्णा' भी है
(ग) काजू के लिए मशहूर मंगलोर स्थान से सटे क्षेत्र में

डॉ.देवकी नंदन,
बी-707, प्रगति अपार्टमेंट्स, प्लॉट 5 सी, सेक्टर 11, द्वारका,
नई दिल्ली-110075

विज्ञान समाचार

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र से :

1. एकीकृत पर्यावरणीय विकिरण मापन तथा स्वचालित मौसम केंद्र (ERM-AWS) का विकास

विकिरण संबंधी किसी आपातकालीन परिस्थिति से निपटने के लिए मौसम की जानकारी तथा पर्यावरणीय विकिरण का लगातार मानीटरन अति महत्वपूर्ण होता है. भा.प.अ. केंद्र के स्वास्थ्य, संरक्षा एवं पर्यावरण वर्ग द्वारा समय-समय पर अद्यतन तकनीकी पर आधारित ऐसी विकिरण संसूचन प्रणाली का विकास किया जाता रहा है जो इस उद्देश्य की आपूर्ति के लिए उपयुक्त साबित हों. हाल ही में भा.प.अ. केंद्र तथा भा.अ.अ.के. (इसरो) ने संयुक्त रूप से ऐसे ही एक एकीकृत पर्यावरणीय विकिरण मापन तथा स्वचालित मौसम केंद्र (ERM-AWS) का विकास किया है जिसमें सौर ऊर्जा से संचालित एक ही प्रणाली के अन्दर ऑनलाइन आंकड़ों को एकत्र किया जाता है तथा प्राप्त

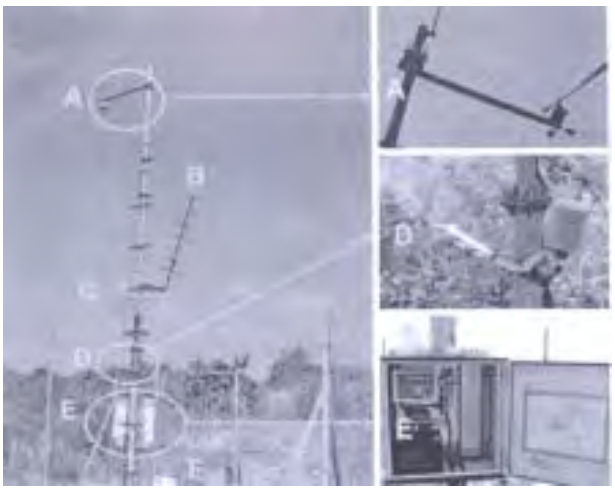

चित्र - एकीकृत पर्यावरणीय विकिरण मापन तथा स्वचालित मौसम केंद्र (ERM-AWS) प्रणाली

A - वायु फलक और कप एनीमोमीटर, B- प्रसारण एंटीना, C- सौर पैनल, D - ताप, आर्दता तथा पृथ्वी का कुल विकिरण स्तर मापन हेतु संवेदक , E - डाटा अधिग्रहण, गामा विकिरण मानीटर और बैटरी, ई - वर्षामापी यंत्र.

आंकड़ों को इसरो के मौसम उपग्रह की मदद से देश के कोने-कोने तक भेजा जा सकता है.

स्वदेश में विकसित कम लागत वाली यह प्रणाली जिन ऑनलाइन आंकड़ों को प्रति घंटे की दर से प्रदर्शित करती है उनमें प्रमुख हैं- हवाओं की दिशा, हवाओं की गति, वायुमंडलीय ताप, दाब, आर्द्रता, वर्षा की मात्रा, पृथ्वी का कुल विकिरण स्तर और पर्यावरणीय गामा विकिरण. 7 मीटर लंबे खम्भे पर स्थापित इस प्रणाली में भिन्न-भिन्न ऊँचाइयों पर कई संवेदक लगे हुए हैं जिनके माध्यम से अपेक्षित आंकड़े प्राप्त किये जाते हैं. अनुसंधान एवं विकास हेतु इस प्रणाली को विकिरण संरक्षा प्रशिक्षण एवं प्रमाणन केंद्र (CTCRS), अणुशक्तिनगर, मुंबई में स्थापित किया गया है.

यदि वायुमंडल में अचानक विकिरण की मात्रा, पूर्व निर्धारित प्राकृतिक विकिरण से कहीं अधिक हो जाती है, तो यह किसी दुर्घटना का संकेत है और ऐसे में इस प्रणाली से प्राप्त आंकड़े आपदा प्रबंधन में मद्दगार साबित होंगे.

2. द्रव प्रहस्तन रोबोट का विकास

द्रव प्रहस्तन रोबोट (Liquid Handling Robot) स्वदेशी विकसित, एक अत्याधुनिक रोबोटिक प्रणाली है, जो बड़े पैमाने पर द्रव पदार्थों के हस्तन, स्थानांतरण इत्यादि कार्यों को सटीकता से करने के लिए उपयुक्त है. यह रोबोटिक प्रणाली अनुसंधान के विविध क्षेत्रों जैसे की चिकित्सा, जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान, औषधि विज्ञान आदि में उपयोग होने वाले कई प्रकार के द्रव पदार्थों के स्वचालित हस्तन को आसान बनाती है. खासकर, हानिकारक विषैले रासायनिक तरल पदार्थों के हस्तन में तो यह प्रणाली बहुत ही कारगर है. इस रोबोट में लगा हुआ एक तरल वितरण सिरा (Liquid dispensing head) द्रव के वांछित आयतन को एकत्र करने और वितरण करने का कार्य करता है. इस रोबोट में तरल वितरण सिरे के साथ ही जुड़ी हुई, स्वनिर्धारित सॉफ्टवेयर द्वारा संचालित, स्थिति निर्धारक प्रणाली (positioning system) उच्च प्रवाह प्रदान करने में मदद करती है. यह रोबोटिक प्रणाली सीमित मानव संसाधनों का उपयोग करते हुए, कई नमूनों को एक साथ संभालने का एक आधुनिक दृष्टिकोण है और द्रव प्रहस्तन के दौरान होने

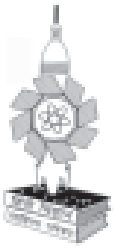

वाली त्रुटियों की संभावना को कम करने में बहुत उपयोगी है.

भा. प. अ. केंद्र के सुदूर हस्तन एवं रोबोटिक्स प्रभाग (DRHR) ने द्रव प्रहस्तन रोबोट का विकास विभिन्न प्रकार की जैविक कोशिकाओं से डीएनए के निष्कर्षण के लिए किया है. इस रोबोट प्रणाली के मशीनी कलपुर्जों में शामिल हैं - एक मोटर चालित तथा वायु विस्थापित 12 चैनलों वाला पिपेटिंग सिरा, एक सटीक द्वि-अक्षीय रोबोट स्थिति निर्धारण प्रणाली और एक ट्रे जिसमें स्वच्छ टिप तथा मानक विलयनों को रखने के साथ-साथ उपयोग की गई टिप के सुरक्षित निपटान की भी व्यवस्था है. इस प्रणाली के कई व्यापक अनुप्रयोग हैं और इसे उद्योगों, अस्पतालों एवं अनुसंधान प्रयोगशालाओं में द्रव प्रहस्तन को सुविधाजनक बनाने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है. इस प्रणाली के कुछ विशिष्ट उपयोग निम्नलिखित हैं-

- यह रोबोट प्रणाली कार्बनिक संश्लेषण, जैव प्रौद्योगिकी, फार्मास्युटिकल, इत्यादि से जुड़े हुए उद्योगों में रेडिओसक्रिय तथा गैर-रेडिओसक्रिय द्रव पदार्थों के हस्तन हेतु उपयोगी है.
- इस रोबोट के उपयोग से, पूर्व निर्धारित रासायनिक अभिक्रियाओं का स्वतंत्र निष्पादन बिना किसी आपरेटर की मदद के भी किया जा सकता है.
- यह प्रणाली द्रव हस्तन के दौरान किसी भी प्रकार के आपसी संदूषण को दूर करने में अति-उपयोगी है.

3. माइक्रोवेव द्वारा ड्रिलिंग की तकनीक का विकास :

माइक्रोवेव ओवन से पानी उबालने तथा खाना पकाने की प्रक्रिया से वर्तमान में लगभग सभी लोग परिचित होंगे. परन्तु इस सूक्ष्म तरंग के उपयोग से विभिन्न पदार्थों जैसे कि लकड़ी, काँच, एल्युमिनियम, कॉपर, स्टील, तथा जंतुओं की हड्डियों आदि में छिद्र करने की तकनीक नवीनतम है. सैद्धातिक रूप से माइक्रोवेव विकिरण को, माइक्रोवेव सुग्राही पदार्थों में संकेंद्रित करके, उनमें गर्म क्षेत्र का निर्माण कर छिद्र उत्पन्न किया जा सकता है. इसी सिद्धांत के आधार पर भा.प. अ. केंद्र के रिएक्टर नियंत्रण प्रभाग के वैज्ञानिकों ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रूडकी के साथ मिलकर पदार्थों की माइक्रोवेव ड्रिलिंग तकनीक का विकास किया है. माइक्रोवेव ड्रिलिंग तकनीक की खासियत यह है कि इससे किसी प्रकार का शोर अथवा धूल पैदा किए बिना ही पदार्थों में छिद्र किया जा सकता है.

विभिन्न पदार्थों के साथ माइक्रोवेव की अंतर्क्रिया (Interaction) को तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है. प्रथम श्रेणी में माइक्रोवेव अवशोषित करने वाले वे पदार्थ आते हैं जिनमें विद्युतीय ऊर्जा क्षय (Dielectric loss) सबसे अधिक होता है और वे इस प्रकार की विद्युत चुम्बकीय तरंगों (Electromagnetic waves) को आसानी से अवशोषित कर उसे ऊष्मा में परिवर्तित कर देते हैं. द्वितीय श्रेणी में वे पारदर्शी पदार्थ आते हैं जिनमें विद्युतीय ऊर्जा क्षय सबसे कम होता है जैसे की कांच, सिरामिक और वायु जिनसे होकर माइक्रोवेव पार कर जाती हैं. तृतीय श्रेणी में माइक्रोवेव अपारदर्शी पदार्थ आते हैं जिनमें मुख्यतः मुक्त इलेक्ट्रानों युक्त चालक पदार्थ (Conducting material) जैसे कि धातुएं, शामिल होती हैं जो सामान्य तापमान पर माइक्रोवेव को परावर्तित या अवशोषित करती हैं. प्रयोगात्मक रूप से साधारणतया माइक्रोवेव ऊष्मन की दो विधियाँ : प्रत्यक्ष माइक्रोवेव ऊष्मन (Direct Microwave Heating, DMH) और माइक्रोवेव संकर ऊष्मन (Microwave Hybrid Heating, MHH) प्रयोग में लाई जाती हैं. इस प्रक्रिया में माइक्रोवेव ऊर्जा के अवशोषण से पदार्थों का तापमान बढ़ जाता है तथा तापमान में वृद्धि के साथ और अधिक ऊर्जा का अवशोषण होता है. फलस्वरूप गर्म क्षेत्र का निर्माण होता है जो पदार्थों के गलन, वाष्पन अथवा द्रव, गैस या प्लाज्मा के निर्माण को अंजाम देता है. इस प्रकार पदार्थों पर माइक्रोवेव ऊर्जा को संकेंद्रित कर सरलता से अपेक्षित व्यास का छिद्र उत्पन्न किया जा सकता है. ध्यातव्य है कि धातु एवं अधातु दोनों की माइक्रोवेव द्वारा ड्रिलिंग की जा सकती है और आने वाले समय में औद्योगिक एवं चिकित्सीय अनुप्रयोगों हेतु यह तकनीक एक किफाइती विकल्प के रूप में उभर कर सामने आएगी.

4. हिग्स-बोसान कण की खोज में भारतीय संस्थानों तथा भा.प.अ. केंद्र का योगदान :

निश्चित रूप से जिनेवा स्थित यूरोपीय नाभिकीय अनुसंधान संगठन (meve & CERN) द्वारा किये गए एक महाप्रयोग में हिग्स-बोसान कणों के अस्तित्व का पुष्टीकरण इस सदी की महानतम वैज्ञानिक उपलब्धि है. आखिरकार इन कणों की खोज के पश्चात ब्रम्हांड की उत्पत्ति के रहस्य से पर्दा उठाया जा सकता है. जैसा कि हम अभी तक जानते थे कि तत्त्व की न्यूनतम इकाई परमाणु के केंद्र में प्रोटॉन और न्यूट्रॉन होते हैं तथा इलेक्ट्रॉन इनके चारों ओर चक्कर लगाते हैं. प्रोटान में एक इकाई धन आवेश, इलेक्ट्रान में एक इकाई ऋण आवेश तथा न्यूट्रॉन आवेश रहित कण होता है और किसी परमाणु में प्रोटॉनों की संख्या इलेक्ट्रानों के बराबर होती है. सन 1964 में मुर्रे गेल-मान एवं जॉर्ज ज्वेइग ने यह प्रतिपादित किया कि न्यूक्लिआन (प्रोटान और न्यूट्रान) परमाणु

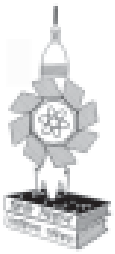

के आधारभूत कण नहीं हैं और ये उप-संरचना (जिन्हें क्वार्क कहते हैं) से मिलकर बने होते हैं. इस तथ्य के प्रायोगिक साक्ष्य सन 1969 में प्राप्त हुए. सन 1970 में परमाणु संरचना के स्टैण्डर्ड माडल की संकल्पना सामने आई और इन उप-परमाण्वीय कणों का समावेश उसमें किया गया साथ ही अन्य उप-परमाण्वीय कणों की उपस्थिति की संभावना भी व्यक्त की गयी. इस प्रकार कुल सत्रह उप-परमाण्वीय कणों की खोज की गई जिन्हें उनके चक्रण मानों के आधार पर या तो फर्मिआन (फर्मी-डिरेक सांख्यिकी का पालन करने वाले) या बोसान (बोस-आइन्सटाइन सांख्यिकी का पालन करने वाले) कण कहा जाता है. हिग्स कण नाम वैज्ञानिक पीटर हिग्स के नाम पर पड़ा जो कि उन छः अनुसंधानकर्ताओं में से एक हैं जिन्होंने सन 1964 में इन कणों की मौजूदगी का सिद्धांत प्रतिपादित किया था. चूंकि ये कण बोस-आइन्सटाइन सांख्यिकी का पालन करते हैं अतः हिग्स-बोसान कहलाते हैं. हिग्स-बोसान कण परमाणु संरचना के स्टैण्डर्ड मॉडल का आखरी कण था जो पिछले चार दशकों से कण भौतिकशास्त्रियों के लिए पहेली बना हुआ था. फ्रांस-स्विट्जरलैंड की सीमा पर बनी एक विशाल प्रयोगशाला में, 27 किलोमीटर की परिधि वाली एक महामशीन, जिसे लार्ज हेड्रान कोलाईडर (LHC) कहा जाता है, द्वारा इन कणों की खोज के प्रायोगिक प्रमाण मिले हैं. हिग्स-बोसान कण इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि पदार्थ निर्माण करने वाले अन्य आधारभूत कण जब हिग्स-बोसान कणों के संपर्क में आते हैं तब उनमें संहति की उत्पत्ति होती है. बिना संहति के इस ब्रह्मांड की कल्पना भी नहीं की जा सकती.

भारत सहित विश्व के अनेक देशों के वैज्ञानिकों ने इस महाप्रयोग में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है. भारतीय संस्थानों ने इस महाप्रयोग के जिन दो महत्वपूर्ण अध्ययनों में प्रमुख योगदान दिया है वो हैं- संहत म्युआन सोलेनाइड (Compact muon solenoid, CMS) और एक बृहद आयन कोलाईडर प्रयोग (A large ion collider experiment, ALICE) ALICE प्रयोग क्वार्क ग्लुआन प्लाज्मा (Quark gluon plasma, QGP) के अध्ययन पर केन्द्रित है जबकि CMS प्रयोग भारी आयनों के संघट्ट से क्वार्क ग्लुआन प्लाज्मा के साथ-साथ हिग्स-बोसान कणों के निर्माण का अध्ययन करता है. CMS प्रयोग में जिन भारतीय संस्थानों के वैज्ञानिकों का समूह सम्मिलित था उनमें प्रमुख हैं- बीएआरसी (मुंबई), दिल्ली विश्वविद्यालय (दिल्ली), आईआईटी (मुंबई),पंजाब विश्वविद्यालय (चंडीगढ़), साहा नाभिकीय भौतिकी संस्थान (SINP, कोलकाता) टाटा मूलभूत अनुसंधान वेंद्र (TIFR,मुंबई) तथा विश्वभारती विश्वविद्यालय (शान्तिनिकेतन). ALICE प्रयोग में जिन भारतीय संस्थानों ने योगदान प्रदान किया है, वो हैं- अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय (अलीगढ़), आईआईटी (मुंबई), भौतिकी संस्थान (IOP, भुवनेश्वर), जम्मू विश्वविद्यालय (जम्मू), पंजाब विश्वविद्यालय (चंडीगढ़), राजस्थान विश्वविद्यालय (जयपुर), साहा नाभिकीय भौतिकी संस्थान (SINP, कोलकाता) तथा परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र (VECC, कोलकाता). भा.प.अ. केंद्र के वैज्ञानिकों का समूह मुख्य रूप से CMS संसूचक (Detector) के प्रयोग से QGP के अध्ययन में जुटे हुए हैं. इसके अलावा भारतीय समूह के वैज्ञानिकों ने प्रायोगिक आंकड़ों के विश्लेषण हेतु साफ्टवेअर के विकास तथा संसूचकों के कई महत्वपूर्ण घटकों के निर्माण में भी सहयोग प्रदान किया है.

भा.प.अ. केंद्र की सक्रिय भागीदारी से देश में पहली बार संसूचकों में प्रयोग होने वाले सिलिकान संवेदकों (Silicon sensors) का विकास किया गया जिसका बड़े पैमाने पर उत्पादन भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड, बेंगलुरु द्वारा किया गया. भा.प.अ. केंद्र ने इस महाप्रयोग के संसूचकों में इस्तेमाल होने वाले वृहद आकार के 32 स्ट्रिप युक्त सिलिकॉन संवेदकों की आपूर्ति की है. भा.प.अ. केंद्र ने पंजाब विश्वविद्यालय (चंडीगढ़) के साथ मिलकर प्रतिरोधी प्लेट चैंबर (Resistive plate chamber, RPC एक नए प्रकार का विशाल गैस संसूचक) का निर्माण किया है जो CMS संसूचक के माध्यम से म्युआन के मार्ग का संकेत प्रदान करने में अहम् भूमिका निभाते हैं. नाभिकीय भौतिकी प्रभाग (NPD, BARC) तथा पंजाब विश्वविद्यालय (चंडीगढ़) को संयुक्त रूप से ऐसे 50 RPC के निर्माण, संयोजन एवं अभिलक्षणन का कार्यभार सौपा गया है. राजा रमन्ना प्रगत प्रौद्योगिकी केंद्र (RRCAT, इंदौर) तथा भा.प.अ. केंद्र ने ग्रिड कम्प्यूटिंग तथा त्वरक के विभिन्न घटकों की आपूर्ति में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है LHC प्रयोग के विभिन्न कार्यक्रमों में भारतीय योगदान को देखते हुए सर्न में भारत को पर्यवेक्षक का दर्जा दिया है. ज्ञात हो कि हिग्स-बोसान कण के नाम में ही एक भारतीय वैज्ञानिक, सत्येंद्र नाथ बोस का नाम भी जुड़ा हुआ है.

प्रस्तुति : एस. के. पाठक
वैज्ञानिक अधिकारी (डी)
ईंधन पुनर्संसाधन प्रभाग
भा. प. अ. केंद्र, ट्राम्बे मुंबई -400085

टिप्पणियां

1. वर्ष 2013 के नोबेल पुरस्कार

कोशिकाओं में संचार प्रक्रिया को समझने के लिए मिला चिकित्सा का नोबेल पुरस्कार

इस वर्ष चिकित्सा के नोबेल पुरस्कार से अमेरिकी वैज्ञानिकों की जोड़ी जेम्स रोथमैन और रैंडी शेकमैन तथा जर्मन वैज्ञानिक थॉमस स्यूडॉफ को सम्मानित किया गया है. यह पुरस्कार उन्हें कोशिकाओं में हॉर्मोन, एंजाइम सहित अन्य पदार्थों के संचार से जुड़े उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए दिया गया है. जूरी ने पुरस्कारों की घोषणा करते हुए कहा कि इसके जरिए वैज्ञानिक कोशिकाओं में हॉर्मोन, एंजाइम आदि के संचार को समझ सकते हैं और उसमें होनेवाले अंतर के आधार पर भविष्य में डायबिटीज जैसे गंभीर रोगों का सही सही इलाज खोज सकते हैं.

प्रत्येक कोशिका एक फैक्ट्री होती है जो मूलघटकों के आवश्यक योगिकों के अणुओं को तैयार कर उनका निर्यात करती है. उदाहरण के लिए इंसुलिन को बना कर रक्त में निर्मुक्त कर दिया जाता है. इसी प्रकार न्यूरोट्रांसमीटर नामक रासायनिक संकेतों को एक कोशिका से दूसरी कोशिका में भेजा जाता है. इन अणुओं को छोटे छोटे पैकेजों (जिन्हें वेसिकिल कहते हैं), के जरिए कोशिकाओं में भेजा जाता है. इन वैज्ञानिकों ने उन आण्विक सिद्धांतों की खोज की है जिसके जरिए इन अणुओं को कोशिकाओं में सही समय और सही स्थान पर पहुंचाया जाता है.

अमेरिका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के कोशिकाविज्ञानी प्रोफेसर रैंडी डब्ल्यू शैकमैन ने वेसिकल ट्रैफिक के लिए जरूरी जीनों के सेट की खोज की है. अमेरिका के ही न्यू हेवन स्थित येल विश्वविद्यालय के बायोमेडिकल साइंसेज के प्रोफेसर जेम्स रोथमैन ने उस प्रोटीन प्रक्रिया का पता लगाया है जो वेसिकल्स में उनकी लक्षित कोशिकाओं द्वारा अवशोषण सुनिश्चित करती है. जर्मन मूल के शरीर विज्ञानी प्रोफेसर थॉमस स्यूडॉफ ने स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में किए गए शोध के द्वारा पता लगाया है कि किस प्रकार वेसिकल्स को अपने अणु लक्षित कोशिकाओं को सौपने का संकेत मिलता है. इस पूरी प्रक्रिया में किसी प्रकार की गड़बड़ी होने के कारण तंत्रिका संबंधी बीमारियां होती है. उदाहरण के लिए मधुमेह और प्रतिरोधक क्षमता को कमजोर करने संबंधी बीमारियां. इन खोजों से डॉक्टरों को बच्चों में कम प्रतिरोधक क्षमता और मधुमेह जैसी गंभीर बीमारियों का इलाज करने में मदद मिलेगी. साथ ही यह भी पता चलेगा कि भ्रूण के अंदर वे कौन सी हलचलें है जिनसे अंगों का विकास होता है. इससे यह भी होगा कि मस्तिष्क में कैसे तंत्रिका कोशिकाएं ट्रांसमिट (भेजती) करती है. इतना ही नहीं, इसके आधार पर वैज्ञानिक भविष्य में कई अन्य असाध्य बीमारियों का इलाज भी कर सकेंगे.

रसायन विज्ञान को साइबर स्पेस तक ले जाने के लिए नोबेल पुरस्कार

रसायनशास्त्र के क्षेत्र में वर्ष 2013 का नोबेल पुरस्कार अमेरिका के तीन वैज्ञानिकों स्ट्रासबर्ग विश्वविद्यालय, फ्रांस और हार्वर्ड विश्वविद्यालय, अमेरिका के मार्टिन कारप्लस, स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसन के माइकल लेविट और सर्दन कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के एरिह वारसेल को शक्तिशाली कंप्यूटर मॉडल विकसित करने के लिए दिया गया है. जिसका उपयोग लोग जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं को समझने और नवीन औषधियों के सृजन के लिए कर सकेंगे. इन वैज्ञानिकों द्वारा रासायनिक प्रक्रिया को समझने के लिए विकसित मल्टीस्केल मॉडल को रसायनशास्त्र के क्षेत्र में बेहद महत्वपूर्ण माना जा रहा है. इनके द्वारा विकसित क़ंप्यूटर सिम्युलेशन से रासायनिक प्रक्रिया को समझना और उसका पूर्वानुमान लगाना आसान हो गया है. इन मॉडलों के फलस्वरूप जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं का पूर्वानुमान लगाने के लिए शक्तिशाली कंप्यूटर प्रोग्रामों का प्रयोग किया जा सकता है. पुरस्कारों की घोषणा करते हुए अकादमी के सचिव ने कहा कि इस वर्ष के पुरस्कार रासायनिक प्रयोगों को साइबर स्पेस में ले जाने के लिए है. इससे फार्मास्यूटिकल इंजीनियरों और मैनुफैक्चरिंग केमिस्टों को समस्याओं के समाधान का त्वरित तरीका मिल गया है. ये प्रक्रियाएं मिलीसेकेंड के छोटे हिस्से में हो सकती है. नए कंप्यूटर प्रोग्राम की सहायता से वैज्ञानिक तीव्र गति से होने वाली प्रतिक्रियाओं के मॉडेल बना सकेंगे और धीमी गति से उनका अध्ययन कर सकेंगे. जब कंप्युटर उपलब्ध नहीं थे तब

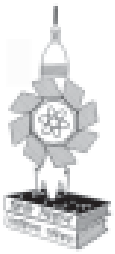

रसायनज्ञ अणुओं की क्रियाविधि समझने के लिए प्लास्टिक की गेंदों और छड़ों से मॉडल बनाते थे. इसका सबसे अच्छा उदाहरण है जेम्स वाटसन और फ्रांसिस क्रिक द्वारा बनाया गया डीएनए का मॉडल. अब शक्तिशाली प्रोग्रामों के जरिए मॉडलिंग कंप्युटर पर होती है.

किसी रासायनिक प्रतिक्रिया की बिल्कुल सही यांत्रिकी को प्रयोगशाला में देख पाना बहुत कठिन होता है. क्योंकि पारंपारिक तरीके में कदम दर कदम काम करने का प्रयास किया जाता है. इन तीनों वैज्ञानिकों का योगदान अपने मॉडल में पारंपारिक भौतिकी को क्वांटम भौतिकी के साथ मिलाने में भी है. पहले जब वैज्ञानिक जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं को कंप्युटर पर सिमुलेट करना चाहते थे तो उन्हें पारंपारिक न्यूटोनियन भौतिकी जो कि बहुत सरल है या क्वांटम भौतिकी जो कही अधिक जटिल है किंतु परिशुद्ध है (क्योंकि यह सबएटॉमिक स्तर पर काम करती है) पर आधारित सॉफ्टवेयर में से एक को चुनना पड़ता था. लेकिन इन वैज्ञानिकों द्वारा विकसित मॉडल ने इन दोनों के बीच का रास्ता खोल दिया है. यह गणना के परमुटेशन की संख्या को बढ़ा देता है हालांकि संगणना के लिए कंप्यूटर को बहुत शक्ति की आवश्यकता होती है.

आज कंप्युटेशनल रसायन अनेक औद्योगिक प्रक्रियाओं का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है. जैसे कि नवीन पदार्थों का अभिकल्पन, सौर सेलों का अभिकल्पन या कारों में प्रयोग किए जानेवाले उत्प्रेरकों का विकास. पौधों द्वारा सूर्य के प्रकाश को अवशोषित कर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा ऑक्सीजन बनाने की प्रक्रिया को देखने के लिए भी अब कंप्युटर प्रोग्राम का उपयोग किया जा सकता है. ऐसी जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं के कंप्युटरीकरण की क्षमता से एक दिन संपूर्ण जीव को आण्विक स्तर पर सिमुलेट करना शायद संभव हो जाएगा.

इन विधियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनका प्रयोग सभी प्रकार के रसायनों के अध्ययन के लिए किया जा सकता है - जीवन के अणु से लेकर औद्योगिक रासायनिक प्रक्रियाओं तक. दूसरे शब्दों में इन तरीकों की सबसे बड़ी शक्ति उनका सार्वत्रिक होना है. साथ ही इन प्रोग्रामों द्वारा ज्ञात परिणामों ने प्रयोगशाला परीक्षणों की आवश्यकता को लगभग खत्म कर दिया है. उदाहरण के लिए किसी नई औषधि के किसी जीव पर परीक्षण की जरूरत नहीं होती.

हिग्स बोसान पार्टिकल ने दिलाया भौतिकी का नोबेल पुरस्कार

हिग्स पार्टिकल की खोज के लिए ब्रिटेन के वैज्ञानिक पीटर हिग्स एवं बेल्जियम के फ्रांकोइस एंगलर्ट को भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार देने की घोषणा की गई है, इस सिद्धांत को उन्होंने लगभग 50 वर्ष पूर्व प्रतिपादित किया था और गत वर्ष उसे सत्यापित किया गया. वास्तव में हिग्स और एंगलर्ट इस पहेली का हल ढूंढ़ने का प्रयास कर रहे थे कि बिग बेंग के बाद पदार्थ कैसे बना? हालांकि इसकी बुनियाद भारतीय वैज्ञानिक सत्येंद्र नाथ बोस ने रखी थी. नोबेल पुरस्कार केवल जीवित व्यक्तियों को दिया जाता है और बोस आज जीवित नहीं है. स्मरण रहे, इससे पहले भी बोस की थ्योरी पर आगे काम करने वाले तीन वैज्ञानिकों को नोबेल पुरस्कार मिल चुके हैं.

भारतीय वैज्ञानिक सत्येंद्र नाथ बोस ने 1924 में कणों के व्यवहार को समझने के लिए एक गणितीय मॉडल प्रस्तुत किया था. उन्हें यह अनुभव हुआ कि कणों के व्यवहार के विश्लेषण के लिए अब तक जो सांख्यिकी तरीके प्रस्तुत किए गए है, वे पर्याप्त नहीं है. उन्होंने क्वांटम स्टैटिस्टिक्स पर ढाका में एक शोध पत्र लिखा और एक ब्रिटिश शोध पत्रिका में भेजा. लेकिन वह प्रकाशित नहीं हुआ. बोस ने इसके बाद उसी शोध पत्र को अलबर्ट आइंस्टीन के पास भेजा. आइंस्टीन ने न सिर्फ इसके महत्व को समझा बल्कि इसका जर्मनी में अनुवाद करके इसे जर्मनी की एक प्रसिद्ध शोध पत्रिका में प्रकाशित कराया. यह शोध पत्र बोस आइंस्टीन स्टैटिस्टिक्स के नाम से प्रसिद्ध है. बाद में वैज्ञानिकों ने इस इस प्रकार के कणों का नाम बोसोन रखा.

हिग्स एवं एंगलर्ट की जोड़ी ने आगे शोध करते हुए 1964 में इन कण पर एक थ्योरी प्रस्तुत की. उन्हें बोसोन कण की सैद्धांतिक खोज का श्रेय जाता है. लेकिन तब तक इस कण को प्रयोगशाला में नहीं देखा गया था. बाद में यूरोपियन ऑर्गेनाइजेशन फॉर न्यूक्लियर रिसर्च में लार्ज हैड्रॉन कोलाइडर में लंबे प्रयोग के बाद बोसोन कण की मौजूदगी की पुष्टि हुई.

हिग्स और एंगलर्ट के सिद्धांत यह बताते हैं कि पदार्थ को द्रव्यमान कहां से मिलता है. ब्रह्मांड अदृश्य हिग्स बोसोन से भरा हुआ है. परमाणु और परमाणुओं के टुकड़ें इधर उधर घूमते हुए परस्पर क्रिया करते हैं और हिग्स बोसोनों को आकर्षित करते हैं जो उनके चारों ओर अनगिनत संख्याओं मे जमा हो जाते हैं. कुछ कण हिग्स बोसोनों के बड़े समूहों को आकर्षित करते हैं और जो कण जितने अधिक बोसान समूहों को आकर्षित करता है, उसका द्रव्यमान उतना ही अधिक हो जाता है. इस व्याख्या ने वैज्ञानिकों को सभी पदार्थों की प्रकृति को समझने में सहायता की. लेकिन कणों के अस्तित्व को सिद्ध करने में वैज्ञानिकों को कई दशक लग

चिकित्सा विज्ञान में नोबेल पुरस्कार विजेता, (बाएं से) जेम्स रोथमैन, रैटी शेकमैन एवं थॉमस स्यूडॉफ

रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार विजेता (बाएं से) मार्टिन कारप्लस, माइकल लेविट एवं एरिह वारशेल

भौतिक विज्ञान में नोबेल पुरस्कार विजेता (बाएं से) पीटर हिग्स एवं फ्रांकोइस एंगलर्ट

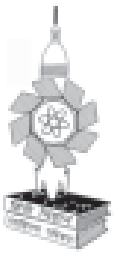

गए. यह सिद्धांत कण भौतिकी के स्टैंडर्ड मॉडल का आधार है जो यह बताता है कि संसार की रचना कैसे हुई. वैज्ञानिकों का मानना है कि कणों की श्रेणी में हिग्स बोसोन ही वे पहले कण है जिन्होंने ब्रह्मांड को आकार देने में मुख्य भूमिका निभाई. इसका एक अर्थ यह भी है कि इससे डार्क एनर्जी और डार्क मैटर की प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने का रास्ता भी मिल सकता है.

पिछले वर्ष जब इस पार्टिकल की खोज हुई तो मीडिया में पीटर हिग्स को नोबेल पुरस्कार देने की जोरदार मांग उठी लेकिन बोस के योगदान को किसी ने याद नहीं किया. हालांकि वैज्ञानिकों का एक वर्ग यहां तक कहता है कि हिग्स बोसोन पार्टिकल में बोसोन का नाम पहले आना चाहिए था क्योंकि शुरूआत बोस ने की थी. खुद सर्न के महानिदेशक रोल्फ डी हेयूर ने इस पार्टिकल की खोज में भारतीय वैज्ञानिक सत्येंद्र नाथ बोस के योगदान को न सिर्फ स्वीकार किया बल्कि यहां तक कहा कि वे नोबेल पुरस्कार पाने के हकदार थे.

इसमें कोई दो राय नहीं कि सभी नोबेल सम्मान किसी न किसी रूप में इंसानियत पर प्रभाव डालते है इसलिए वैज्ञानिकों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे अपनी खोजों का इंसानियत की भलाई के लिए इस्तेमाल करें.

डॉ.विनीता सिंघल,
सहसंपादक
सीएसआईआर-निस्केयर डॉ के एस कृष्णन मार्ग,
पूसा कैम्पस, नई दिल्ली - 110012
email - vineeta_niscom@yahoo.com

2 चल दूरभाष

किसी व्यक्ति के संदेश को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाने की प्रणाली चल दूरभाष द्वारा शुरु हुई. इसमें जस का तस संदेश प्राप्त कर्ता के पास पहुंचता था. इस प्रणाली को एनालोग प्रणाली कहा गया. पर इसमें जिससे संपर्क किया जाता था वही संदेश भेज सकता था या प्राप्त कर सकता था. इसे जी या 0 जी प्रणाली कहा गया. एक ही मोबाइल से कई लोगों के संदेश प्राप्त करने के लिए अंकीय (डिजीटल) प्रणाली शुरू हुई जिसमें भेजने वाले संदेश को 0 और 1 में बदल कर प्रसारित किया जाता है और प्राप्तकर्ता के मोबाइल में इसको फिरसे जस का तस संदेश में बदल दिया जाता है. इसे 1जी प्रणाली कहा गया. इस प्रणाली में केवल एक व्यक्ति के संदेश का दूसरे किसी एक ही व्यक्ति के साथ आदान प्रदान होता था. फिर 2जी प्रणाली आई, इस में कांफ्रेंस इत्यादि द्वारा कई लोगों के वार्तालाप को सुना जा सकने लगा. पर उनके चित्र को इसमें नहीं देखा जा सकता था. उसके बाद 3जी प्रणाली आई, इस में चित्र भी देखे जा सके. किन्तु कि पहले केवल एक ही तरंग लंबाई या आवृत्ति से संचारण संभव था. हम जैसे जैसे आगे बढ़े उपलब्ध आवृत्ति पट्ट की सीमा बढ़ती गई जिससे चित्र और संदेश के अतिरिक्त अन्य कई सुविधाएं भी उपलब्ध हो सकीं.

विश्व में जन-जन को जोड़ने वाली अधुनातम प्रणाली है मोबाइल. इसको सेलुलर फोन, सेल फोन या हैंड फोन के नाम से भी जाना जाता है. आज भारत और पृथ्वी के करोड़ों लोग सेलुलर फोन के जरिए कहीं से भी पृथ्वी के किसी स्थान पर बात कर सकते हैं और किसी-किसी उपकरण में तो उस व्यक्ति का चित्र और कांफ्रेंस जैसी चलित गतिविधियां भी हम देख सकते हैं. संवाद के अतिरिक्त इस उपकरण में अनेक सेवाओं और उपसाधनों का प्रावधान है. किन्तु आज जिस रूप में यह उपकरण उपलब्ध है और जितनी सेवाएं प्रदान कर रहा है प्रारंभ में यह ऐसा नहीं था (जैसा कि सभी वैज्ञानिक खोजों और उपकरणों के साथ अक्सर होता है.)

पहली चल दूरभाष कॉल सेंट लूइस, मिसूरी में जून 17,1946 को बेल सिस्टम की मोबाइल टेलीफोन सर्विस के माध्यम से शुरु की गई थी. एटी एण्ड टी के बेल लेबोटेरीज के इंजीनियरों द्वारा मोबाइल फोन बेस स्टेशनों के लिए सैल का आविष्कार 1947 में किया गया था. 1960 के दशक में बेल लेबोरेटरी ने इसे आगे विकसित किया.

द्वितीय विश्व युद्ध और 1950 के दशक में सिविल सेवाओं के दौरान सेना में रेडियो टेलीफोनी लिंक का उपयोग होता था, जबकि हाथ के सेलुलर रेडियो उपकरण 1976 के बाद से उपलब्ध हैं. 1945 में मोबाइल टेलीफोन की प्रारंभिक पीड़ी (0 G) शुरु की गई थी. उस समय की अन्य तकनीकों की तरह, इसमें एकल, शक्तिशाली बेस स्टेशन शामिल था, जो एक व्यापक क्षेत्र को संभालता (कवर करता) था, और प्रत्येक टेलीफोन पर प्रभावी रूप से एक चैनल के उपयोग से पूरे क्षेत्र पर एकाधिकार करता था.

1956 में विश्व की पहली आंशिक स्वचालित कार फोन प्रणाली (चल दूरभाष प्रणाली) स्वीडन में शुरु की गई. यह एमटीए (मोबाइल टेलीफोन प्रणाली) निर्वात आधारित वाल्व द्वारा प्रसारण और संयोजन करती थी और इसका वजन 40 किलोग्राम था. 1962 में अधिक आधुनिक संस्करणवाली मोबाइल प्रणाली बी (एमटीबी) नाम से प्रारंभ हुई. इसमें एक पुश बटन टेलीफोन था जिसमें टेलीफोन की

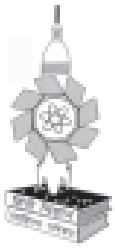

कार्यप्रणाली क्षमता और विश्वसनीयता को बढ़ाने के साथ वजन घटाने के लिए ट्रांजिस्टर का प्रयोग किया गया था. जिससे 1971 में यह उपकरण 10 किलोग्राम वजन का रह गया. ये उपस्कर कार में स्थापित किए जाते थे. मार्टिन लूथर और मोटोरोला को व्यापक रूप से घुमन्तु व्यक्तियों द्वारा उठा सकने योग्य पहला व्यावहारिक मोबाइल फोन का आविष्कारक माना जाता है.

1979 में, एनटीटी, जापान द्वारा प्रारंभ में टोकियो शहर में पहला वाणिज्य सेलुलर नेटवर्क शुरु किया गया था. जबकि पूरी तरह से स्वचालित नेटवर्क पहली बार 1980 के दशक में (1G पीढ़ी) शुरु किया गया था. 1981 में नॉर्डिक मोबाइल टेलीफोन (NMT) प्रणाली डेनमार्क, फिनलैंड, नार्वे और स्वीडन में शुरु हुई थी. एनएमटी पहला मोबाइल फोन नेटवर्क था, जिसके माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बातचीत हो सकती थी.

1984 में, बेल लेबोरेटरीज ने आधुनिक व्यावसायिक सेलुलर प्रौद्योगिकी को विकसित किया जिसने एकाधिक केंद्र नियंत्रित बेस स्टेशनों (सेल साइट) को नियोजित किया. सामान्यतया एक सेलुलर प्रणाली में एक बेस स्टेशन (सेल साइट) और एक टर्मिनल (फोन) के बीच सिग्नल की तीव्रता इतनी प्रबल होना चाहिए कि वह इन दोनों के बीच संचरित हो सके, ताकि विभिन्न सेलों में बातचीत अलग करने के लिए उसे एक साथ इस्तेमाल किया जा सके. इस प्रणाली में बेस स्टेशनों और टेलीफोन दोनों की चर संचरण शक्ति शामिल हैं (बेस स्टेशनों द्वारा नियंत्रित), जिसने रेंज के विस्तार और सेल के आकार को छोटा करना संभव बनाया. इस प्रणाली की विस्तार क्षमता ने नई सेलों का जुड़ना मुमकिन बनाया. परिणाम स्वरूप अधिक छोटी सेल और इस प्रकार अधिक मात्रा में संचारण क्षमता को संभव बनाया.

डिजिटल 2जी (दूसरी पीढ़ी) सेलुलर प्रौद्योगिकी पर पहला आधुनिक नेटवर्क प्रौद्योगिकी 1991 में फिनलैंड में रेडियोलिंजा द्वारा जीएसएम मानक पर शुरु किया गया, जिसने मोबाइल दूरसंचार में प्रतियोगिता की शुरुआत को चिन्हित किया, और अवलंबी दूरसंचार फिनलैंड (अब यह टेलियासोनेस का हिस्सा है) को चुनौती दी.

2जी के शुरु होने के बाद पूर्ववर्ती 1जी चल दूरभाष की अपेक्षा इस पद्धति मे बहुत बदलाव आया. 1जी नेटवर्क पर सिग्नल एनालोग प्रकार का है पर 2जी नेटवर्क पर अंकीय है. शेष दूरभाष का रेडियो टावर से संपर्क करने के लिए दोनों ही प्रणालियां अंकीय सिग्नल का प्रयोग करती हैं.

नई तकनीक 2.5जी, और 3 जी ने 2 जी को भी पीछे छोड़ दिया. 10 साल बाद 2001 में जापान में हर जगह 3 जी की शुरुआत हुई. इसके बाद 3.5 जी, 3 जी + , या टर्बो 3जी के द्वारा उच्चतर गति से आंकड़ों को भेजना संभव हो सका. मार्च 2011 में दक्षिण कोरिया में 4जी बिलियन के द्वारा उच्च गति के वायरलेस ब्रोडबैन्ड नेटवर्क का विस्तार किया गया जो वहां की 85 % जनसंख्या को सम्मिलित करता है. यह विश्व का सबसे बड़ा ब्रोडबैण्ड नेटवर्क है जो जापान में 78 % और अमेरिका में 36 % ग्राहकों को शामिल करता है. 4जी चल दूरभाष मोटोरोला, एचटीसी और सेमसंग द्वारा निकाले गए. 4जी तकनीकी डाटा ट्रांसफर की गति को मेगाबाइट (10^6 या मेबा) से सीधे गीगाबाइट (10^9) के दौर में ले जाएगी. लगभग 250 मेबा की फाइल इसके जरिए एक सेकंड में यहां से वहां पहुंच सकती है. इसके आने से मोबाइल फोन पर ग्लोबल रोमिंग शुरु हो जाएगी. यह आई पी (इंटरनेट प्रोटोकोल) आधारित व्यवस्था है जो सुपर हाई स्पीड इंटरनेट संपर्क को सुनिश्चित करेगी और दुनिया के अलग-अलग हिस्सें में मौजूद लोगों के बीच उच्च स्तर के दृश्य वार्तालाप संचारण को आसान बना देंगी.

मोबाइल फोन पर प्रकट हुई पहली डाटा संचारण सेवाएं 1996 में व्यक्ति से व्यक्ति को लिखित संदेश के रूप में शुरु हुई. सन 2001 में 3जी (तीसरी पीढ़ी) की पहली वाणिज्यिक शुरुआत जापान में एनटीटी डोकोमो के द्वारा डब्ल्यूसीसीडीएमए (वाइड बैंड कोड डिवीजन मल्टीपिल एसेसे अर्थात विविध रेडियो संचार तकनीक के द्वारा विविध कोडों तक पहुंच) मानक में की गई थी.

1990 दशक के शुरु में मोटोरोला माइक्रो टीएसी की शुरुआत के बाद, सभी मोबाइल फोन जैकेट सामान्य जेब में ले जाने के लिए बड़े थे, इसलिए वे आम तौर पर वाहनों में कार फोन के रूप में स्थापित किए गए. डिजिटल घटकों के लघुरूप और अधिक परिष्कृत बैटरी के विकास के साथ, मोबाइल फोन छोटे और हलके होते गए और इन्हें हैंड सेट के नाम से भी जाना गया.

मोबाइल फोन की कई श्रेणियां हैं, मूलभूत फोन से लेकर लाक्षणिक सेवा फोन तक जैसे संगीत फोन और कैमरा फोन और स्मार्टफोन तक जैसे नोकिया 9000 कम्युनिकेटर जो 1996 में आया, जिसमें उस समय के मोबाइल फोन के मुकाबले में पीडीए (पर्सनल डिजिटल असिस्टेंट अर्थात निजी आंकिक सहायक) कार्यशीलता को शामिल किया गया था. समय के साथ लघुरूपकरण तथा प्रसंस्कारित (सुधरे हुए) माइक्रोचिप की शक्ति में वृद्धि से फोन में अधिक सुविधाएं उपलब्ध हो गई हैं.

मोबाइल फोन (या मोबाइल सेल फोन, सेलुलर फोन, सेल, वायरलेस फोन, सेलुलर टेलीफोन) वस्तुतः एक लंबी

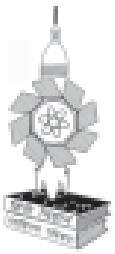

दूरी का इलेक्ट्रोनिक उपकरण है जिसे विशेष बेस स्टेशनों के एक नेटवर्क के आधार पर मोबाइल आवाज या डेटा संचार के लिए उपयोग करते हैं इन्हें सेल साइटों के रूप में जाना जाता है. मोबाइल फोन, टेलीफोन, के मानक आवाज कार्य के अलावा वर्तमान मोबाइल फोन कई अतिरिक्त सेवाओं और सुविधाओं को भी उपलब्ध कराते हैं. जैसे कि लिखित संदेश के लिए एसएमएस, ई-मेल, इंटरनेट के उपयोग के लिए पैकेट स्विचिंग (अंकीय नेटवर्क संचार विधि, जो विषयवस्तु, की सूचना या संरचना (डाटा) को संवाहित करती है, पैकेट स्विचिंग कहलाती है). गेमिंग, ब्लूटूथ (इसके माध्यम से एक मोबाइल से दूसरे मोबाइल या लेपटॉप में आंकड़े, संदेश, चित्र आदि किसी भी प्रकार का डाटा स्थांनातरित किया जा सकता है), इन्फ्रा रेड (प्रकाश की लाल तरंगों से अधिक तरंग लंबाई वाली किरणें), वीडियो रिकार्डर के साथ कैमरे और तस्वीरें और वीडियो भेजने और प्राप्त करने के लिए एमएमएस, एमपी3 प्लेयर, रेडियो और जीपीएस (ग्लोबल पॉजीशनिंग सेटेलाइट अर्थात वैश्विक स्थिति उपग्रह, इसमें उपग्रह के माध्यम से विश्व के किसी भी कोने में संपर्क किया जा सकता है.), अधिकांश वर्तमान मोबाइल फोन, बेस स्टेशनों (सेल साइटों) के एक सेलुलर नेटवर्क से जुड़ते हैं, जो बदले में सार्वजनिक टेलीफोन स्वचालित नेटवर्क (पीएसटीएन) से जुड़ता है. इन सेवाओं के उपलब्ध होने के बाद ऑडियो कॉन्फ्रेंसिंग (सामुहिक दृश्य श्रव्य वार्तालाप) करना संभव हो गया है. अतः कम ही समय में दूरस्थ स्थित व्यापारिक क्षेत्र में लाखों के वारे न्यारे हो जाते हैं.

वस्तुतः अंकीय उपकरण केवल शून्य और एक के उपयोग से संकेतों का संचारण करता है. जो श्रव्य और दृश्य के मूल संकेत के सन्निकट होता है. जब कि एनालोग (जस का तस) डाटा वास्तव में अधिक सही होता है, फिर भी एनालोग डाटा की अपेक्षा अंकीय डाटा आसानी से संचारित किया जा सकता है.

हैंडसेट और टावर के बीच अंकीय प्रणाली का प्रयोग करने पर प्रणाली की क्षमता दो प्रकार से बढ़ती हैं. अंकीय ध्वनि को एनालोग ध्वनि की अपेक्षा अधिक प्रभावी तरीके से छोटा करके बहुविध रूप से लाया जा सकता है. अंकीय प्रणाली में हैंडसेट से कम रेडियो पावर निकलती है. इससे सेल या बैटरियों (रासायनिक क्रिया द्वारा विद्युत धारा उत्पन्न करने वाला उपकरण) के आकार और भी छोटे हो जाते हैं. इसलिए उतने ही स्थान पर अधिक सेलों को स्थापित किया जा सकता है.

सभी सेल फोन से संबद्ध विशेष कोड होते हैं. फोन की पहचान, फोन धारक की पहचान और सेवा प्रदाता की पहचान के लिए इन कोडों का उपयोग किया जाता है. इलेक्ट्रॉनिक क्रमांक संख्या (ईएसएन) 32 बाइट की एक अनोखी संख्या है जिसे उपकरण बनाते समय फोन में डाला जाता है. मोबाइल पहचान एमआईएन दस अंकों की एक संख्या है जो आपके फोन की पहचान संख्या होती है. प्रणाली पहचान कोड एसआईडी पांच अंकों की अनोखी संख्या है जिसे एफसीसी के द्वारा प्रत्येक धारक को दी जाती है. ईएसएन फोन का स्थाई भाग होता है जब कि एमआईएन और एसआईडी की तब प्रोग्रामिंग की जाती है जब आप फोन खरीदकर सक्रिय करते हैं अर्थात प्रयोग करना शुरु करते हैं. एफसीसी फेडरल कम्यूनिकेशन कमीशन अमेरिका और कनाडा की संस्था है. भारत में आईएफएएसटी कार्पोरेशन प्राइवेट लिमिटेड यह कोड प्रदान करती है.

एमआईएन-10 अंको का नंबर, जो हमारे फोन और फोन धारक की पहचान है, सिम कार्ड कहलाता है. जीएसएम मोबाइल फोन सक्रिय करने के लिए सिम कार्ड नाम की एक छोटी माइक्रोचिप की आवश्यकता होती है. सिम कार्ड छोटे डाक टिकट के आधार की एक चिप होती है जिसे मोबाइल टेलीफोन उपकरण के पृष्ठ भाग में बैटरी के नीचे लगाया जाता है.

आज करोड़ों की संख्या में मोबाइल धारक हैं.

इस तकनीक के जहां इतने लाभ हैं वहीं इससे कुछ हानियां भी हैं और जिससे इनका दुरुपयोग भी हो रहा है. मोबाइल फोन के टॉवर यदि निवासी क्षेत्रों में लगाए जाते हैं, तो इनसे निकलने वाला विकिरण उस क्षेत्र के निवासियों के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है. यदि इस उपकरण को सीने के ऊपर की जेब में रखा जाता है तो इससे निकलने वाला विकिरण हृदय पर प्रभाव डालता है. इनका प्रयोग करके आतंकवादी अपने आतंक का विस्तार कर रहे हैं. हां इनके माध्यम से कभी कभी ये दुष्ट लोग पकड़ में भी आ जाते हैं. इसके अतिरिक्त अपराधी प्रवृत्ति के व्यक्ति अवांछित डाटा, जैसे कि किसी की अश्लील फोटों आदि लेकर उसे ब्लैकमेल करने की कोशिश कर सकते हैं. वैसे, देखा जाए तो दुनिया में जितनी भी तकनीकों का विस्तार हुआ है उनके सबके अपने-अपने उपयोग और दुरुपयोग हैं. यह तो मनुष्य की बुद्धि और विवेकशीलता पर ही निर्भर करेगा, कि वो दिये गये उपकरण को किस प्रकार से उपयोग में लायेगा.

डॉ. (श्रीमती) प्रेम भार्गव

(राष्ट्रीय अंध एसोसिएशन द्वारा देवनागरी ब्रेल में प्रकाशित पत्रिका की मानद संपादक)

एफ-6/1, सेक्टर-7 (मार्केट) वाशी, नवी मुंबई-400 703

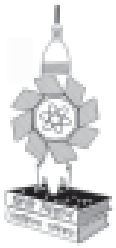

3. उत्तम स्वास्थ्य की अचूक दवा है संपूर्ण निद्रा

एक व्यक्ति को कितनी देर सोना चाहिए इस संबंध में कोई निश्चित नियम निर्धारित करना कठिन है. भिन्न भिन्न उम्र के व्यक्तियों के लिए नींद की मात्रा उनकी प्रकृति आदि के अनुसार ही भिन्न भिन्न होती है. एक नवजात शिशु पूरे 24 घंटे में लगभग 22 घंटे सोता है. एक अथवा दो वर्ष के बालक को 15-16 घंटे की नींद अपेक्षित होती है. जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है उसकी नींद का समय भी कम होता जाता है. युवाओं को 8 घंटे की नींद पर्याप्त होती है.

नेपोलियन 4 घंटे की नींद में ही विश्वास रखता था. महर्षि दयानंद तो मात्र दो घंटे ही सोते थे. अतः किसी व्यक्ति की नींद को कोई निश्चित समय सीमा में नहीं बांधा जा सकता है. पूर्ण नींद की कसौटी यह है कि जब व्यक्ति सोकर उठे तो वह अपने आप को पूर्ण रूप से आनंदित, तरोताजा तथा तनाव रहित महसूस करे, उतनी ही नींद उस व्यक्ति के लिए आवश्यक है.

रात के प्रथम भाग में अधिक नींद आती है. अतः रात में 9 या 10 बजे तक अवश्य सो जाना चाहिए. किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि जल्दी सोना और जल्दी उठना व्यक्ति को स्वस्थ, बुद्धिमान और धनवान बनाता है. सोते समय कमरे में पूर्ण शांति और अंधकार होना चाहिए. वायु का आवागमन भी पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए. अच्छी नींद आने के लिए जरूरी है कि बिस्तर साफ-सुथरा व आरामदायक हो, कपड़े ढीले पहने हो, कमरे में तेज रोशनी न हो, हवा का उचित प्रबंध हो तथा कमरे में कोई शोर-गुल न हो. कई बार व्यक्ति के अस्वस्थ होने पर भी नींद नहीं आती है. अनिद्रा का एक प्रमुख कारण मानसिक परेशानी या तनाव भी है. कई बार नई जगह होने से भी नींद नहीं आती है. अच्छी नींद के लिए अन्य बातों के साथ साथ व्यायाम भी सहायक होता है. थोड़ी सी शारीरिक श्रम भी नींद लाने में काफी सहायक होती है.

सोने से पूर्व लघुशंका अवश्य कर लेनी चहिए. लघुशंका के पश्चात हाथ, पैर और मुख शीतल जल से धोकर स्वच्छ कर लेना चाहिए. ऐसा करने से दोष रहित व गहरी नींद आती है. बायीं अथवा दायीं करवट से सोने की विधि ही सर्वोत्तम है. थोड़ी बहुत देर पीठ के बल भी लेटा जा सकता है. परंतु पेट के बल तो भूलकर भी नहीं सोना चाहिए. सोते वक्त पैर के ऊपर पैर रखकर नहीं सोना चाहिए यह हानिप्रद होता है. यदि विशेष परिस्थितियों में रात में ज्यादा देर तक जागना भी पड़े तो अगले रोज दोपहर में थोड़ा विश्राम कर लेना चाहिए.

सोते समय सिर पूर्व या दक्षिण की ओर ही रहना चाहिए. पूर्व दिशा की ओर सिर करके सोना सर्वोत्तम माना जाता है. दक्षिण दिशा की ओर पैर करके नहीं सोना चाहिए. शाम का भोजन सोने से कम से कम तीन घंटे पूर्व कर लेना चाहिए. गर्मी के मौसम में यदि थोड़ी देर दोपहर में विश्राम कर लिया जाय तो कोई हानि नहीं है.

सोते समय इस ओर ध्यान देना आवश्यक है कि मनुष्य का मुंह खुला न रहे. मुंह ढककर जुर्राब पहनकर सोना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है. सोने से पहले एक गिलास गुन गुना दूध पीना अच्छा रहता है. सोने के कमरे में कभी भी धुम्रपान नहीं करना चाहिए. धुम्रपान करना सेहत के लिए काफी नुकसानदायक साबित होता है. रात भर पंखे के नीचे सोने से या जाड़े के दिनों में हीटर जलाये रखने से भी सेहत खराब होती है. शुद्ध हवा के लिए खिड़की रोशनदान आदि खुले रखने चाहिए.

सोने से पूर्व यदि उपर्युक्त सावधानियां बरते तो निश्चित ही अनिद्रा, तनाव या अवसाद जैसी बीमारियों का शिकार होने से बचा जा सकता है.

-अनिल कुमार
क्वार्टर नं.एफ-80, पोस्ट सिन्दरी,
जिला - धनबाद-828122

4 बदल रहा है प्लूटो का रंग-ढंग

प्लूटो एक बहुत ठंडा ग्रह हैं. इस बौने ग्रह की खोज क्लाइड जब्ल्यू हॉमबॉग द्वारा 18 फरवरी सन 1930 को की गई थी. इसका अधिकतम तापमान - 222^0C होता है. प्लूटो 247.7 वर्ष में सूर्य की परिक्रमा करता है. प्लूटो का एकमात्र उपग्रह सैरेट है. सैरेट चांद का आकार प्लूटो के आधे आकार जितना बड़ा है. प्लूटो पर वायुमंडल नहीं है.

सूर्य से प्लूटो तक प्रकाश पहुंचने में 32 घंटे का समय लगता है. कई वर्षों से प्लूटो को ग्रह माने जाने पर विवाद चलता रहा है. अंततः 25 अगस्त सन् 2006 को अंतर्राष्ट्रीय खगोल विज्ञान संघ की प्राग चेकोस्लोवाकिया में हुई बैठक ने ग्रह की परिभाषा निर्धारित की. उनके अनुसार ग्रह उस पिंड को कहा जाएगा.

1. जो सूर्य का चक्कर लगाता हो.

2. जिसमें इतना द्रव्यमान हो कि वह स्वयं के गुरूत्वाकर्षण के कारण गोल हो.

3. जिसका परिक्रमा पथ साफ हो.

4. जिसमें अन्य खगोलीय पिंड मौजूद न हो.

प्लूटो सूर्य का चक्कर अवश्य लगाता है, परंतु छोटा और कम द्रव्यमान होने के कारण पूर्णतः गोल नहीं है. दीर्घवृत्ताकार कक्षा में चक्कर लगाने के दौरान वह नेप्च्यून की कक्षा को काटते हुए भीतर चला जाता है. इसके अलावा अन्य ग्रह लगभग एक ही तल में सूर्य की परिक्रमा करते हैं, जबकि प्लूटो इनसे लगभग 17^0 का कोण बनाता है. इन सब कारणों से उसे ग्रहों की बिरादरी से बाहर निकाल दिया गया. सन् 2006 में नासा द्वारा लांच किया गया न्यू होराईजन्स प्लूटो पर भेजा जानेवाला प्रथम उपग्रह है. यह उपग्रह 14 जुलाई 2015 में प्लूटो पर पहुंचेगा.

बौने ग्रह 'प्लूटो' के मौसम और वायुमंडल में काफी बदलाव आ रहा है और उसका रंग पहले से अधिक लाल हो गया है. नासा द्वारा 'हब्बल' दूरबीन से ली गई तस्वीरों से पता चलता है, कि इसकी सतह में मौसम संबंधी बदलाव हो रहे हैं और इसकी चमक भी बदल रही है.

वैज्ञानिकों की इस ग्रह के अध्ययन में हमेशा से ही विशेष रूचि रही हैं. इसमें दिखे वर्तमान परिवर्तनों के बारे में नासा का कहना है, कि प्लूटो के रंग में यह नाटकीय बदलाव 2000-2002 के बीच आया है.

वैज्ञानिक अब 1994 में ली गई प्लूटो की तस्वीरों की तुलना 2002 और 2003 के तस्वीरों से करने जा रहे हैं ताकि वहां मौसम और वायुमंडल में आए बदलाव के बारे में ज्यादा सबूत मिल सके.

साउथ वेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट कोलोराडो के विज्ञानी मार्क बुआई का कहना है, कि तस्वीरों से खगोलशास्त्रियों को प्लूटो की पिछले तीन दशक की यात्रा को समझने में मदद मिली है. उनका कहना है, कि हब्बल से ली गई तस्वीरों की मदद से ही प्लूटो के मौसम में हो रहे बदलाव के बारे में पता चल सका. 1500 मील से कम व्यास वाला प्लूटो सौर मंडल के बाहरी किनारे पर स्थित हैं.

इस ग्रह के बारे में दिलचस्प बात यह है कि इसे वेनिटा बर्नी नाम की 11 साल की एक लड़की द्वारा प्लूटो नाम दिया गया था जिसकी खगोल विज्ञान में गहरी रूचि थी. वह ऑक्सफोर्ड इंग्लैण्ड की स्कूली छात्रा थी.

खोज के बाद लांवेल वेधशाला ने दुनिया भर के विज्ञान जिज्ञासुओं से इस ग्रह का नाम रखने के लिए विकल्प मांगे. एक हजार से अधिक विकल्प मिलने के बाद मिनर्वा क्रोनस और प्लूटो तीन नामों का चयन किया गया. इसके बाद नाम को अंतिम रूप प्रदान करने के लिए मतदान कराया गया जिसका नतीजा प्लूटो शब्द के पक्ष मे रहा और यह नाम सुझाने वाली लड़की वेनिटा को पांच पौंड का इनाम मिला.

1 मई 1930 को प्लूटो के रूप में इसके नामकरण की घोषणा की गई. चूकि यह ग्रह 18 फरवरी को खोजा गया था, इसीलिए इस दिन को प्लूटो दिवस के रूप में जाना जाता है.

-शुभम् देशमुख

द्वारा - *नरेंद्र देशमुख,*

बशीर कालोनी, छाल रोड, घरघोड़ा, जिला-रायगढ़, राज्य छत्तीसगढ़, पिनकोड - 496111

5 बदलते दौर में हमारी कृषि नीति

एक ओर कृषि नीति के सामने महंगाई व किसानों के कर्ज की ज्वलंत समस्याएं हैं, तो दूसरी तरफ जलवायु बदलाव के संकट से जूझना भी जरूरी है. वैसे तो पहले भी यह बार-बार अहसास हो रहा था कि न्याय, समता व पर्यावरण के हितों की रक्षा के लिए, खेती में टिकाऊ प्रगति के लिए कृषि नीति में बदलाव जरूरी हैं. अब जब जलवायु बदलाव के कुछ दुष्परिणाम नजर आने लगे हैं तो न्याय व पर्यावरण रक्षा से जुड़े ये सवाल महत्वपूर्ण बन गए हैं. सरकारी नीतियों का झुकाव सबसे कमजोर वर्गों व छोटे किसानों के पक्ष में होना चाहिए. यह झुकाव पर्यावरण रक्षा, आपदा बचाव व राहत कार्यों को बेहतर करने के प्रति भी होना चाहिए. नए खतरों व चुनौतियों का सामना करने के लिए सरकार को इस तरह का बदलाव अपने बजट वितरण में और प्रशासनिक प्राथमिकताओं में भी करना होगा.

सरकार को चाहिए कि वह बजट वितरण में बदलाव करके इसका ज्यादा हिस्सा कृषि व पर्यावरण रक्षा के लिए

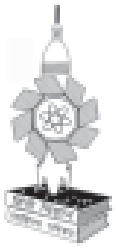

उपलब्ध कराए. सस्ती व टिकाऊ खेती के लिए सरकार की नीतियों में इस तरह का बदलाव बहुत जरूरी है. रासायनिक खाद व कीटनाशक पर दिए जाने वाले निरर्थक व हानिकारक सब्सिडी की बजाय अपने तमाम उपलब्ध वित्तीय, प्रशासनिक, वैज्ञानिक संसाधनों का उपयोग जैविक कृषि को बढ़ावा देने के लिए किया जाना चाहिए.

जैविक कृषि अपनाने वाले किसानों की मदद की जाए. भारत के गांवों को जैविक खेती के साथ कम खर्च की खेती व आत्मनिर्भरता की खेती से जोड़ना जरूरी है. जो खेती स्थानीय संसाधनों के बेहतर उपयोग पर आधारित है वही आत्मनिर्भर है, और सस्ती भी है.

यहां संदर्भ छोटे किसानों का है जिनके पास खर्च करने की क्षमता बहुत कम होती है. रासायनिक खाद व कीटनाशकों पर निर्भरता से किसानों पर कर्ज बढ़ा है. स्थानीय तौर पर उपलब्ध गोबर, फसल अवशेष, गोमूत्र, नीम आदि के बेहतर उपयोग व साथ ही जैव-विविधता व उचित फसल चक्रों को अपनाकर भूमि की प्राकृतिक उर्वरता को बचाए रखने व हानिकारक कीटों से निजात पाने का उद्देश्य प्राप्त करना चाहिए. जैविक कृषि के प्रसार को हमें अलगाव में नहीं देखना है, अपितु जल व नमी के संरक्षण, पेड़ों व चरागाहों की हरियाली और पशुधन की समृद्धि को इस तरह साथ-साथ बढ़ाना है, जिसमें जैविक कृषि के पनपने की अच्छी संभावनाएं बन सकें. इसके अलावा फसलों व उनकी किस्मों की विविधता व उचित फसल चक्र पर भी ध्यान दिया जाना जरूरी है. हरित क्रांति के नामपर मूलतः फसलों की वह किस्में फैलाई गई जो अधिक रासायनिक खाद और पानी के उपयोग के आधार पर उत्पादकता बढ़ाने की क्षमता रखती थी. इस कारण इन बीजों के आधार पर जैविक कृषि का विस्तार करने के प्रयास में एक विरोधाभास पैदा हुआ. हमें एक बार फिर से परंपरागत बीजों की विरासत की ओर लौटना होगा और इसके आधार पर जैविक खेती के माध्यम से बेहतर उत्पादकता हासिल करने का प्रयास करना होगा.

डा.आरएच रिछारिया जैसे शीर्ष वैज्ञानिकों के अनुसंधान से यह स्पष्ट हो गया है कि परंपरागत किस्मों में भी अनेक ऊंची उत्पादकता देनेवाली किस्में मौजूद हैं जो रासायनिक खाद व कीटनाशक दवा के उपयोग के बिना ऊंची उत्पादकता देने में सक्षम हैं. सरकार को भूमि सुधार के क्षेत्र में अपना ध्यान पूरी तरह भूमिहीनों को भूमि उपलब्ध करवाने व उन्हें सफल किसान बनाने पर केंद्रित करना चाहिए. इन भूमिहीनों के साथ उन्हें भी जोड़ देना चाहिए जो लगभग भूमिहीन हैं अथवा जिनके पास नाममात्र को ही भूमि है. इसके लिए वर्तमान सीलिंग कानूनों के अंतर्गत बड़े भूस्वामियों से भूमि प्राप्त की जा सकती है. भूदान कार्यक्रम के अंतर्गत प्राप्त भूमि जो ठीक से नहीं बंटी वह भी वितरित की जा सकती है. गांव की जमीन पर जो अवैध कब्जे हैं वे हटाए जा सकते हैं. शहरों में अनेक धनी परिवार है जिनका गांव की खेती-किसानों से कोई संबंध नहीं रहा और न ही वे भविष्य में खेती करेंगे. उनकी भूमि का एक बड़ा हिस्सा भी गांव के मेहनतकश भूमिहीनों को दिया जा सकता है. वन विभाग की बहुत सी जमीन खाली पड़ी है. यह वृक्ष खेती के लिए भूमिहीन परिवारों को दी जा सकती है. बंजर पड़ी भूमि को सरकार अपने प्रयास से खेती योग्य बना कर भूमिहीनों को दे सकती है. वाटरशेड परियोजनाओं को समता आधारित खेती से और भूमि सुधार से जोड़ना चाहिए ताकि गरीब व छोटे किसानों को इन परियोनजाओं का अधिक लाभ मिले. किसी स्थान की फसलें व फसल चक्र वहां उपलब्ध जल के अनुकूल होने चाहिए. नई व बड़ी परियोजनाओं से कुछ समय के लिए परहेज करके पहले से बनी परियोजनाओं पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए. नदियों को जोड़ने की परियोजनाओं से परहेज करना चाहिए. किसी बड़े उद्योग की बजाय कृषि व खाद्य उत्पादन के लिए जल उपलब्धता को प्राथमिकता मिलनी चाहिए. वायु व जल प्रदूषण, हानिकारक गैस आदि के खतरों से किसानों की रक्षा होनी चाहिए. सभी स्तरों पर खेती को कम खर्चीली बनाया जाए ताकि किसान कर्जग्रस्त होने से बच सकें. इसके बावजूद किसान को कर्ज की जरूरत पड़ ही जाए तो सरकार कम ब्याज पर व साधारण ब्याज दर पर कर्ज दे व मौसम प्रतिकूल होने पर ब्याज छोड़ देना चाहिए. बचत की आदत डालने व सूदखोरी से बचने के लिए स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहित करना चाहिए. किसानों को अपनी उपज पर बेहतर कीमत मिलनी चाहिए. खेती किसानी बहुत कुशलता का कार्य है इसलिए कीमत निर्धारण में किसान की कार्य कुशलता को स्वीकृति मिलनी चाहिए. किसान की जरूरतों को समझते हुए किसानों के परिवार के सदस्यों की संख्या को ध्यान में रखना होगा. टिकाऊ खेती को प्रोत्साहित करने के लिए व बिना रासायनिक खाद व कीटनाशक के उगाई गई फसल को स्वास्थ्य के लिए विशेष उपयोगी मानते हुए विशेष प्रोत्साहन व बेहतर कीमत की व्यवस्था होनी चाहिए.

-हेमलता पन्त

सोसाइटी ऑफ बायलोजिकल साइंसेज एण्ड रूरल डेवलपमेंट, 10/96 गोला बाजार, नई झूँसी, इलाहाबाद-211019, उ.प्र.

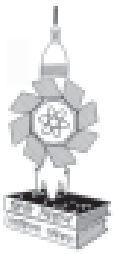

6 तंत्रिका विकृति (न्यूरोपैथी)

भारत में प्रत्येक दो में से एक व्यक्ति तंत्रिका विकृति (न्यूरोपैथी) से पीड़ित है. यह रोग तंत्रिका-कोशिकाओं में होने वाले परिवर्तनों के कारण होता है. ये परिवर्तन उम्र से संबंधित हैं. 'द टेलीग्राफ' में प्रकाशित डॉ. गीता मथाई की एक रिपोर्ट के अनुसार यदि रोगी को डाइबिटीज या उच्च रक्तचाप है या उसका लिपिड प्रोफाइल सामान्य नहीं है तो कोशिकाओं का अपक्षयन बड़ी तेजी से होता है. न्यूरोपैथी तीनों तंत्रिका तंत्रों अर्थात केंद्रीय (सेंट्रल), परिधीय (पेरीफेरल) और ऑटोनॉमस तंत्रिका तंत्रों को प्रभावित कर सकता है.

केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के रोग से प्रभावित होने पर स्मृति एवं संज्ञान कौशल में कमी आ जाती है. भुलक्कड़पन एक जीवन शैली बन जाती है. परिधीय न्यूरोपैथी से तकलीफदेह अक्षमताएं उभरने लगती हैं.

प्रभावित तंत्रिकाएं कुछ लोगों में शुरू में हाथ पैरों के दूरस्थ सिरों में रोग के लक्षण पैदा करती हैं. इससे पैरीस्थिसिया (झुनझुनी, जलन या सुन्न होने का अनुभव) एवं हाइपरएल्जीसिया (असामान्य रूप से तेज दर्द के अनुभव से सामान्य उद्दीपन तक) हो सकते हैं. ये लक्षण रात में अधिक पीड़ादायक हो जाते हैं और नींद में व्यवधान पैदा करते हैं.

कुछ अन्य लोगों में इन प्रभावित तंत्रिकाओं से दर्द की संवेदना ही खत्म होने लगती हैं. शरीर में चोट का पता ही नहीं चलता. किसी भी प्रकार का दर्द नहीं होने से संक्रमण बढ़ता जाता है और इसकी ओर ध्यान नहीं जाता. इससे उपचार में देरी होती है. अल्सर भी क्रॉनिक रूप ले लेते हैं.

इससे मांसपेशियों की आपूर्ति तंत्रिकाएं भी प्रभावित हो सकती हैं, जो कमजोरी और अपक्षय का कारण बनती हैं. मांसपेशियां सिकुड़ जाती हैं, जिससे हैमर टोज (पैर की अंगुलियों का नीचे की ओर मुड़ना) या ड्रॉप फुट (पैर की अंगुलियों व टखनों को मोड़ने में कठिनाई) हो जाती है. कमजोर मांसपेशियां जोड़ों को उनके स्थान पर नहीं संभाल पाती हैं, जिससे स्प्रेन और फ्रैक्चर होते हैं.

अस्पष्ट लक्षण

ऑटोनॉमस न्यूरोपैथी के लक्षण बहुत स्पष्ट नहीं होते हैं. इसके रोगी चक्कर आने, असंतुलन और बार-बार गिरने-पड़ने, बेहोशी, मितली, पेट दर्द और सूजन, गैस व यौन शिथिलता जैसे असंबंधित लक्षणों की शिकायत करते हैं. इन लक्षणों से रोग का ठीक-ठाक मूल्यांकन कर पाना या रोग की पुष्टि कर पाना कठिन हो जाता है. ऐसे रोगियों के हृदय में पूर्त ऑटोनॉमस तंत्रिकाओं में खराबी आने से उनकी अचानक मृत्यु भी हो सकती है.

मेटाबॉलिक सिंड्रोम

मेटाबॉलिक सिंड्रोम (उपापचयी संलक्षण) वाले व्यक्तियों में न्यूरोपैथी की संभावना अधिक होती है. फास्टिंग ग्लूकोज के बढ़े हुए स्तर, बढ़े हुए ट्राइग्लीसराइड्स, उच्च घनत्व के लिपोप्रोटीन-सी में कमी, मोटापा और उच्च रक्तचाप होने से न्यूरोपैथी का पता चलता है. उपर्युक्त लक्षणों में कोई तीन लक्षण मौजूद होने पर भी न्यूरोपैथी होने की संभावना होती है.

जिन व्यक्तियों को परिधीय न्यूरोपैथी होती है, उनमें से 30 प्रतिशत व्यक्ति डाइबिटीज से ग्रस्त होते हैं. इनमें से 20 प्रतिशत अपने बढ़े हुए रक्त-शर्करा स्तर से अनभिज्ञ रहते हैं. न्यूरोपैथी के मूल्यांकन के लिए किए जाने वाले रक्त परीक्षणों के बाद ही इसका पता चल पाता है.

अन्य कारण

धूम्रपान अथवा किसी भी रूप में तंबाकू के प्रयोग से भी न्यूरोपैथी का खतरा होता है. तंबाकू के कैंसरकारी रसायन रक्त-धारा में प्रवेश करते हैं एवं मस्तिष्क तथा तंत्रिकाओं की लाइनिंग को प्रभावित करते हैं.

मदिरा का सेवन भी तंत्रिकाओं पर सीधे विष की तरह कार्य करता है. यह 'बी' ग्रुप के विटामिनों के अवशोषण में भी बाधा पहुंचाता है. इसीलिए न्यूरोपैथी के इलाज के लिए मद्यपान रोकना जरूरी होता है.

आंत के रोग जो अवशोषण में बाधा पहुंचाते हैं, उनसे भी विटामिनों में कमी आती है और फिर इससे न्यूरोपैथी की समस्या आती है. आंतों के हिस्सों को निकालने के लिए की गई सर्जरी से भी ऐसा हो सकता है.

उपचार

रक्त-शर्करा, वजन, उच्च रक्तचाप को नियंत्रित रखने तथा लिपिड प्रोफाइल को सामान्य रखने से परिधीय न्यूरोपैथी के लक्षण कम हो जाते हैं. आरंभिक अवस्था में तंत्रिकाओं को पहुंची क्षति को ठीक किया जा सकता है. किंतु यदि न्यूरोपैथी हो जाए तो उपचार का असर असंतोषप्रद होता है.

उपचार के लिए कई सहायक दवाएं आजमाई जाती हैं. इसके अंतग्रत विटामिनों, आयरन, जिंक, कैल्शियम, अलफा लिपोइक एसिड, एसीटिल - एल कार्नीटाइन की बड़ी खुराकें शामिल हैं. ट्रेमेडोल जैसे दर्द निवारकी की खुराकों का भी

प्रयोग किया जाता है.

कभी-कभी इन दवाओं को डाइफेन्हाइड्रामाइन (बेनेड्रिल) जैसे एंटी-हिस्टामिनों व दर्द सुधारक दवाओं के साथ भी दिया जाता है. गेबापेंटिन जैसे एंटी-एपिलेप्टिकों तथा एमिट्रिप्टीलीन जैसे अवसादरोधी दवाओं के साथ देने पर भी रोग के लक्षणों की तीव्रता कम होती है. वैसे इनमें से कोई भी उपचार शत-प्रतिशत सफल नहीं हैं. 80 प्रतिशत रोगियों में 5-10 वर्षों तक दर्द बना रहता है.

सोने से आधे घंटे पहले यदि नमक युक्त गर्म पानी में पैरों को घुटने तक 10 मिनट तक डुबाकर रखा जाए तो दर्द की तीव्रता कम की जा सकती है. कैप्साइसिन युक्त दर्द-निवारक मलहमों के प्रयोग से भी राहत मिलती है. मलहम हर 3-4 घंटों में लगाना चाहिए और इसे जोर-जोर से नहीं मलना चाहिए क्योंकि इससे त्वचा को क्षति पहुंचती है.

-बालकृष्ण काबरा 'एतेश'

11, सूर्या अपार्टमेंट, रिंग रोड, राणाप्रताप नगर, नागपुर-440022 (महाराष्ट्र), मोबाइल - 9422811671

ई-मेल : kabraetesh@rediffmail.com

7 ग्लोबल वार्मिंग का कुप्रभाव

ग्रीनलैंड, अंटार्कटिका, पृथ्वी के ध्रुवों पर, माउंटेन ग्लेशियर्स आदि हैं. धरती की अधिकतर बरफ अर्थात 3.3 करोड़ घन किलोमीटर (90 प्रतिशत) बर्फ ग्रीनलैंड एवं अंटार्कटिका की बर्फ की चादरों में विद्यमान है. धरती के ताजे पानी का 75 प्रतिशत भाग इन ग्लेशियरों में बर्फीले रूप में विद्यमान है. चूंकि इतनी भारी मात्रा में पानी को ये अपने भीतर रखते हैं अतः ये समुद्र के जलस्तर की वृद्धि पर नियंत्रण करते हैं, इन्हें छूकर बहने वाली हवा पृथ्वी का तापमान नियंत्रित करने में सहायक होती है. पृथ्वी के दोनों ध्रुव भी समस्त विश्व की जलवायु पर नियंत्रण करते हैं. ग्लोबल वार्मिंग से ये ग्लेशियर पिघलने लगे हैं. तापमान की वृद्धि से बर्फ पिघलने की दर बढ़ जाती है और बारिश भी तेजी से होने लगती है. इस संदर्भ में आंकड़ों के आइने को देखें तो पता चलता है कि कुछ वर्ष पूर्व दक्षिणीध्रुव में अधिकतम वर्षा दर्ज हुई है. हिमपात से हिमशैलों का वजन इतना बढ़ जाता है कि वे सागर के नीचे चले जाते है और समुद्री रातह का जल स्तर बढ़ जाता है. हिमशैलों के पिघलने से भी यह

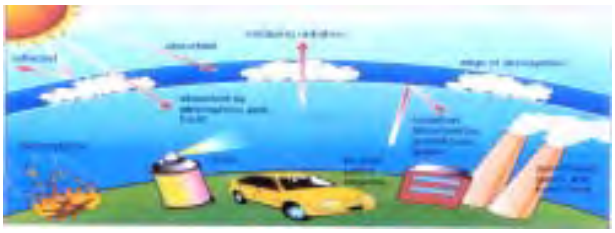

घटना घटने लगती है. इन सब कारणों से समुद्र की मूलभूतसंरचना में भारी उलथ-पुलथ एवं हेर-फेर होने लगता है. इस क्षेत्र में शोध क़रनेवाले वैज्ञानिकों का मानना है कि पिछले कुछ दशकों में ही समुद्र का जलस्तर काफी कुछ बढ़ गया है और उसकी मुख्य वजह है हिमशैलों का पिघलना एवं नष्ट होना. साइंस जनरल नेचर में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार इससे तटीय सीमाएं समाप्त हो जाएंगी. जो मानवजाति के लिए एक बड़ा खतरा साबित हो सकता है. आईपीसीसी (इंटरगवरमेंट पेनल आन क्लाइमेट चेंज) ने 2007 में गरम समुद्र के पानी के फैलाव के कारण साल 2100 के आसपास समुद्र के स्तर में 59 सेंटीमीटर की वृद्धि होने की बात कही. इसके प्रभाव से कई द्वीपों में मनुष्य का रहना मुश्किल हो जाएगा और एक करोड़ लोग जो एशिया और अफ्रीका के निचले डेल्टा में रहेंगे, इससे प्रभावित होंगे. इस प्रकार सर्वाधिक बर्फ वाले क्षेत्र अंटार्कटिका और ग्रीनलैंड के पिघलने से समुद्र के स्तर में 3 मीटर की बढ़ोतरी होगी. समुद्र के स्तर में तीन मीटर का इजाफा होने से कई दर्जन बड़े शहर जैसे शंघाई, कोलकाता, मियामी, और ढाका नष्ट हो जाएंगे. वैज्ञानिकों के अनुसार अगर तापमान दो डिग्री सेल्सियस से ज्यादा बढ़ गया तो दो हजार तीस या उससे पहले आर्कटिक समुद्र की बर्फ की चादर पिघल जाएगी. इससे पोलर बियर ध्रुवीय भालू बेघर हो जाएंगे और पृथ्वी पर ऊर्जा का सन्तुलन अनियमित हो जाएगा. समुद्र के गरम पानी के कारण कोरल रीफ को भारी नुकसान होगा. इस प्रकार सब ट्रापिकल (ऊष्ण क्षेत्र) के कारण बढ़ जाने की संभावना बढ़ जाएगी और गरम हवाएं और तेज आंधियां भी चलेंगी. गरम हवाओं के चलने से फसलें नष्ट होंगी. तापमान में चार से पांच डिग्री की बढ़ोतरी से ग्रीनहाउस मिथेन का उत्सर्जन बढ़ जाएगा. इस प्रकार साइबेरिया का बर्फ का रेगिस्तान पिघलने लगेगा. दक्षिणी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका मध्य एशिया और अन्य सब ट्रापिकल क्षेत्रों में मनुष्य एवं पेड़-पोधों की कई प्रजातियां लुप्त हो जाएंगी. एंडीज एल्पस रॉकी और माउंट एवरेस्ट जैसे शिखरों के श्वेत शुभ्र हिमनद पिघलकर बह जाएंगे. औसत वैश्विक तापमान पांच करोड़ वर्षों में सबसे अधिक स्तर पर पहुंच चुका है. आर्कटिक क्षेत्र

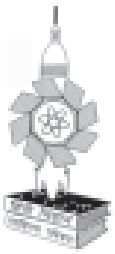

में तापमान में भारी वृद्धि हुई है. जब 6 डिग्री सेल्सियस से ऊपर तापमान बढ़ जाएगा तो सामुद्रिक मीथेन हाईड्राइडस् की वजह से ग्लोबल वार्मिंग और बढ़ेगी.

-दीनानाथ सिंह,
एन.आर.बी., बी.ए.आर.सी., मुंबई - 400 085

8. मानसिक तनाव कारण और निवारण

मानसिक तनाव वर्तमान आधुनिक जीवन शैली की एक प्रमुख समस्या बनता जा रहा है. बच्चे, जवान, बूढ़े सभी कहीं न कहीं इससे प्रभावित हैं तनावपूर्ण जीवन से न केवल मानसिक हानि पहुंचती है बल्कि इससे अन्य कई प्रकार के शारीरिक रोगों के होने का खतरा भी बना रहता है. तनाव (स्ट्रेस) मनःस्थिति से उत्पन्न हुआ एक ऐसा विकार है जो मनःस्थिति और परिस्थिति के बीच असंतुलन एंव सामंजस्यता के अभाव के कारण उत्पन्न होता है.

तनाव एक प्रकार का व्दन्द है जो मन एवं भावनाओं में गहरी दरार पैदा करता है. यह एक प्रकार से अनेक मनोविकारों का प्रवेश व्दार भी है. इसके कारण हमारा मन अशांत रहता है एवं भावनाएँ अस्थिर हो जाती है. तनाव से शरीर में अस्वस्थता का अनुभव होने लगता है और इससे हमारी कार्यक्षमता भी प्रभावित होने लगती है.

तनाव हमारे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य में बाधा उत्पन्न करता है. तनाव न पैदा हो, इसके लिए हमें अपना दृष्टिकोण सदैव ही सकारात्मक रखकर सोचना होगा. कुछ व्यक्ति सदा ही नकारात्मक सोचते हैं और वे बिना वजह तनावग्रस्त हो जाते है. हमारी सोच और व्यवहार का ढंग, हमारे शरीर के अन्य अंगो पर अपना प्रभाव डालता है और हमारे शरीर को प्रभावित करता है. इसलिए कहा गया है कि एक स्वस्थ विचार से स्वस्थ मन तथा स्वस्थ मन से स्वस्थ शरीर बनता है. अतः जीवन में स्वस्थ रहने के लिए आशावादी दृष्टिकोण रखना ही श्रेयस्कर होता है.

तनाव उत्पन्न होने के कारण

इस वर्तमान आपाधापी भरी जिंदगी में हर कोई अपने पेशे (कैरियर) की उँचाइयों को प्राप्त करना चाहता है. एकल परिवार में रहने से लोगो में एकाकीपन का अनुभव होता है, अपनी एवं परिवार की जिम्मेदारियों, काम का बोझ, समय की कमी, रिश्तों के बीच बढ़ती दूरियाँ, उच्च महत्वाकांक्षाओं की वजह से सारे दबाव जब मस्तिष्क एवं शरीर पर पड़ेंगे तो निश्चित रूप से तनाव भी अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाएगा. इस प्रकार हम स्वयं ही दबावों में रहकर के तनाव पैदा कर लेते हैं और फिर लगभग 90 प्रतिशत बीमारियाँ इन्हीं तनावजन्य स्थितियों के कारण उपजती है. तनाव शरीर में उन हार्मोन्स या रसायनों को पैदा नहीं होने देता है जो हमें कठिन परिस्थितियों से लड़ने की ताकत देते हैं.

तनाव के कारण ही शरीर में कई प्रकार के हार्मोन्स का स्तर भी बढ़ने लगता है जिनमें एड्रीनलीन और कॉर्टिसोल प्रमुख है. इनके बढ़ने से हृदय तेजी से धड़कने लगता है, पाचन क्रिया मंद पड़ने लगती है, रक्त का प्रवाह अनियमित होने लगता है.

शरीर की प्रतिरोधक क्षमता कम होने की समस्या भी तनावजन्य स्थिति में ही पैदा होती है. अगर तनाव की यही स्थिति लगातार बनी रहे तो धीरे-धीरे इसका असर शरीर में अन्य कई प्रकार के रोगों के रूप में दृष्टिगोचर होने लगता है. इनमें चिंता, अवसाद (डिप्रशन), मधुमेह (डायबिटिज), बालों का झड़ना, हृदय रोग (ब्लडप्रेशर का बढ़ना), मोटापा, फोड़ा (अल्सर) लैंगिक एवं प्रजनन क्षमता का ह्रास (सेक्सुअल डिस्फंक्शन), श्वांस रोग, त्वचा सबंधी रोगों का प्रभाव बढ़ने लगता है. तनाव के कारण ही बेचैनी, सिर में भारीपन रहना, घबराहट, गुस्सा, डर, चिड़चिड़ापन, ध्यान की कमी, काम में अरूचि, पैरों व हाथों में ठंडापन, पसीने का अत्यधिक आना, भूख एवं स्मृति में कमी और नींद का न आना (अनिद्रा) जैसी बीमारियाँ होने लगती है.

इस प्रकार तनावग्रस्त व्यक्ति का मानसिक एंव शारीरिक स्वास्थ्य बहुत तेजी से खराब होने लगता है, कभी-कभी तो व्यक्ति अवसाद (डिप्रेशन) की स्थिति में पहुँचकर आत्महत्या करने की ओर भी अग्रसर हो जाता है.

तनाव के प्रकार

तनाव से अनेक प्रकार के मनोविकार पैदा होते है जैसे- चिंता, कुण्ठा, अवसाद, हीन भावना, एकांत में समय बिताना. तनाव के कारण शारीरिक व मानसिक रूप से विकास यात्रा में व्यवधान होने का खतरा बना रहता है. तनाव से बचने हेतु परिस्थिति के साथ ताल-मेल रखना जरूरी होता है जिससे तनाव संबंधी मनोविकार को दूर किया जा सके. तनाव कई प्रकार का होता है जैसे-

पारिवारिक तनाव, आर्थिक तनाव, कार्यालयीय तनाव, रोजगार का तनाव, इसके अलावा मनोनुकूल परिस्थिति-परिवेश के अभाव में भी व्यक्ति उध्दिग्न, अशांत एवं तनावग्रस्त हो उठता है. इसमें केवल एक व्यक्ति प्रभावित होता है लेकिन

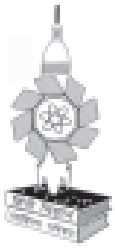

यह सीमा जब व्यक्ति को लांघकर परिवार में पहुँच जाती है तो पूरा परिवार तनावग्रस्त हो जाता है. पारिवारिक तनाव से परिवार के संवेदनशील रिश्तों में दरार एवं टुटन पैदा हो जाती है जिससे छोटी-छोटी बातों को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर कलह एवं कहासुनी जैसी उलझनें पैदा हो जाती है और परिवार का सुंदर, सुखमय व शांतमय वातावरण कलह एवं अशांति से घिर जाता है.

आधुनिक जीवन में तनाव न हो यह संभव नहीं है, जीवन में दिन-प्रतिदिन की समस्याएँ भी आएंगी, गरीब, मध्यम वर्ग, धनी लोग, अत्यधिक धनवान सभी किसी न किसी कारण से चिंतित एवं परेशान रहते है और तनाव उनके मन और शरीर को खोखला करता रहता है. समस्याओं के प्रति प्रतिक्रया करने से तनाव उपजता है, हमारे ज्यादातर तनाव अवांछित होते हैं और उन्हें कुछ सरल और कुछ कम सरल तरीके अपनाकर कम किया जा सकता है.

तनाव से बचने के उपाय

तनाव कोई ऐसी बीमारी नहीं है जिसका इलाज न हो सके, लेकिन जरूरत है समय रहते इस बीमारी को पहचान लेने की और इससे बचने के उपाय ढूँढ़ने की. अपनी जीवन शैली में थोड़ा परिवर्तन लाकर और उचित उपचार से इसे आसानी से ठीक किया जा सकता है और अपने जीवन को बेहतर बनाया जा सकता है. सबसे पहले उन बाहरी और आंतरिक कारणों की पहचान करनी होगी जिनकी वजह से तनाव का स्तर बढ़ता है. जब कभी अत्याधिक तनाव महसूस किया जाय तो तनाव के उन कारणों को नोट कर लेना चाहिए और उन्हें धीरे-धीरे समाप्त करना चाहिए. इस प्रकार तनाव को कम किया जा सकता है. सभी प्रकार का तनाव बुरा नहीं होता है क्योंकि बिना तनाव के हम किसी प्रकार से प्रतिस्पर्धी (कॉपिटीटिव) नहीं हो पाएंगे. तनाव जन्य होकर हम अपनी जीत को तौल सकते हैं. अतः कभी-कभी तनाव एक सकारात्मक बल (पॉजीटिवफोर्स) भी है.

किसी भी नकारात्मक तनावजन्य स्थिति का मुकाबला करने हेतु हमें अपने आप में या अपने वातावरण में बदलाव लाना चाहिए. तनाव प्रबंधन तकनीक का सहारा लेकर भी अपने बर्ताव, जीवन शैली और व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है. लेकिन यदि हममें स्थितियों को बदलने की शक्ति नहीं है तो हम अपने दृष्टिकोण को बदलकर तनाव से बच सकते हैं.

तनाव को नियंत्रित करने या उससे बचने हेतु निम्नलिखित उपाय काफी मददगार साबित हो सकते है :-

(1) तनाव को पहचानें - यह सबसे जरूरी प्रक्रिया है जो बातें हमें तनावग्रस्त करती हैं, उनकी ठीक से पहचान की जाए फिर उन्हें दूर करने के उपाय खोजना चाहिए. स्वयं को कुछ मिनट का समय दें और सोचें कि आज आप तनाव या दबाव में क्यों रहे, कौन से लोग, गतिविधियां, बातें आपको बोझिल या परेशान करती हैं. उनकी एक क्रमबध्द सूची बनाकर देखें कि आप उनमें कुछ परिवर्तन ला सकते है या नहीं. एक-एक करके उन्हें सुधारते जाएं और प्रयास करें कि दुबारा ऐसी दबाव वाली बातें या गतिविधियाँ न होने पायें.

(2) अनावश्यक संकल्पों या कार्यो को त्याग दें- हम अपने जीवन में बहुत सारे संकल्प करते हैं कि हमें यह करना है, वह करना है, पत्नी, बच्चे, कामकाज, घर-गृहस्थी, समाज, धर्म और अनेकों गतिविधियों में संलग्न रहते हैं, इनमें से बहुत सारे ऐसे भी होते है जिन्हें पूर्ण करने में हमें मानसिक दबाव अथवा तनाव की स्थिति में भी आना पड़ता है तो पहले से ही सोच विचार कर ऐसे कार्यों या संकल्पों को अपनी सूची से हटा देना चाहिए.

(3) टाल-मटोल ही प्रवृत्ति छोड़ना श्रेयस्कर- कार्यो को निपटाने में अक्सर हम टाल-मटोल करते रहते हैं और उन्हें आगे के लिए टालते रहते हैं, यह प्रवृत्ति ठीक नहीं है. इससे काम का दबाव बढ़ता जाता है. इसलिए जो कार्य आज करना है, उसे अभी ही कर देना अच्छा होता है, इससे अनावश्यक दबाव नहीं रहता है.

(4) व्यवस्थित रहने की आदत डालें- कुछ हद तक सभी लोग व्यवस्था और अव्यवस्था के बीच रहते है, यदि हम व्यवस्था बनाये रखने का प्रयास करें और इसमें प्रारंभ में सफल हो जायें तो फिर हम एक सुव्यवस्थित जीवन जीने की कला सीख जाएंगे क्योंकि अव्यवस्थित जीवन-शैली से तनाव बढ़ता है.

(5) प्रातःकाल सैर पर जायें- देर से उठना हमें कई परेशानियों में डाल देता है क्योंकि इससे सभी पूर्वनिर्धारित कार्यों में क्रमशः देरी होती जाती है और समय से कार्य पर निकलने में हमें दबाव की स्थिति में आना पड़ जायेगा. अच्छा तो यह होगा कि प्रतिदिन सुबह उठकर सैर (टहलने) पर निकल जाएं, प्रकृति के सुरम्य वातावरण में स्वच्छ हवा में आपका मन एवं शरीर हल्का हो जाएगा. शरीर में ऑक्सीजन का प्रवाह अच्छा होकर हमारे रक्त को शुद्ध कर देगा. सभी कार्य निर्धारित समय पर किया जा सकेगें और पूरा दिन मन एवं शरीर में तरोताजगी बनी रहेगी.

(6) दूसरों को नियंत्रित न करें तथा एक समय में एक

तनावग्रस्त स्थिति

भागमभाग जीवन-शैली

तनाव से उत्पन्न गुस्सा
एवं चिड़चिड़ाहट

प्रातःकालीन सैर

हास्य मुद्रा

मनोरंजन के विभिन्न स्रोत

अनुलोम-विलोम का
अभ्यास

धूम्रपान से बचें

सम्मोहन चिकित्सा

ही कार्य करें- हमें यह याद रखना चाहिए कि हम सारी दुनिया के मालिक नहीं है, हम चाहतें तो है कि सब कुछ हमारी इच्छा के अनुसार हो और उसके अनुरूप हम चीजों और लोगों को नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं और जब हम इसमें सफल नहीं हो पाते हैं तो तनाव बढ़ता है. इसलिए हम वही कार्य करें जो सीधे हमारे नियंत्रण में हो, अनावश्यक रूप से दूसरे के कार्यो को नियंत्रित ना करें तभी हम तनाव मुक्त रह सकते हैं. एक साथ कई काम करना, जैसे- कंप्यूटर करता है, कई लोग इसे बहुत बड़ा गुण समझते हैं लेकिन वास्तव में देखा जाए तो इससे नुकसान अधिक होता है.यह हमारे काम करने की गति को सुस्त एवं बाधित कर देता है जिससे तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है. इसलिए एक समय में एक ही कार्य करें.

(7) मुश्किल लोगों से दूर रहना सीखें- कभी-कभी जीवन में हमारे निकट में बहुत से ऐसे लोग भी होते हैं जो नकारात्मक विचारों एवं कुटिलतापूर्ण जीवन से भरे हो हैं, इनमें हमारे दोस्त, परिजन, सहयोगी तथा कार्यालय के बड़े लोग भी हो सकते हैं. ये लोग कभी-कभी हमारी जिंदगी को मुश्किल में डाल देते हैं और हम दबाव अथवा तनाव की स्थिति में पहुँच जाते हैं. अतः कोशिश करनी चाहिए कि ऐसे लोगों से संपर्क न हो.

(8) कार्य को धीरे करें तथा बीच-बीच में थोड़ा आराम भी कर लें- कार्यों को बहुत तेजी से या आपाधापी में लगे रहने के बजाय थोड़ी कम गति से करें तो कार्य ज्यादा अच्छे ढंग से होते हैं, जैसे- तेजी से कार्य करने के बाद, त्रुटियों की संभावना न हो और तनावमुक्त रह सकें. काम काज के दौरान बीच-बीच में छोटे-छोटे अंतराल लेने से तनाव की स्थिति से बचा जा सकता है और अपने कंधो और बाहों को आराम देने के लिए उन्हें फैलायें, पानी पीयें, खुला आसमान देखें, ताजी हवा में साँस ले, किसी से रचनात्मक वार्तालाप करें, इससे तनाव में कमीं होगी और जीवन सुखमय होगा.

(9) व्यायाम तथा बागबानी करें- प्रतिदिन कुछ न कुछ शारीरिक व्यायाम अवश्य करना चाहिए तथा अपने घर के आस-पास बगीचे में पेड़ पौधे की निराई-गुड़ाई करें, उनको पानी से सींचे, इससे आपका शरीर हल्का होगा तथा मन प्रसन्न रहेगा तथा तनाव से मुक्ति मिलेगी.

(10) मनोरंजन भी करें, हँसे भी- प्रत्येक दिन मनोरंजन के लिए थोड़ा सा समय अवश्य ही निकालें जिससे शरीर में ताजगी बनी रहती है और व्यक्ति इससे हल्कापन महसूस करता है. इसके लिए आप टेलीविजन देखें, अखबार पढ़ें,

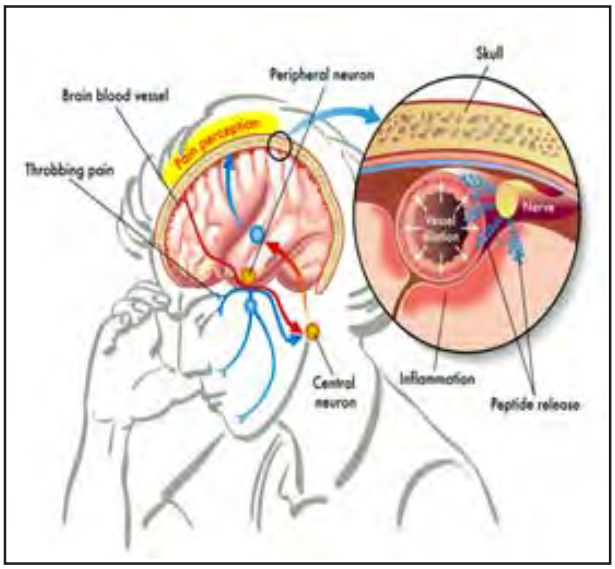

मित्रों से मिल करके अपनी समस्याओं पर चर्चा करें तथा गपशप करें. कोशिश करें कि प्रतिदिन खूब जोर से हँसे, हास्य बहुत सारे तनावों को दूर करता है साथ ही हँसने से 17 माँसपेशियाँ सक्रिय होती है. संगीत सुनें तथा मनोरंजन के लिए कुछ अन्य उपाय अपनायें. इन सबको करने से मानसिक तनाव अत्यधिक कम हाकता है.

(11) सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति श्रद्धा-आस्था रखें- जब कभी कोई अत्यधिक तनाव ग्रस्त स्थिति में हों तो हमें उस अवस्था में सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति संपूर्ण आस्था एवं श्रद्धा से उनकी अर्चना वंदना करनी चाहिए क्योंकि वह हमारी सभी समस्याओं का समाधान, हताशा, निराशा के वातावरण से निकालकर हमें ज्योतिर्मय पथ ओर ले जाने में समर्थ है. वही हमारे तनाव का पूर्ण निवारण करने में पूर्ण सक्षम है, हमारे सभी मनोविकारों को दूर करने में भी पूर्णतया मददगार है.

(12) योगासन, प्राणायाम करें- तनाव घटाने के लिए प्रत्येक दिन प्राणायाम एवं योगासन करना भी बहुत लाभदायक होता है. अनुलोम-विलोम करने से तनाव में कमी आती है. इसमें नियंत्रित गति से श्वाँस अंदर लेने की क्रिया को पूरक कहते है. अंदर ली गयी श्वाँस को क्षमतानुसार रोककर रखने की क्रिया को कुम्भक कहते हैं तथा अंदर ली हुई श्वाँस को धीरे-धीरे छोड़ने की क्रिया को रेचक कहते हैं. अनुलोम-विलोम से तनाव घटता है, शांति मिलती है. नेत्र ज्योति भी बढ़ती है. रक्त का संचार अच्छा होता है तथा अनिद्रा की शिकायत में लाभ होता है. साथ ही सूर्य नमस्कार करें जो कि योग का एक महत्वपूर्ण भाग है. इसी प्रकार सहज योग करने से न केवल बीमारियों को दूर किया जा

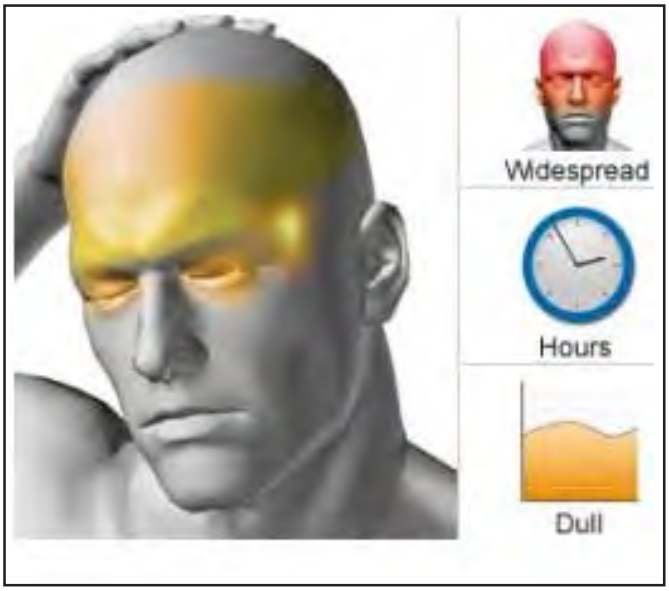

सकता है बल्कि मानसिक तनाव से भी मुक्ति मिल सकती है.

(13) गलत आदतों से बचें- अनेक प्रकार के तनाव तो हम स्वयं पैदा कर लेते हैं. आजकल की जीवन-शैली में शराब, कृत्रिम शीतल पेय, धूम्रपान, गुटका, तंबाकू, भांग आदि का प्रचलन बढ़ गया है, इससे भी तनाव में वृद्धि होती है. इसी प्रकार ज्यादा कॉफी या चाय भी नुकसानदेह है क्योंकि कैफिन की मात्रा से भी तनाव बढ़ता है. शरीर के लिए मांसाहारी भोजन भी अत्यधिक नुकसानदेह है. अतः शाकाहार को जीवन में अपनाकर तनावमुक्त रहा जा सकता है.

तनाव को दूर करने हेतू वर्तमान में कई चिकित्सा उपचार (थेरेपी) कारगर है जिनमें योग, मालिश (मसाज थेरेपी), ध्यान, सुगंध चिकित्सा (अरोमा थेरेपी), रेफ्लेक्सलॉजी, होमियोपैथी और सम्मोहन (हिप्नोसिस) प्रमुख हैं. कुछ अत्यधिक बिगड़ी हुई परिस्थितियों में आधुनिक दवाएँ, मनोचिकित्सा (साइकोथेरेपी) या मंत्रणा (काउन्सलिंग) भी अत्यधिक कारगर है. विशेष परिस्थितियों में मनोचिकित्सक से परामर्श कर उपयोगी एवं कारगर तरीकों तथा औषधियों से तनावजन्य जीवन से मुक्ति पायी जा सकती है.

थोड़े से तनाव से प्रतिरोधक तंत्र को मिलती है ताकत

तनाव हमारे स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता है, यह बात हर कोई जानता है. लेकिन, हाल ही में वाशिंगटन (अमेरिका) में किए गए शोध के परिणाम से पता चला है कि हमारे शरीर की प्रतिरोधक क्षमता के लिए थोड़ा तनाव होना जरूरी है. इससे हमारे शरीर के प्रतिरोधक तंत्र को परेशानियों का सामना करने की ताकत मिलती है.

आज के दौर में तनाव एक ऐसी समस्या है जिसकी शिकायत हर कोई करता दिखाई पड़ता है. कारण अलग-अलग है, किसी को अपने कार्यालय के काम से तनाव है तो किसी को घर के काम से. छात्र अपनी परीक्षा को लेकर तनावग्रस्त है तो बच्चे अपने गृहकार्य के बोझ से तनाव महसूस करते हैं. आमतौर पर तनाव को तन व मन के स्वास्थ्य के लिए बेहद बुरा माना जाता है. लेकिन, नये शोध बताते हैं कि संकट के समय सैनिकों की तरह ही मुकाबले के लिए हमारी प्रतिरोधक कोशिकायें तैयार हो जाती हैं. हमारा प्रतिरोधक तंत्र बैक्टिरिया-वायरस के ज्यादातर हमलों को नाकाम कर देता है, जिससे हमारा शरीर और मजबूत हो जाता है. प्रतिरोधक क्षमता से घाव जल्द ही ठीक हो जाते हैं. किसी प्रकार के खतरे के समय योग्य प्रकार के हार्मोन्स का स्त्राव होता है. रक्त में प्रतिरोधक कोशिकाओं की संख्या भी बढ़ जाती है.

डॉ.देवेश कुमार गुप्त
वरिष्ठ परियोजना अधिकारी,
न्यू जी/10 हैदराबाद कॉलनी,
बी.एच.यू.कॅम्पस, वाराणसी-221005

अन्य विज्ञान समाचार

1.पृथ्वी जैसे एक ग्रह की मौजूदगी

नासा की हबल दूरबीन ने हमारी धरती से 40 प्रकाश वर्ष दूर पृथ्वी जैसे ही एक ग्रह के वायुमंडल में बादल की मौजूदगी का पता लगाया है.इस ग्रह का नाम **जीजे 1214 बी** है. इसे पृथ्वी जैसे ग्रह के तौर पर वर्गीकृत किया गया है क्योंकि इसका द्रव्यमान पृथ्वी और नेपच्यून के बीच का है. **जीजे1214बी** जैसा कोई ग्रह हमारे सौरमंडल में नहीं है. इसके भौतिक लक्षण के बारे में अभी काफी कुछ पता नहीं है. इस ग्रह के पहले के अध्ययनों में कुछ संभावनाओं का पता चला था. इसमें या तो इसके वायुमंडल में जलवाष्प भरा पड़ा है या कुछ अन्य तरह के भारी परमाणु हैं. या इसमें अधिक ऊंचाई वाले बादल हैं. लॉरा के दबर्ग और जैकब बीन के नेतृत्व में शिकागो विश्वविद्यालय के खगोल वैज्ञानिकों की एक टीम ने अब हबल अंतरिक्ष दूरबीन के जरिए इस ग्रह के वायुमंडल में बादल होने के स्पष्ट साक्ष्य जुटा लिए हैं.

हबल दूरबीन के जरिए इसका 11 महीनों के दौरान 96 घंटे तक अध्ययन किया गया. किसी एक ग्रह के अध्ययन पर हबल का यह सर्वाधिक लंबा कार्यक्रम था. शोधकर्ताओं ने अपने इस काम को सौर मंडल के बाहर एक संभावित निवासयोग्य, पृथ्वी जैसे ग्रह का पता लगाने की दिशा में मील का पत्थर बताया है. इसके बारे में अध्ययन नेचर जर्नल में प्रकाशित हुआ है.

2. मंगल ग्रह पर परीक्षण

वैज्ञानिकों ने पहली बार मंगल ग्रह पर परीक्षण करके वहां मौजूद एक चट्टान के बारे में यह पता लगाने में सफलता हासिल की है कि वह चट्टान कितनी पुरानी है.

वाशिंगटन से मिली जानकारी के अनुसार हालांकि अनुसंधानकर्ताओं ने अन्य ग्रहों पर यह पता लगाया है कि वहां की चट्टानें कितनी पुरानी है लेकिन उल्का पिंड और चंद्रमा की चट्टानों के विश्लेषण जैसे वास्तविक परीक्षण हमेशा पृथ्वी पर किए गए हैं. कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में भू रसायनज्ञ केन फार्ले के नेतृत्व वाले दल के अध्ययन ने मंगल ग्रह के भू इतिहास को न सिर्फ समझने में ही मदद की अपितु इस ग्रह पर प्राचीन जीवन के साक्ष्यों की तलाश करने में भी सहायता की है. फार्ले और उनके साथियों ने पहली बार एक चट्टान के परीक्षण के जरिए पता लगाया कि वह तीन अरब 86 करोड़ से लेकर चार अरब 56 करोड़

वर्ष पुरानी चट्टान है. यह अध्ययन साइंस एक्सप्रेस पत्रिका में प्रकाशित किया गया है.

3. पृथ्वी से परे जीवन की तलाश

पृथ्वी से परे जीवन की तलाश में नासा के वैज्ञानिकों ने पांच सुदूर ग्रहों के वातावरणों में पानी के धुंधले से निशान खोज निकाले हैं. वाशिंगटन स्थित नासा ने कहा कि हालांकि वातावरणीय जल की उपस्थिति की जानकारी सौरमंडल से परे कुछ सुदूर ग्रहों पर पहले भी मिल चुकी है लेकिन यह ऐसा पहला अध्ययन है जिसमें विभिन्न दूरस्थ पिण्डों में मिले इन निशानों का पूरी तरह मापन और आपस में तुलना की गई है. नासा की रिपोर्ट में कहा गया कि यह अध्ययन हब्बल दूरदर्शी (एक अंतरिक्ष दूरदर्शी) की मदद से किया गया है और ये पांच ग्रह हैं-डब्ल्यूएएसपी-17बी, एचडी209458बी, डब्ल्यूएएसपी-12बी, डब्ल्यूएएसपी-19बी और एक्सओ-1बी. नासा ने कहा कि पानी के जो निशान मिले हैं, उनकी तीव्रता में भिन्नता है. मेरीलैंड के ग्रीनबेल्ट में स्थित नासा के गॉडार्ड स्पेस फ्लाइट सेंटर के ग्रह विज्ञानी एवी मेंडल ने कहा, 'हम इस बात को लेकर पूरी तरह आश्वस्त हैं कि हमने कई ग्रहों पर पानी के निशान देखे हैं. 'एवी मेंडल प्रकाशित हुए एस्टोफिजीकल जनरल पेपर के प्रमुख लेखक हैं. इस पत्र में डब्ल्यूएएसपी-12बी, डब्ल्यूएएसपी-

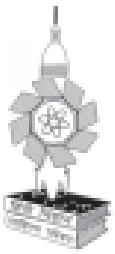

17बी और डब्ल्यूएसपी-19बी के नतीजों के बारे में लिखा गया है.

मेंडल ने कहा, 'इस काम से विभिन्न तरह के बाहरी ग्रहों के पर्यावरण में मौजूद पानी की मात्रा की तुलना के द्वार खुल गए हैं. जैसे- इस संदर्भ में गर्म ग्रह और ठंडे ग्रहों की तुलना की जा सकती है.'

4.चांद के पार पहुंचा मंगलयान

इसरो के मार्स आर्बिटर ने चंद्रमा की कक्षा को पार कर लिया है और यह उससे आगे की यात्रा पर बढ़ रहा है.

इसरो सूत्रों ने बताया, 'मंगल आर्बिटर अंतरिक्षयान चांद की कक्षा को पार कर गया है.

इस तरह तकनीकी रूप से यह हमारे चंद्रयान की कक्षा को पार कर अब चांद से आगे बढ़ रहा है. यह 10 लाख किलोमीटर की दूरी प्रतिदिन तय कर रहा है. 'उन्होंने बताया कि यह पहला मौका है जब भारत निर्मित किसी उपकरण को सुदूर अंतरिक्ष में भेजा गया है. इसे भारत के अंतरिक्ष इतिहास में एक मील का पत्थर माना जा रहा है. इसरो ने ट्रांस मार्स इंजेक्शन प्रक्रिया को पूरा किया. इसका उद्देश्य मार्स आर्बिटर अंतरिक्षयान को सूर्य के चारों ओर मौजूद प्रस्तावित कक्षा में भेजना था. मंगल की कक्षा के मार्ग पर आगे बढ़ने में किसी तरह का भटकाव होने की दशा में इसमें मार्ग सुधार की योजना भी बनाई गई है.. भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के मंगलयान ने पृथ्वी की तस्वीरों का पहला सेट भेजा है जिसमें भारतीय उपमहाद्वीप एवं अफ्रीका के कुछ भागों की तस्वीरों को कैद किया गया है. इसरो सूत्रों ने बताया ''हम अंतरिक्षयान पर लगे उपकरणों की जांच कर रहे हैं. ये तस्वीरें मार्क्स आर्बिटर अंतरिक्षयान पर लगे मार्क्स कलर कैमरा से 67975 किमी की ऊंचाई एवं 3.53 किमी के रिजोल्यूशन से ली गयी हैं.''यह पूछे जाने पर कि क्या इन तस्वीरों को योजना के अनुसार खींचा गया क्योंकि अभियान तो मंगल ग्रह के लिए है, सूत्रों ने कहा कि यह अंतरिक्षयान पर लगे उपकरण की जांच का अंग है.राष्ट्रीय अंतरिक्ष एजेंसी को एक से अधिक तस्वीरें मिली हैं. लेकिन उसने अपनी आधिकारिक वेबसाइट पर इसकी केवल एक तस्वीर जारी की है.तस्वीर में भारतीय उप महाद्वीप एवं अफ्रीका के हिस्सों को कैद किया गया है विशेषकर आंध्र प्रदेश तट पर आने वाले चक्रवात हेलन को. मंगलयान को प्रक्षेपित किये जाने के बाद पहली बार इसमें लगे उपकरण के परिचालन की जांच की गयी है. इससे पूर्व इसरो ने मार्स आर्बिटर की पांच बार कक्षा बढ़ाये जाने के अभियान को संपन्न किया था. अंतरिक्ष यान के शिरोबिन्दु को 1.92 लाख किमी ऊपर उठाया गया था. इन अभियानों के सफलतापूर्वक संपन्न होने के बाद मंगल अभियान में एक दिसंबर को रात 12 बजकर 42 मिनट पर ट्रांस मार्स इंजेक्शन के महत्वपूर्ण चरण को अंजाम दिया. मंगल यान करीब 10 माह की अंतरिक्ष यात्रा करने के बाद 24 सितंबर 2014 को लाल ग्रह की कक्षा में पहुंचेगा.

इसरो के पीएसएलवी सी 25 ने 1350 किग्रा वजन वाले मंगलयान आर्बिटर को पांच नवंबर को श्रीहरिकोटा के सतीश धवन अंतरिक्ष केन्द्र से दोपहर दो बजकर 38 मिनट पर प्रक्षेपित किया था और इसके करीब 44 मिनट बाद इसे पृथ्वी के इर्दगिर्द कक्षा में स्थापित कर दिया गया. इसी के साथ 450 करोड़ रूपये की लागत वाले इस अभियान का पहला चरण सफलतापूर्वक संपन्न हो गया.लाल ग्रह के लिए भेजे गये भारत के पहले अभियान के तहत प्रक्षेपित मंगल यान ने आंध्र प्रदेश के तट की ओर बढ़ रहे भीषण चक्रवाती तूफान ''हेलन'' की तस्वीरें कैद कर भेजी हैं

5. तारों और आकाशगंगाओं पर विवरणिका

खगोलविदों ने ब्रह्मांड की एक नयी विवरणिका तैयार की है जिसमें उन्होंने करीब 35 फीसदी आसमान के ऐसे 4.4 करोड़ तारों और आकाशगंगाओं को शामिल किया है जिन्हें कम से कम दो बार देखा गया.

अनुसंधानकर्ताओं ने बताया कि यह पहला मौका है जब लाखों तारों और आकाशगंगाओं का समुचित तरीके से विवरण तैयार किया गया है. इन तारों और आकाशगंगाओं में से कई तो अप्रत्याशित रूप से या तो चमकीले हो रहे हैं या उनकी चमक खो रही है. ऑस्ट्रेलिया स्थित सिडनी विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ फ़िज़िक्स के 'एआरसी सेंटर ऑफ एक्सीलेन्स फॉर ऑल स्काई एस्ट्रोफिजिक्स' (सीएएएसटीआरओ) के निर्देशक प्रोफेसर ब्रायन जेनस्लेर और ब्रिटेन स्थित कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के डॉ ग्रेग मेडसेन ने यह चुनौतीपूर्ण कार्य किया. डॉ मेडसेन पहले सिडनी विविद्यालय में थे.

इस अनूठी पहल के लिए 60 साल में आसमान के दो बड़े खगोलीय सर्वेक्षणों के फोटोग्राफिक और डिजिटल आंक़डों की मदद ली गई. कुछ आंक़डे तो वर्ष 1949 के भी हैं.

संकलन :- संजय गोस्वामी
एनआरबी, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
मुंबई

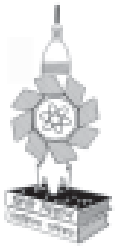

बुद्धि कौशल्य (3) के प्रश्नों के समाधान

हमें प्रसन्नता है कि अनेक पाठकों के बुद्धि कौशल्य (3) के संबंध में पत्र तथा ई-मेल प्राप्त हुए, लेकिन खेद की बात यह भी है कि हमें किसी भी पाठक से सभी प्रश्नों के शुद्ध हल प्राप्त नहीं हुए. फिर भी पाठकों द्वारा किये गये प्रयत्नों की हम प्रशंसा करते है. यहां हम अन्य पाठकों की सुविधा के लिए बुद्धि कौशल्य (3) के समाधान विस्तार से दे रहे हैं. ध्यान रहे, उत्तर लिखते समय आपको ये विस्तार दिखाने की आवश्यकता नहीं है, केवल अन्य पाठकों की समझ के लिये ही ये विस्तारित समाधान दिये जा रहे हैं.

-सं.मं.

प्र.1 : माना कि n इस समुच्चय की मध्य की संख्या है, तो समुच्चय होगा {n-1, n, n+1}

हमें दिया गया है कि $\{(n-1)+n+(n+1)\}^2$

$= (n-1)^3 + n^3 + (n+1)^3$

अर्थात $(3n)^2 = (n-1)^3+n^3+(n+1)^3$

$= 3n^3 + 6n$

या $9n^2=3n^3+6n$

या $n^3-3n^2+2n=0$

या $n(n-1)(n-2)=0$

अतः n=0, n=1, n=2 } ये n के तीन संभावित मान है.

और इस प्रकार के तीन समुच्चय होंगे

1. n=0 के लिये
   (-1,0,1)
2. n=1 के लिये
   (0,1,2)
3. n=2 के लिये
   (1,2,3)

प्रश्न 2 : यदि दौड़ के समय अरूण, वरूण और गरूड़ की औसत गतियां क्रमशः V_A, V_B और V_G हो, तथा अरूण एवं वरूण द्वारा 100 मी. की दौड़ पूरा करने के समय क्रमशः t_A और t_V हों, तो हमें दिया गया है कि

$V_A\ t_A = 100 = V_V\ t_V$ .....(1)

साथ ही अरूण जब t_A समय में दौड़ पूरी करता है, तब वरुण 5मी. पीछे छूट जाता है. अतः t_A समय में वरूण 95 मी. पार करता है. अर्थात

$V_V t_A = 95$ .....(2)

इसी प्रकार वरूण t_V समय में जब दौड़ पूरी करता है, तब गरूड़ 20 मी. पीछे छूटता है. अतः गरूड़ द्वारा t_V समय में तय की गयी दूरी 80 मी. है. अर्थात

$V_G t_V = 80$ .....(3)

समीकरण (1) व (2) से हमें मिलता है (विभाजन से)

$(V_A/V_V) = 100/95$ .....(4)

तथा समीकरण (1) व (3) के विभाजन से

$(V_V/V_G) = 100/80$ .....(5)

समीकरण (4) व (5) को गुणा करने पर

$(V_A/V_G) = (100/95) = (100/80)$

उपरोक्त को t_A से गुणा कर इसमें $V_A t_A = 100$ रखने पर $V_G t_A = 76$ आता है.

अतः अरूण जब दौड़ पूरी करता है (t_A समय में), उस समय गरूड़ 76 मी. तक पहुंचता है. यानि अरूण ने वरूण को (100-76) = 24 मी. से पछाड़ा.

प्र.3 : 3. माना कि कलाकृति की लंबाई a सेमी और चौड़ाई b से.मी. है. दी गई शर्त के अनुसार axb=72 वर्ग से.मी. किन्तु, ऊपर और नीचे तथा दायी और बायी तरफ के हाशिये भी पेपर के साथ है, अतः कलाकृति जिस पर बनेगी उस पेपर की लंबाई 2+a+2 तथा चौड़ाई 1.5+b+1.5 सेमी. होगी. तथा इसका क्षेत्रफल

(a+4) x (b+3) = ab+3a+4b+12

वर्ग सेमी, अर्थात 3a+4b+12+72=3a+4b+84 वर्ग सेमी होगा (क्योंकि ab=72)

इस क्षेत्रफल का मान न्युनतम करने के लिए 3a+4b में a व b के मान हमें इस प्रकार चुनना है कि 3a+4b का मान न्युनतम हो. क्योंकि ab=72 अतः a और b शुन्य नहीं

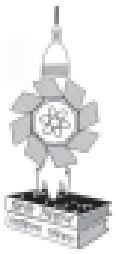

हो सकते हैं. a और b के मान चुनते जाकर (जो ab=72 से भी संबंधित रहें) हम पायेगे की जब a और b का अनुपात 4:3 का होगा, तब इस 3a+4b का मान न्युनतम होगा.

दूसरा तरीका : क्योकि ab=72 अतः a=72/b

इसलिए 3a+4b..=(3x72/b) +4b

इस फलन को b के सापेक्ष में अवकलन (Differentiation) कर उसे शुन्य के समान मानने पर

(d/db)(216/b+4b) = -216/b^2 +4 =0

क्योंकि a व b के न्युनतम माना के लिये यह संख्या शुन्य होगी.

अर्थात 216/b^2 = 4 या b^2=56

या b =+3√6 (– चिन्ह का लंबाई या चौड़ाई में अर्थ नहीं)

इसी प्रकार a=72/b =+4 √6, तथा a:b=4:3

प्र 4 : विकलांगो की सूची में 80 % लगड़े हैं, इसमें से 78 % बहरे भी होंगे. अर्थात जो लंगड़े एवं बहरे दोनों हो सकते हैं, उनकी संभावना {(80x78) /100}% होगी. इसी प्रकार जो लंगड़े, बहरे, अंधे और गुंगे हो सकते है, ऐसे अपंगों की प्रतिशतता {(80x78x76x74)/ 100x100x100)}% होगी. यह मान 35.09 प्रतिशत के लगभग है. अर्थात 35.09 % (लगभग) व्यक्ति चारों प्रकार की विकलांग से ग्रसित हो सकते हैं.

प्र.5 : गुरुत्वाकर्षण का बल सभी स्थानों एवं सभी दूरियों पर लगता ही है, किन्तु अन्तरिक्ष यानों की भूमण्डलीय कक्षा में गति के कारण इस अन्तरिक्ष यान की सभी वस्तुओं पर एक और बल का निर्माण हो जाता है जिसे अपकन्द्रीय बल कहते है. इन दोनों बलों की दिशाएं एक दूसरे से विपरीत होती है. और स्थिर कक्षा में इनके मान भी लगभग बराबर होते है, इसी कारण से अन्तरिक्ष यान में भार शुन्यता का ज्ञान सहज रूप से अनुभव में आता है. किसी कारण से यदि इस उपग्रह की गति में परिवर्तन करना पड़े तो उस दौरान भार शुन्यता का प्रभाव समाप्त हो जाएगा, और गति में परिवर्तन की दर के अनुपात से भार का अनुभव प्रारंभ हो जाएगा. किन्तु गतियुक्त स्थिरता प्राप्त करने पर फिर से भारशुन्य अवस्था भी आ जाती है.

भारतीय दर्शन से झलकती वैज्ञानिक संस्कृति

दृष्टानां दृष्टप्रयोजनानां दृष्टाभावे प्रयोगोअभ्युदयाय.

(वैशेषिक दर्शन 10/2/8, आचार्य कणाद प्रणीत)

(किसी कृति या सिद्धांत को) दर्शाने के लिए (अर्थात उसमें छिपी गहराई की समझ उत्पन्न करने या बढ़ाने के लिए) या स्वयं की जानकारी बढ़ाने के लिए अथवा सही दृष्टांत (उदाहरण) के अभाव में प्रयोग करना या प्रयोग के लिए प्रेरित करना ज्ञान की प्राप्ति करने/ कराने की श्रेष्ठ विधा है.

वर्तमान वैज्ञानिक सोच से भी किसी सिद्धांत या व्याख्या की सत्यता को परखने की अंतिम कसौटी प्रयोग व्दारा प्राप्त परिणाम ही होते है. उपरोक्त सूत्र भारतीय मनीषियों की वैज्ञानिक सोच को बेबाकी से प्रस्तुत करता है.

प्रस्तुति : जगदीश चंद्र व्यास

बुद्धि कौशल्य (4)

यहां कुछ सरल समस्याएं आपके ध्यानाकर्षण के लिए प्रस्तुत हैं. आप इनके उत्तर हमें भेज सकते हैं. कम से कम चार समस्याओं के शुद्ध उत्तर देने वाले पाठकों में से प्रथम दस के नाम वैज्ञानिक के अगले अंक में प्रकाशित किये जायेगें तथा सभी प्रश्नों के सही हल भेजनेवाले तीन प्रतियोगियों को पुरस्कृत भी किया जायेगा. उत्तर भेजनेवाले कृपया अपना स्पष्ट पता भी साथ में भेजें. अच्छा होगा यदि ये उत्तर हमें ई मेल द्वारा भेजे जाएं. सबंधित ई-मेल के पते नीचे दिए गए हैं. उत्तर प्राप्त होने की अंतिम तिथि 31 अक्टुबर 2014

(सं.मं.)

1. एक झील में एक सुंदर कमल पुष्प खिला हुआ है जो झील के पानी की सतह से 90 अंगुल (लंबाई का एक माप) ऊपर की ओर स्थित है. मन्द मन्द हवा के झोंकों से यह कमल पुष्प अपने स्थान से झोंकों के प्रवाह की दिशा में खिसकता जाता है, और अपने स्थान से 360 अंगुल दूरी पर पहुंचते ही झील के पानी की सतह को स्पर्श कर लेता है. यदि कमलपुष्प को आधार देने वाली कमलनाल हर स्थिति में सीधी रेखा की तरह ही बनी रहे तो क्या आप बता सकते हैं कि कमल पुष्प के मूल स्थान पर पानी की सतह से झील की गहराई कितनी होगी?

2. दो वानर एक उर्ध्वाधर सीधे वृक्ष पर 100 मी. की ऊंचाई पर बैठे है, और जमीन पर पड़े हुए फलों की टोकरी को देखते है, जो पेड़ के तने के केन्द्र से 50 मी. की दूरी पर रखी हुई है. इन फलों को पाने की इच्छा से पहला वानर पेड़ से सीधे तने के सहारे नीचे उतरकर फिर जमीनपर सीधी रेखा में चलकर टोकरी के पास पहुंचता है, जबकि दूसरा वानर, अपने स्थान से पेड़ के शीर्ष स्थान की ओर जाता है, और वहां से टोकरी पर सीधी रेखा बनाते हुए छलांग लगाता है. यदि दोनों वानरों की औसत गतियां (चलते समय व छलांग के दौरान) एक समान ही हो, और दोनों वानर एक साथ टोकरी को छूते है, तो क्या आप बता सकते है, इस पेड़ की कुल ऊंचाई कितनी रही होगी.

3. एक विद्यार्थी शाला जाते समय किसी बाग से गुजरता है और वहां से एक फूलों की टोकरी लेकर आगे बढ़ता है. मार्ग में आनेवाले पूजा स्थलों पर वह फूल चढ़ाता है. कौतुहलवश पहले मंदिर में जितने फूल चढ़ाता है, उसके आधे अगले मंदिर में चढ़ाता है, आगे आनेवाले तीसरे मंदिर में भी इसी क्रम को ध्यान में रखकर दूसरे मंदिर में चढ़ाये गये फूलों से आधे फूल चढ़ाता है. इस प्रकार बढ़ते हुए वह दस मंदिरों तक उसी क्रम से फूल चढ़ाते हूए शाला पहुंचता है, किन्तु, अब भी उसके पास टोकरी में मिले कुल फूलों से आधे फूल शेष बच जाते है जो वह अध्यापकजी को समर्पित करता है. क्या आप बता सकते है, टोकरी में कम से कम कितने फूल रहे होंगे और पहले मंदिर में उसने कितने फूल चढ़ाए थे.

4. अनिल जब मुंबई से न्युयार्क गया तो वह अपने जाने के मार्ग में आनेवाले स्थानों को नोट करता गया. जब पृथ्वी के नक्शे पर उसने इन स्थानों को देखकर मुंबई से न्युयार्क वाले मार्ग को चिन्हित किया तो पाया कि नक्शे पर यह मार्ग सरल सीधी रेखा की जगह एक वक्राकार रेखा का रूप लेता है. वापसी में पाइलेट से अनिल ने इस बारे में पूछा तो उसने बताया कि इसी मार्ग से जाने पर मुंबई व न्युयार्क की दूरी सबसे कम आती है. क्या आप बता सकते है कि पृथ्वी के नक्शे पर यह मार्ग सरल रेखा के रूप में क्यों नहीं दिखाई देता है.

5. वैज्ञानिक के इस अंक के एक लेख में आर्यभट्टीय में वर्णित अंक-स्वराक्षर कोड को समझाया गया है. इस कोड के आधार पर क्या आप नीचे दिये गये शब्दों से निरूपित होने वाली संख्याओं को अंको या शब्दों में बता सकते है.

अनुसन्धान, परमाणु, नाभिक.

ईमेल :
skumar13d@gmail.com,
j.c.vyas@gmail.com

प्रस्तुति : डॉ.सुरेशकुमार एवं डॉ.जगदीश चंद्र व्यास

भौतिकी वर्ग, भा.प.अ.के., मुंबई

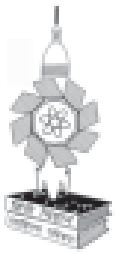

म नो ग त

विज्ञान की उत्कृष्ट पत्रिका ''वैज्ञानिक''

''वैज्ञानिक'' पत्रिका का प्रतियोगिता विशेषांक (वर्ष - 44, अंक - 3/4) पढ़ने का अवसर मिला.

आपका संपादकीय ''बोहर मॉडल के सौ वर्ष'' गहन अध्ययन पर आधारित है और संक्षिप्त एवं रोचक ढंग से हमें इस मॉडल के इतिहास से परिचित कराता है. इस अंक में प्रकाशित लेख आपकी हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित '' डॉ होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2011 '' में पुरस्कृत हुए हैं. सभी लेख बेहतरीन हैं और इस तथ्य को पुष्ट करते हैं कि हिंदी भाषा के माध्यम से विज्ञान के गूढ़तम विचारों को सरलता से समझाया जा सकता है. मेरी ओर से सभी रचनाकारों को हार्दिक बधाई.

इस अंक के विभिन्न स्तंभों के अंर्तगत प्रकाशित सभी रचनाएं उत्तम हैं. हिंदी विज्ञान लेखन को आप जैसे संपादक नई ऊंचाइयों पर पहुँचाएंगे, ऐसा मै निसंकोच कह सकता हूँ.

''शुभकामना'' के अंतर्गत वैज्ञानिक के पूर्व संयोजक डॉ गोविंद प्रसाद कोठियाल की अनुसंधान केंद्र से भावभीनी विदाई की जानकारी मिली. उनके सौम्य व्यक्तित्व से मेरा इलाहाबाद में ही परिचय हो गया था. इसलिए उनसे हुई शेष दो मुलाकातों के दौरान मुझे उनसे हिंदी विज्ञान लेखन के विभिन्न पक्षों पर चर्चा करने का सुअवसर मिला. मुझे आशा है कि वे इस सेवा निवृत्ति के बावजूद ''वैज्ञानिक'' से जुड़े रहेंगे. उनके सुखद भविष्य के लिए अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ.

सुभाष लखेड़ा,
सी-180, सिद्धार्थ कुंज, सेक्टर-7, प्लाट नंबर-17, नई दिल्ली-110075 मोबाइल - 09891491238, 08882091238

वैज्ञानिक का अंक 3/4, वर्ष 44 पढ़ा. पिछले अंकों से अधिक आकर्षक तथा कुल 88 पृष्ठों का था. प्रतियोगिता विशेषांक के लेख बड़े अच्छे लगे. मै जब से पढ़ रहा हूँ कदाचित प्रथम बार सचमुच किसी को प्रथम पुरस्कार दिया गया है. 'पॉजीट्रॉन विलोपन प्राविधि के पदार्थ विज्ञान में अनुप्रयोग' बड़ा अच्छा लेख था. पर चित्रों में कुछ ब्लॉकों के नाम नहीं दिये गए हैं. व्दितीय पुरस्कार प्राप्त लेख 'रचना से रचयिता बनने की ओर ' भी अति रोचक था. डॉ.यशवंत नाइक व डॉ.विनीता सिंघल को विशेष बधाई. संपादकीय तथा विज्ञान कविता 'परमाणु' (पृष्ठ 78) भी बहुत अच्छे और प्रभावकारी रहे. प्रोफेसर सुरेश चंद्र का लेख 'चंदा मामा क्यों छुप गये थे' कहानी व संवाद रूप में था अतः विशेष रूचि पैदा करता था. लेख 'क्या रत्नागिरि की कालबादेवी खाड़ी की तलछट मानसून प्रभावित है' लेखक अनिल बी वलसंगकर द्वारा बड़े परिश्रम से लिखा गया एक शुद्ध अनुसंधानात्मक लेख है जो अच्छा भी है. 'बुद्धि कौशल्य' अति आकर्षक था. यह स्तंभ जारी रहना चाहिए. टिप्पणियों में प्रथम टिप्पणी बड़ी रोचक है. 'वैज्ञानिक स्मरण' स्तंभ तले आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय तथा असाधारण बुद्धि के मालिक डॉ. श्रीनिवास रामानुजन पर लेख अति उत्तम थे. भारत वर्ष में भी अति महान वैज्ञानिक पैदा हुए हैं. इन लेखों को पढ़कर यही पता चला.

बाल किशोर पन्ना 'विज्ञान प्रश्नमालिका-1' डॉ. देवकीनंदन ने प्रस्तुत करके 'बाल विज्ञान' पर कई वर्षो बाद इनायत बख्शी है. प्रश्नोत्तरी बहुत अच्छी है शेष सभी लेख उत्तम व पसंदीदा हैं. बधाई हो.

कृपया गणित के प्रश्न अधिक दिया करें, जो छात्रों में बड़े रोचक होते हैं. विज्ञान के हर क्षेत्र से संबद्ध छोटे-छोटे प्रश्नोत्तरों जैसी सामग्री भी प्रस्तुत करें.

वैज्ञानिक जब षटमासिक पत्रिका के रूप में हाथ में देरी से आती है तो दुःख होता है. यह बात बड़ी अखरती है. मैं 'वैज्ञानिक' पूरा पढ़ता हूं.

सलाहुद्दीन अहमद
आंतरिक मात्रामिति प्रभाग,
विकिरण सुरक्षा पद्धति प्रभाग भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
भा.प.आ.के अस्पताल, अणुशक्तिनगर मुंबई-400094

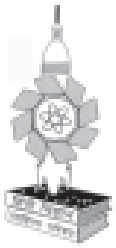

बधाइयां सहर्ष स्वीकार करें

वैज्ञानिक अंक जुलाई-सितंबर मिला धन्यवाद...

यह पत्रिका कुछ वर्षो के बाद के अंकों की तुलना में अति उत्तम है, कथा पृष्ठ रंगीन एंव मनोहर है. संपादकीय इतना अच्छा लिखा हुआ है कि जब मैं पढ़ने बैठी तो पढ़ते ही चली गई. आप केंद्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक के साथ-साथ हिंदी विज्ञान संपादन कला के जादूगर है. इतना अच्छा एवं अति उत्तम अंक शायद ही कभी पढ़ने को मिला हो. खासकर रामानुजन पर आपकी जो प्रस्तुति है वह अन्य पत्रिकाओं से बिल्कुल अलग एवं नई है. आप देश के सर्वश्रेष्ठ संपादक हैं एवं जिस प्रकार इस अंक में लेख संयोजन एवं प्रस्तुति का संकलन है, वह वाकई रूचिकर एवं ज्ञानवर्धक है. नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ बधाई स्वीकार करें.

डॉ हेमलता पंत

सोसाइटी ऑफ बायलोजिकल साइंसेज एण्ड रूरल डेवलपमेंट, 10/96 गोला बाजार, नई झूँसी, इलाहाबाद-211019, उ.प्र.

डा.होमी भाभा हिन्दी विज्ञान लेख प्रतियोगिता 2012 के परिणाम

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा.प.अ.केन्द्र) के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी विज्ञान लेखन प्रतियोगिता-2012 में निम्नलिखित प्रविष्ठियों को निर्णायक मंडल ने पुरस्कृत किया है. पुरस्कार विजेताओं की सूची निम्न प्रकार है.

प्रथम : 2000 रु.	क्या आप जानते हैं कि आप थैलेसेमिया के वाहक हो सकते हैं. डा.अजीत गोरक्षकर एवं कला अजीत देसाई गोरक्षकर, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा रूधिर विज्ञान संस्थान, मुंबई
द्वितीय : 1500रु.	सन 2012 में भौतिकी का नोबुल पुरस्कार. डा.विजय कुमार, बोकारो, झारखंड
तृतीय : 1000रु.	भारतीय पशुधन पर मंडराते सीमापार पशु रोगों के खतरे. डा.रमेश सोमवंशी, भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान केन्द्र, इज्जतनगर-243 122 (उ.प्र.)
प्रोत्साहन : 500रु.	मशरूम : परिचय, पोषकीय व औषधीय गुण. डा.हेमलता पंत, वैज्ञानिक, सोसायटी आफ बायलाजिकल साइंसेस एण्ड रूरल डेवलपमेंट, इलाहाबाद.
प्रोत्साहन : 500रु.	दिव्य मशरूम गेनोडर्मा. डा.सविता गुप्ता, गोमती नगर, लखनऊ.
प्रोत्साहन : 500रु.	कल्पना चावला की जीवनी. डा.हरीश चन्दर चौबीसा, सहायक आचार्य लोकमान्य तिलक प्रशिक्षण महाविद्यालय, डबोक - 313022, उदयपुर (राज)
प्रोत्साहन : 500रु. (अहिंदी)	अंतरिक्ष विज्ञान प्लूटो. शुभम देशमुख, रायगढ़, छत्तीसगढ़
प्रोत्साहन : 500रु. (अहिंदी	लुपस से लडने में लाईफ की मदद. मनीषा पटवर्धन, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा रूधिर विज्ञान संस्थान, मुंबई

विपुल सेन

प्रतियोगिता संयोजक एवं व्यवस्थापक,'वैज्ञानिक'

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद द्वारा आयोजित राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी 'कृषि, खाद्य व स्वास्थ्य संवर्धन में नाभिकीय प्रौद्योगिकी की भूमिका'

जनमानस तक राष्ट्रभाषा हिंदी के माध्यम से नाभिकीय प्रौद्योगिकी के उपयोगों को देश के अन्य शोध संस्थानों के साथ मिलकर वैज्ञानिक विकास एवं शोध को संवर्द्धन करने के उद्देश्य से परिषद प्रतिवर्ष राष्ट्रीय वैज्ञानिकी संगोष्ठी का आयोजन पिछले 40 वर्षों से करती आ रही है. इसी श्रृंखला के अंतर्गत दिनांक 14-15 फरवरी को हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय एवं मूँगफली अनुसंधान निदेशालय के संयुक्त तत्वाधान में 'कृषिविज्ञान में नाभिकीय प्रौद्योगिकी के उपयोग से संबंधित क्षेत्र में 'कृषि खाद्य व स्वास्थ्य संवर्धन में नाभिकीय प्रौद्योगिकी की भूमिका' विषय पर दिनांक 14-15 फरवरी 2013 को जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय, जूनागढ़ में राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी का आयोजन सफलत्तापूर्वक किया गया. दिनांक 14 फरवरी 2013 को कार्यक्रम का उद्घाटन (दीप प्रज्वलन) मुख्य अतिथी जूनागढ़ के जिलाधिकारी श्री मनीष भारद्वाज द्वारा किया गया. जिसमें विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा सरस्वती वंदना के मधुर स्वर ने सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया. स्वागत अभिभाषण डॉ. नरेंद्र कुमार गोंटिया, अधिष्ठाता कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, जूनागढ़ ने बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया. हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के सचिव एवं संगोष्ठी के संयोजन श्री जय प्रकाश त्रिपाठी द्वारा परिषद क़ी गतिविधियों तथा संगोष्ठी का पूरा परिचय प्रस्तुत किया गया. तत्पश्चात संगोष्ठी स्मारिका का विमोचन गणमान्य अतिथियों द्वारा किया गया. जिसमें प्रमुख थे श्री

परिषद के अध्यक्ष डॉ. देवानंद शर्मा एवं सचिव दीप श्री.जय प्रकाश त्रिपाठी दीप प्रज्वलित करते हुए.

मनीष भारद्वाज (कलेक्टर-जुनागढ़), डॉ.देवानंद शर्मा (अध्यक्ष हि.वि.सा.प.), डॉ.जितेंद्र भूषण मिश्र (निदेशक, मूँगफली अनुसंधान निदेशालय, जूनागढ़), डॉ.एन.सी.पटेल (कुलपति, जूनागढ़, कृषि विश्वविद्यालय), श्री.जयप्रकाश त्रिपाठी आदि के करकमलों द्वारा किया गया. अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ एन.सी.पटेल, (कुलपती) जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय) ने बताया कि नाभिकीय ऊर्जा का मानव स्वास्थ्य, खाद्य संरक्षण, प्रसंस्कारण, कृषि, उद्योग आदि में महत्वपूर्ण योगदान है. तत्पश्चात संगोष्ठी में भा.प.अ.केंद्र तथा जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय एवं मूँगफली अनुसंधान निदेशालय के वरिष्ठ वैज्ञानिकों द्वारा कृषि,

संगोष्ठी स्मारिका के विमोचन का दृश्य

नाभिकीय विकिरण, कैंसर आदि पर कुल चार तकनीकी सत्रों में 12 सरल वार्ताए राजभाषा हिंदी में प्रस्तुत की गई. ताकि सामान्य व्यक्ति भी नाभिकीय विज्ञान में कृषि, खाद्य एवं स्वास्थ्य संवर्धन की महत्ता समझ सके. दिनांक 15 फरवरी को विशेष अतिथि के रूप में भा.प.अ.केंद्र के नियंत्रक श्री सुहास जी मार्कण्डेय कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में पधारे. उन्होंने बताया कि कृषि विज्ञान के क्षेत्र में भा.प.अ.केंद्र की महत्वपूर्ण भूमिका है जैसे उन्नत किस्म की मूँगफली की फसल का विकास केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा ही किया गया. नाभिकीय विज्ञान को कृषि से जोड़कर उसका लाभ किसानों को मिल सकता है. इसी दौरान श्री कविन्द्र पाठक के संयोजन में प्रश्नमंच कार्यक्रम जूनागढ़ के कृषि विश्वविद्यालय एवं अन्य महाविद्यालयों के विद्यार्थीयों के लिए आयोजित किया गया. जिसका अंतिम चरण 15/2/13 को देखकर नियंत्रक महोदय काफी प्रभावित हुए यह कार्यक्रम सभी गणमान्य

परिषद के सचिव श्री जयप्रकाश त्रिपाठी प्रास्ताविक भाषण करते हुए.

वैज्ञानिकों, प्रतिभागियों को भी काफी अच्छा लगा. इस अवसर पर प्रथम तीन विजेताओं को नियंत्रक महोदय के हाथों सम्मानित किया गया. परिषद के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ.के.बी.सैनिस जी ने पूरी संगोष्ठी की वार्ताओं का सार

संगोष्ठी झलकियां

प्रस्तुत किया तथा इस नतीजे पर पहुंचे की आज कृषि में पैदावार बढ़ाने हेतू नाभिकीय प्रौद्योगिकी ही एक मात्र विकल्प है. संगोष्ठी के सत्रों की अध्यक्षता अन्य वरिष्ठ वैज्ञानिकों ने की. जिनमें वैज्ञानिक के संपादक डॉ.जगदीश चंद्र व्यास तथा डॉ.जे.पी.मित्र वैज्ञानिक जूनागढ़ भी सम्मिलित थे.

प्रस्तोता-संजय गोस्वामी
एनआरबी, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) RNI. No.:18862/70
दिल्ली, नयी दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ.प्र. के शिक्षा विभागों द्वारा स्कूलों व कॉलेजों के लिए स्वीकृत।

हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता 2013

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा.प.अ. केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता 2014 हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित हैं। लेख में किसी भी वैज्ञानिक विषय पर मौलिक एवं आधुनिक जानकारी होनी चाहिए। लेख का अप्रकाशित होना अनिवार्य है। मूल्यांकन में नवीनतम जानकारी के साथ-साथ अच्छे रेखाचित्रों/ फोटोग्राफों, तालिकाओं इत्यादि को समुचित महत्व दिया जाता है। अत: चित्रों को अलग से सफेद कागज/ ट्रेसिंग पेपर पर काली रोशनाई (इंडिया इंक) से बनायें। फोटोग्राफ ब्लैक एंड व्हाइट हो तो उचित रहेगा। इन्हें लेख के अंत में संलग्न करें। नीचे दिये गये पते पर कृपया दो टंकित अथवा स्पष्ट हस्तलिखित प्रतियां (लगभग 3000-4000 शब्दों में) भेजें।

अंतिम तिथि : 31 दिसंबर 2014

पुरस्कार

प्रथम	-	2000/रु.
द्वितीय	-	1500/रु.
तृतीय	-	1000/रु.
प्रोत्साहन	-	500/रु.

पांच प्रोत्साहन पुरस्कार एवं इतर हिंदी भाषी प्रतियोगियों को दो विशेष पुरस्कार 500/-रु. (प्रत्येक) के दिये जायेंगे। अत: अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें।

विशेष: पुरस्कृत रचनाएं 'वैज्ञानिक' की संपत्ति होगी। 'वैज्ञानिक' पत्रिका से संबंधित पदाधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकेंगे। यदि रचना एक ही लेखक द्वारा लिखी गयी हो तो उचित होगा। ईमेल से भेजी गयी प्रविष्टियां प्रशंसनीय होंगी।

प्रविष्टियां भेजने का पता

– श्री विपुल सेन -
प्रतियोगिता संयोजक एवं व्यवस्थापक, 'वैज्ञानिक'
वैज्ञानिक अधिकारी, ई.डी. एण्ड सी.डी., पी. पी. परिसर,
भा.प.अ.केंद्र (B.A.R.C.), मुंबई- 400085, फोनः 022 25591154
vsen@barc.gov.in, vipkavi@gmail.com

रचनाएं आमंत्रित

'वैज्ञानिक' हेतु लेख भेजते समय कृपया निम्न बातें ध्यान में रखें :

- लेख का विषय नया हो जो पाठकों में अधिक ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा बढ़ाये.
- लेख मौलिक, अप्रकाशित तथा पठनीय हो, साथ ही साथ भाषा सरल, बोधगम्य और रूचकर हो.
- नव लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए युवा एवं नव लेखकों की रचनाओं पर विशेष ध्यान दिया जायेगा तथा उन्हें वरीयता प्रदान की जायेगी.
- कृपया अनुवादित लेख न भेजें.
- लेख टंकित किया हुआ अथवा स्पष्ट हस्तलिपि में दोनों ओर पर्याप्त हासिया छोड़ कर कागज के एक ओर ही लिखें.
- विषय वस्तु समझने के लिए यदि चित्र आवश्यक हों तो उन्हें अलग से सफेद कागज पर काली रोशनाई से खींच कर लेख के अंत में संलग्न कर दें.
- अस्वीकृत रचनाएं डाक-टिकट लगा लिफाफा संलग्न होने पर ही वापस की जायेंगी.
- पत्रिका को अधिकाधिक रूचिकर एवं उपयोगी बनाने के लिए आप सभी सुधी पाठकों के सुझावों का स्वागत है.
- पत्रिका में वैज्ञानिक विषयों पर लिखी गई पुस्तकों की समीक्षा हेतु पुस्तक की कम से कम एक प्रति अवश्य भेजी जानी चाहिये.

''रचनाएं भेजने का पता''

श्री प्रमोद वी भागवत
कक्ष संख्या 2/130 एच. मार्ड लॅब,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई 400085
pramodvb@barc.gov.in